हरिप्रकाश

मानव

DK
5X
3?3

oundation C

Gurukul Kan

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव

हरि अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४

डा० धर्मानन्द केशरवानी
स्मृति संग्रह

मानव

यदि आप जीवन में सफल होना चाहते हैं, तो सफल व्यक्तियों के विचारों को पढ़िए, समझिए और अनुकरण करिए। इस पुस्तक के लेखक श्री हरि अग्रवाल ने अपने विवेक और कर्म के द्वारा जीवन में असाधारण सफलता प्राप्त की है। उन्होंने मनुष्य और समाज को निकट से देखा और परखा है। अतः उनके विचार अत्यन्त प्रेरक और व्यावहारिक हैं। यह पुस्तक प्रत्येक व्यक्ति और परिवार के लिए पठनीय एवं संग्रहणीय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

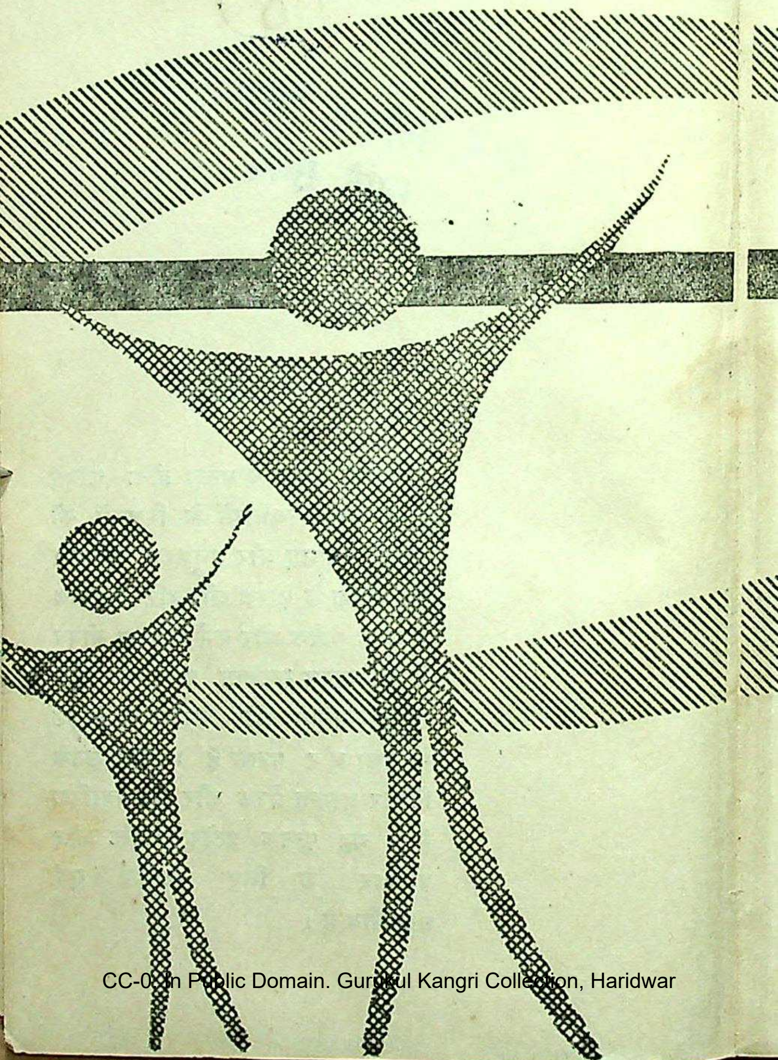

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एम०डी०, पी०एच०डी०
आयुर्वेदाचार्य

04754
स्मृति संग्रह

मानव

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

हरि अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महेशचन्द्र अग्रवाल
ने
छाया प्रेस, आर्यनगर, कानपुर
में मुद्रित कराया

मूल्य :
चार रुपया

हिमालय पाकेट बुक्स, प्राइवेट लिमिटेड
५, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–११०००६
: शाखा : पी० रोड, कानपुर २०८०१२

MANAV : HARI AGARWAL Rs. 4.00
HUMANITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव : एक पर्यवेक्षण

प्रस्तुत पुस्तक 'मानव' के लेखक श्री हरि अग्रवाल में सूक्ष्म पर्यवेक्षण, गम्भीर अध्ययन, स्पष्ट अनुचिन्तन की पर्याप्त प्रतिभा और सहज क्षमता प्रतीत होती है। उनमें ज्ञान और कर्म, सिद्धान्त तथा व्यवहार का अद्भुत समन्वय परिलक्षित होता है।

श्री अग्रवाल जी की नवीन कृति 'मानव' रचनात्मक साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धि है। पाश्चात्य देशों के दार्शनिकों, समाजशास्त्रियों, नृतत्त्व-शास्त्रियों, समाज-सुधारकों आदि ने मनुष्य को केन्द्रबिन्दु बना कर अनेक ग्रंथ लिखे हैं, जिनमें एडवर्ड कार्पेण्टर की 'सिविलजेशन: काज एण्ड क्योर,' पिटरिम सोरोकिन की 'सोशल फिलास्फीज आफ ऐन एज आफ क्राइसिस' 'रिकांस्ट्रक्शन आफ ह्यूमैनिटी', टायनवी की 'सिविलीजेशन आन ट्रायल', स्पेंगलर की 'डिकलाइन आफ दि वेस्ट', आदि पुस्तकें बहुचर्चित और लोकप्रिय हैं। भारतवर्ष में मनुष्य के निर्माण, विकास तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिष्कार के लिए सम्भवत: सबसे अधिक लिखा गया है, किन्तु ऐसा सम्पूर्ण साहित्य धार्मिक, साम्प्रदायिक परिदृष्टियों से ओतप्रोत है। आज के वैज्ञानिक युग में धार्मिकता का अवमूल्यन हुआ है। सम्भवत: आधुनिक युग का मनुष्य पुराकथाओं, प्राचीन नैतिक संहिताओं के माध्यम से कुछ सुनने-समझने को समुत्सुक नहीं है। वह तर्क-युक्त वैज्ञानिक विचारों को स्पष्ट भाषा में चाहता है। श्री हरि अग्रवाल की इस पुस्तक का यही लक्ष्य है। निश्चित ही अग्रवाल जी पाण्डित्य की दृष्टि से स्पेंगलर या टायनबी की कोटि के लेखक नहीं हैं, किन्तु अग्रवाल जी का लक्ष्य महान विचारकों से बिल्कुल भिन्न नहीं अनुभव होता है। दोनों ही मानवता के पुनर्निर्माण के लिए सचेष्ट हैं; दोनों ही मनुष्य को व्याधि-मुक्त करने के लिए चिन्तित हैं; दोनों ही मनुष्य को सुख-शान्ति के मार्ग की ओर अग्रसर करने के लिए कृतसंकल्प हैं।

संसार के महान् विचारकों के मत से आज का मनुष्य स्वनिर्मित आग्नेय सीमाओं में वन्दी होगया है, और विनाश के क्षणों की निस्सहाय होकर प्रतीक्षा कर रहा है। आज का युग महाविघटन के रोग से संत्रस्त है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्व-प्रतिष्ठित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रणालियों, सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं, आदर्शों, मूल्यों का विघटन होचुका है, तथा उनके स्थान पर नव्य संरचनाओं तथा वैचारिक संदर्शों को पूर्ण मान्यता नहीं मिल सकी है। मनुष्य दिशाहीन होकर भ्रमित होरहा है। विचित्र बात है कि भारत वर्ष में इस संकट का कारण भौतिक साधनों का अभाव बताया जाता है, और अमेरिका जैसे देशों में अतिसमृद्धता को ही अभिशाप बताया जाता है। भारत में टेलीविजन मोटर, फ्रिज आदि के कारखाने खुल रहे हैं और अमेरिका योरोप में जनता भारतीय योग-विद्या के लिए पागल होरही है। सब सुख-शान्ति की खोज में भटक रहे हैं, दिशाहीन-से।

किसी समस्या का समाधान सम्यक् ज्ञान और संतुलित चिन्तन द्वारा ही सम्भव होता है। यह कार्य वही व्यक्ति कर सकते हैं, जिन्होंने ज्ञान और कर्म के भारतीय सिद्धान्त का अपने जीवन में समन्वय किया है। ज्ञान बिना कर्म के अन्धा होता है और कर्म बिना ज्ञान के पंगु होता है। हरि अग्रवाल जी ने अपने जीवन में ज्ञान और कर्म का पर्याप्त संतुलन किया है। वह सांसारिक दृष्टि से पूर्ण सफल हैं, लेकिन वह भौतिकता की सीमाओं से पूर्ण परिचित हैं; उसके वास्तविक स्वरूप को भली प्रकार से आत्मसात भी कर चुके हैं। अतः उन्होंने ज्ञान के सूत्र को छोड़ा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि उन्होंने अपने जीवन में वास्तविक सुख-शान्ति के सम्बन्ध में प्रयोग-परीक्षण करके बहुमूल्य निष्कर्ष प्राप्त किए हैं। यह पुस्तक उनके इसी अनुभव का नवनीत है।

अग्रवाल जी ने इस पुस्तक के लेखन में वैज्ञानिक या शास्त्रीय पद्धति का अनुसरण किया है। उन्होंने मनुष्य की परिभाषा से पुस्तक प्रारम्भ की है। इसके बाद मनुष्य के उद्भव और उत्कर्ष की रेखाएं अंकित की हैं। तत्पश्चात् उसकी वर्तमान व्याधिकीय अवस्था का समुचित निदान प्रस्तुत किया है और अन्त में रोग-मुक्ति के उपाय निर्देशित किए हैं। इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि संक्षेप में बहुत अधिक लक्ष्यों को व्यक्त करने का पर्याप्त सफल प्रयास किया गया है। इसमें मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों, अतीतकालीन सामाजिक आचरणों, भारतीय धर्म, रूढ़ियों, परम्पराओं, जीवन-मूल्यों, समकालीन सामाजिक अभिवृत्तियों, आचार-विचारों का कुशलता से विश्लेषण किया गया है। पुस्तक के सम्बन्ध में दूसरी महत्वपूर्ण बात यह भी है कि लेखक किसी मत या वाद के प्रति दुराग्रही नहीं है। वह न तो आधुनिकता के चाकचिक्य से सम्मोहित है और न अतीत के प्रति हठी है। उसकी आलोचनाएं निष्पक्ष हैं, और मानदण्ड उदात्त हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्रवाल जी का अभिमत है कि मनुष्य के दुःख का कारण भौतिकता की अत्यधिक वृद्धि है। मनुष्य ने अपनी इच्छाओं को स्वच्छन्द कर दिया है और अब वे अनियन्त्रित होगई हैं। इन असीम वासनाओं ने ही उसे नैसर्गिक जीवन से खींच कर कृत्रिम जीवन में ढकेल दिया है। भोगलिप्सा, कृत्रिमता तथा विवेकशून्यता ही उसके सारे कष्टों के मूल में है। इन कारणों को विचार और कर्म के द्वारा दूर किया जा सकता है। सम्भवतः कोई विवेकवान् व्यक्ति उनके विचारों से असहमत नहीं होगा।

पुस्तक आद्योपान्त रोचक, प्रेरक तथा विचारोत्तेजक है। भाषा-शैली में सहज आकर्षण है। मेरा मत है कि इससे अनेक व्यक्तियों का मार्गदर्शन होगा।

अभी कुछ समय पूर्व हरिजी की एक पुस्तक 'मेरा गांव : मेरा देश' प्रकाशित हुई थी, जिसका विद्वानों, समीक्षकों तथा पत्र-पत्रिकाओं ने अच्छा स्वागत किया है। उनकी अन्य पुस्तक 'पैसा–रोग की जड़' भी शीघ्र प्रकाशित होरही है। इन प्रकाशनों से प्रतीत होता है कि वह बड़ी द्रुतगति से लेखन की ओर अग्रसर होरहे हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है, वह अपनी मौलिक कृतियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वारा वैचारिक साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान के अधिकारी होंगे।

अन्त में, मैं इस पुस्तक के लेखक श्री हरि अग्रवाल का हृदय से अभिनन्दन करता हूँ तथा उनकी प्रेरक तथा दिशादर्शक कृति का स्वागत करता हूँ।

शम्भूरत्न त्रिपाठी
(प्रख्यात समाजशास्त्र-वेत्ता तथा
साहित्य-प्रणेता समीक्षक)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह 'मानव' !

मानव सृष्टि का एक विशिष्ट प्राणी है। वह चतुष्पद प्राणियों से इसीलिए भिन्न है कि उसमें ज्ञान-तत्व और भावना की प्रधानता है, जिसकी अभिव्यक्ति दर्शन, साहित्य, संगीत और कला के प्रति उसकी अभि-रुचि में देखी जा सकती है। ससार का समस्त योग-क्षेम इसी मानव के लिये व्यक्ति, समाज और राष्ट्र द्वारा संपादित करने का प्रयास किया जाता है; किन्तु इतना होते हुए भी मानव ने अपनी लालसा, राग-द्वेष, स्वार्थ और उत्पीड़न आदि के घेरे खड़े करके अपने अविवेक का ही परिचय दिया है। श्री हरि अग्रवाल ने 'मानव' के द्वारा मानवीय सभ्यता एवं सस्कृति, सामा-जिक, रीति-नीति एवं परम्पराओं के विकास के विविध आयामों का विश्लेषण-अध्ययन प्रस्तुत कर मनुष्य के आचरण, कृतित्व एवं विविध गतिविधियों का सुन्दर मूल्यांकन प्रस्तुत किया है।

मानवीय सभ्यता के विकास में वेदों और धर्मग्रन्थों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगदान, देवता और दैवी शक्तियों की परिकल्पना आदि का वैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए अग्रवाल जी ने जो तथ्य प्रस्तुत किये हैं, वे निश्चय ही विचारणीय हैं। सम्भवत: वे अनेक पौराणिक कथाओं को, उनके चारों ओर वेष्टित वाग्जाल से अनावरित कर, अपने मूल रूप में देखने और समझने तथा एक वैज्ञानिक दृष्टि प्रस्तुत करने में अधिक विश्वास करते हैं, जो आज के अणुयुग में नितांत आवश्यक है। अग्रवाल जी की पैनी वैज्ञानिक दृष्टि आज की सामाजिक-आर्थिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था तक भी पहुँची है और उसके सत्-असत् दोनों पक्षों को उन्होंने खुल कर उजागर किया है।

'मानव'—जैसे सुन्दर नवचिंतन के लिए आधार प्रस्तुत करने वाले इस ग्रंथ के लिए अग्रवाल जी बधाई के पात्र हैं।

डा० अज्ञात, एम० ए०, पी-एच० डी०
(कवि, नाटककार, समीक्षक, उपन्यासकार
तथा रंगमञ्च–विशेषज्ञ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

04754

पुस्तकालय

१ | यह अद्भुत प्राणी मानव

भारतीय मान्यता के अनुसार आदि-पुरुष मनु से मानव की उत्पत्ति हुई है। मनु ने ही मानव को एक व्यवस्थित, सुसंगठित तथा समन्वित समाज प्रदान करने के लिए एक समाज-शास्त्र की रचना की, जो आज भी 'मनुस्मृति' के नाम से सर्वविख्यात है। यह स्मृति मानव के सामाजिक सम्बन्धों की जहाँ आचार-संहिता है, वहां व्यक्ति के आध्यात्मिक, मानसिक तथा शारीरिक विकास की भी मार्गदर्शिका है। वस्तुतः इसे मानव-सृष्टि का प्रथम संविधान कहा जा सकता है। मानव के विकसित बुद्धि तत्व तथा हृदय पक्ष का इसमें सम्पूर्ण सामञ्जस्य है। बुद्धि तर्क एवं विज्ञान की प्रतीक है तथा हृदय श्रद्धा, प्रेम, आस्था, करुणा, ममता, संवेदना का प्रतीक है। बुद्धि का प्रसार ज्ञान की ओर है और विश्लेषण उसका कर्म है। हृदय का मूल 'भाव' है और संश्लेषण उसका धर्म है। विश्लेषण एवं संश्लेषण के सामञ्जस्य से ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव-जीवन पूर्णता को प्राप्त करता है। अकेली बुद्धि मानव को भटकाती है; कोरा ज्ञान शुष्क तथा अहंवादी होता है; उससे रचनात्मक किरणें तभी फूटती हैं, जब उसका योग हृदय पक्ष अथवा 'भावपक्ष' से होता है। भावपक्ष में श्रद्धा, भक्ति, आस्था, प्रेम करुणा, वेदना जैसी समाजपरक अनुभूतियाँ समाहित होती हैं।

मस्तिष्क तथा हृदय का समन्वय

मनन करने की स्वाभाविक प्रक्रिया से भी मानव की संज्ञा सिद्ध होती है। मनुष्य मनन, चिन्तन इसीलिए करता है, क्योंकि उसमें मस्तिष्क पक्ष का बुद्धि तत्व विद्यमान है। इसके साथ ही वह प्रेमामृत का रसपान भी करता है, क्योंकि उसमें हृदय का भाव पक्ष भी वर्तमान है। बुद्धि और श्रद्धा के समन्वय का प्रयोग जब क्रिया का रूप धारण करता है—मनुष्य के पौरुष एवं पुरुषार्थ का आविर्भाव होता है। मानवता तथा संस्कृति के विकास का यहीं से श्रीगणेश होता है।

वस्तुतः मानव परमात्मा की सर्वोत्कृष्ट रचना है। सृष्टि में पाये जाने वाले सभी प्राणियों की अपेक्षा वह कहीं अधिक विकसित प्राणी है। मनुष्य के रूप में हमें रचनाकार विधाता की अधिकतम कला के परिदर्शन होते हैं। विश्व के अन्य प्राणियों में जो तत्व सुषुप्तावस्था में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविकसित स्थिति में वर्तमान रहते हैं, उनका सम्पूर्ण प्रकटीकरण, स्फुटीकरण तथा अभिव्यञ्जन मानवरूपी प्राणी में पाया जाता है। उसके विचार, मनन तथा चिन्तन की प्रक्रिया अधिक व्यवस्थित, तर्क-पूर्ण, सुग्रथित तथा निष्कर्ष-पूर्ण होती है। संकल्प-विकल्प की क्षमता उसे प्राप्त है। विचारों को वाणी देने की भी क्षमता उसे उपलब्ध है; और वाणी को अपने संकल्प के रूप में क्रियान्वित करने की भी उसमें शक्ति है। मन-वाणी तथा क्रिया का यह संयोग ही मानव के अस्तित्व को सार्थक करता है। अपने इस रूप में जगत के अन्य समस्त जीवों–जलचर, थलचर एवं नभचर–आदि से मानव उच्चतम स्थिति में प्रतिष्ठित है। अपनी इसी उत्कृष्टतम भव्यता के कारण मानव विश्व के सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न हिंसक, बर्बर, दुर्दान्त एवं भीषणतम नृशंस मांसभोजी जीवों पर भी शासन करता है तथा शतशः पशुओं को अपना अनुचर बना कर उन्हें अपने उपयोग एवं प्रयोग में लाता है।

अपनी इस असाधारणता के कारण ही मानव अन्य समस्त प्राणियों से भिन्न एवं अद्भुत कोटि का प्राणी सिद्ध होता है। आज संसार में जो वैज्ञानिक, भौतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक अभिवृद्धि दर्शित होरही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—वह सब इसी मानव नामधारी प्राणी का करिश्मा है।

उत्कर्षोन्मुखी शक्तियाँ

ईश्वर की जिन शक्तियों, कलाओं तथा विशेषताओं का विकास मानव में हुआ है, वह सहज रूप में उत्कर्षोन्मुखी हैं। स्वभाव से मनुष्य ऊर्ध्वगामी प्राणी है—निम्नगामी नहीं। वह जिस 'प्रकृति' को लेकर जन्मता है, उसको अधिक परिष्कृत कर उसे 'संस्कृति' के रूप में ढाल देने की क्षमता उसे प्राप्त है। पर यह तभी हो सकता है, जब वह अपनी पशु-प्रवृत्ति से ऊपर उठे, जिसकी क्षमता उसे प्राप्त है। पर बहुत से मनुष्य इन्द्रियों के वशीभूत रहते हैं, फलतः वह अपनी पशु-प्रवृत्ति को नियन्त्रित नहीं कर पाते। जब मनुष्य इस स्थिति में पशुयोनि-मूलक जड़ता से भी नीचे गिर जाता है, तब उसकी सहज 'प्रकृति' अपना असली रूप खो देती है और वह 'विकृति' के रूप में परिलक्षित होती है। मनुष्य का यह निम्नगामी रूप है। ऐसी अवस्था में वह अपने स्वाभाविक विकास धर्म 'ऊर्ध्वगामित्व' को खो देता है।

इस प्रकार जहां मानव ने सभ्यता, संस्कृति एवं आध्यात्मिकता के विकास को चरम शिखर पर समासीन करने का प्रयत्न किया है, जीवन-मार्ग में समुन्नति के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूल खिलाये हैं और अपना यश: सौरभ विकीर्ण किया है, वहां उसने अपने को अध:पतन के विवर्त में भी गिराया है, जीवन-पक्ष को कण्टकित बनाया है एवं दुष्कर्मों की दुर्गन्ध से वातावरण को दूषित भी किया है।

तटस्थ विवेचन

प्रस्तुत पुस्तक का मूल विषय संसार का यही विचित्रतम प्राणी 'मानव' है। इसमें उसके दोनों पक्षों का विवरण दिया गया है। मैंने एक तटस्थ व्यक्ति की हैसियत से 'मानव' की इस क्रिया प्रक्रिया का अध्ययन किया है।

गोस्वामी महात्मा तुलसीदास जी का कथन है:—

जड़ चेतन गुण—दोषमय विश्व कीन्ह करतार ;
सन्त–हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार।

विधाता की यह रचना–फिर चाहे जड़ हो या चेतन–गुण–दोषों से मण्डित है। मनुष्य भी गुण–दोषों से मुक्त नहीं है; यद्यपि उसका प्रयत्न दोषों से बचते रहने की दिशा में होते रहना चाहिए; फिर भी वह बुराइयों का शिकार तो होता ही है। मानव की इन्द्रियां बड़ी प्रचण्ड हैं; वे निरन्तर उसको मथती रहती हैं और उससे अकार्य कार्य कराती रहती हैं।

इस पुस्तक के लिखने का मूल लक्ष्य यह है कि मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुराइयों से लड़ता हुआ उन्हें विजित करे और अच्छाइयों को ग्रहण कर संसार को सुखी बनाये। इसके लिए उसके इन दोनों पक्षों का विवेचन आवश्यक है। यह काम अत्यन्त जटिल है; फिर भी अन्तरात्मा की प्रेरणा के निर्देश पर मैंने इस पुस्तक के लिखने की चेष्टा की है। इसमें जो वाञ्छनीय तथा ग्रहण-योग्य प्रतीत हो, पाठकगण उसे ग्रहण करेंगे तथा अवाञ्छनीय अहितकर बातों का परित्याग कर देंगे-ऐसी आशा है।

मानव की श्रेष्ठता संदिग्ध

परमात्मा की सृष्टि में समस्त प्राणियों से मानव सृष्टि को श्रेष्ठ माना जाता है और मानव ही सब प्राणियों से अधिक बुद्धिमान, चतुर और समझदार भी माना जाता है। परन्तु मैंने हर प्रकार से देखकर, सुन कर, समझ कर और परख कर जो निष्कर्ष निकाला है, उसने मुझे मानव की सर्वोत्कृष्टता पर विचार करने के लिए विवश किया है। मेरे मन में यह प्रश्न लगातार उठता रहता है कि भले ही मानव ने अपने आपको संसार का श्रेष्ठ और बुद्धिमान प्राणी घोषित कर दिया हो, परन्तु वास्तव में क्या मानव की यह घोषणा सही और उचित है ? मेरी समझ से मानव ने ऐसा कोई काम संसार में आकर नहीं किया, जो स्वयं मानव अथवा संसार के अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणियों के हक में उचित और भला साबित होता हो। मानव ने उन्नति के नाम पर असंख्य आडम्बरों की रचना अवश्य कर डाली परन्तु इन आडम्बरों से मानव का भला होने के बजाय बुरा ही अधिक हुआ है, और मानव आत्मशान्ति व शारीरिक शक्तियों को खोकर परेशानियों में ही जकड़ता गया है। मानव ने प्रयास अवश्य सुख-शान्ति बढ़ाने की दिशा में किया था, परन्तु नतीजा बिल्कुल विपरीत निकला, जो मानव के श्रेष्ठ और बुद्धिमान होने में शक पैदा करता है।

आदिम युग की ओर

आज के मानव का आचरण और व्यवहार देख कर ऐसा महसूस होता है कि मानव फिर उसी आदि युग की ओर अग्रसर होरहा है, जिस युग में मानव बिल्कुल बर्बर, आरण्यक, अविकसित, हिंस्र पशु जैसा कठोर एवं नग्न जीवन व्यतीत करता था। हमारे श्रद्धेय एवं वन्दनीय ऋषि-मुनियों, तत्वचिन्तकों, समाज-शास्त्रियों, दार्शनिकों तथा अग्रगन्ता पूर्व पुरुषों ने अपने तपःपूर्ण साधन, मनन, चिन्तन तथा निदिध्यासन से मानवता के समग्र विकास, उन्नयन, संगठन, संग्रथन तथा आर्थिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक संस्कृति के प्रसार-प्रचार के लिए जिन मूल्यों, प्रतिमानों, आदर्शों, मापदण्डों, मर्यादाओं व आचार संहिता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की निर्मित की थी, उनको आज की मानव-पीढ़ी निर्भयता के साथ खण्डित एवं तोड़ती जारही है ।

आदियुग के मानव की बुद्धि सर्वथा अपरिपक्व थी; सहज प्रवृत्तियाँ ही उसके जीवन का निर्देशन करती थीं। अन्य पशुओं की भाँति ही वह प्राकृतिक आपदाओं तथा विपतियाँ से जूझता, जीता और मरता-खपता था। प्रकृति के साथ तथा संसार के अन्य जीवों से ज्यों ज्यों उसका सम्पर्क संघर्ष तथा द्वन्द्व हुआ, त्यों त्यों उसकी सुषुप्त, मुमूर्ष तथा अर्धचेतन बुद्धि का विकास क्रमशः होता चला गया और अन्ततः उसने सभ्यता तथा संस्कृति के उच्च शिखर पर पहुंच कर अपने समाज के संरक्षण, भरण–पोषण तथा उन्नयन के साथ साथ समस्त विश्व की गतिविधियों एवं इतर प्राणियों पर नियंत्रण स्थापित करने की गरिमा प्राप्त कर ली। पिछले दस लाख वर्षों के सतत एवं अनिरुद्ध संघर्ष के बाद आज मानव इस उच्च महत्व को अर्जित कर सका है, जिसे वह अब स्वतः तोड़ रहा है।

दस लाख वर्ष पहले का प्रस्तर युग

दस लाख वर्ष पहले धरती पर जिस आदमी जैसे प्राणी का अविर्भाव हुआ था, वैज्ञानिकों तथा इतिहास के विद्वानों–पुराविदों–ने उसका अर्द्ध मानव के रूप में उल्लेख किया है, किन्तु प्राक्कालीन इतिहास ५ लाख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साल पहले शुरू हो जाता है । भित्तिचित्रों, उत्खनन तथा संसार के विभिन्न क्षेत्रों में पाये गये पत्थर के औजारों, कुल्हाड़ियों, अस्थिपञ्जरों जैसे पुरावशेषों के अध्ययन से पता चलता है इस पाँच लाख वर्ष पहले के मनुष्य ने पत्थर के हथियारों का प्रयोग आरम्भ कर दिया था। वह आग की भी खोजकर चुका था और शिकार में प्राप्त अपने आहार मांस आदि को आग में पका कर या सेंक कर खाना उसने सीख लिया था। कुत्ता सम्भवतः वह सबसे पहला पशु है, जिसे आदिम मानव ने पालतू बनाया था। शिकार-कार्य में उसे कुत्ते से सबसे बड़ी सहायता प्राप्त होती थी।

कृषि-कर्म और पशुपालन

इस प्रकार परिस्थितियों से लड़ते लड़ते उसकी बुद्धि में पैनापन आने लगा था और खोजबीन तथा नवीन को जानने समझने की जिज्ञासा उसमें उत्पन्न होगई थी। उसकी इसी जिज्ञासा-प्रवृत्ति ने अन्ततः आज से लगभग दस हजार वर्ष पहले कृषि-कार्य का उद्‌बोधन दिया और वह अपने बढ़े हुए ज्ञान के सहारे कृषि कार्य में प्रवृत्त हुआ, जिसने अन्त में उसे पशु-पालन की प्रेरणा प्रदान की और गाय-बैल की सेवा उसके कृषि-कर्म के साथ जुड़ गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाय, भेड़, बकरी, भैंस का सम्बन्ध जब मानव से जुड़ा, तब उसके आहार में परिवर्तन उपस्थित हुआ। उसके विचार, मनन, चिन्तन एवं ज्ञान की प्रक्रिया हृदय की करुणा, प्रेम एवं वात्सल्य के संयोग से अधिक प्रखर हुई और वह सर्व जीव-कल्याण की भावना से एवं अन्य प्राणियों की मरणान्तक वेदना एवं अपने कष्टों के अनुभव से सभी जीवों के प्रति दयालु होने लगा। परिणाम-स्वरूप वह शिकार में होने वाली जीव-हत्या से मरण-शील प्राणी के कष्टों को देखकर, विरत होने लगा और वह आमिष-भोजन से निरामिष भोजन की ओर क्रमशः विचार-पूर्वक प्रेरित होने लगा। जब खेती से उसे अनाज उपलब्ध होने लगा तथा गाय आदि से दूध तथा दूध की विविध सामग्रियाँ प्राप्त होने लगीं, तब स्वभावतः उसे मांस-भोजन से अरुचि उत्पन्न होगई और निरामिष भोजन उसे अधिक पसन्द आने लगा। मानव के भीतर निहित प्रेम, करुणा, अहिंसा तथा आत्मविश्लेषण–संश्लेषण 'प्रक्रिया' की यह विजय थी। यही भारतीय आध्यात्मिकता, नैतिकता तथा सत्यानुभूति का आधार था, जिसके क्रमिक विकास के कारण भारत अन्ततः विश्व-गुरु की प्रतिष्ठा प्राप्त कर सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अणु-युग और अन्तरिक्ष-यात्रा

सभ्यता के इस नवीन युग में प्रविष्ट होते ही वैज्ञानिक अनुसन्धानों का भी श्रीगणेश हो जाता है। पिछले दो सौ वर्षों में विज्ञान ने जिस कदर तीव्र गति से तरक्की की है, उसके कारण मानव की प्रगति अत्यधिक प्रभावित हुई है। पिछले ५० वर्षों में जो वैज्ञानिक अनुसन्धान हुए हैं, उन्होंने धरती पर अब अणुयुग को प्रतिष्ठित कर दिया है। इस अणुयुग में एक ओर प्रलयङ्कर अणुबमों का आविष्कार एवं निर्माण हुआ है, तथा दूसरी ओर अन्तरिक्ष-यात्रा का प्रारम्भ हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप मानव अनेक बार चन्द्र-तल पर मुक्त रूप से अवतरण, विचरण तथा सञ्चरण करने में समर्थ हुआ है।

विज्ञान की अपरिमित एवं असीमित उपलब्धियों ने मानव को अत्यन्त शक्तिशाली बना दिया है। अपनी इन्हीं वैज्ञानिक, तकनीकी तथा यान्त्रिक क्षमता के कारण मानव 'अणुयुग' में प्रविष्ट होचुका है, उस अणुयुग में जिसमें न केवल उसने महाप्रलयङ्कर अणुबमों, उदजन बमों, प्रक्षेपास्त्रों, दूरमारक राकेटों तथा भांति भाँति के ध्वनि से अधिक तीव्रगामी अतिस्वन वायुयानों, बमवर्षकों, टैङ्कों, नौसैनिक प्रविधाओं का आविष्कार, निर्माण तथा प्रसार किया है, प्रत्युत उसने अन्तरिक्ष-यात्राएँ भी प्रारम्भ कर दी हैं। सुदूर अन्तरिक्ष में पृथ्वी के निकट स्थित ग्रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्र-तल पर मानव अनेक बार पदार्पण करके, उसमें स्थित चट्टानों, पत्थरों तथा मिट्टी के टुकड़ों के नमूने लेकर पृथ्वीतल पर लौट कर वापस आ चुका है। इसके अतिरिक्त अन्तरिक्ष के अन्य ग्रहों शुक्र, मंगल आदि पर भी उसने अवतरण की भूमिका तैयार कर ली है तथा मानव-रहित अन्तरिक्ष यान इन ग्रहों के अनुसंधान के लिए प्रक्षेपित किये हैं। इतना ही नहीं, मानव ने अन्तरिक्ष स्टेशन भी स्थापित किये हैं, जिनका उपयोग ब्रह्माण्ड में स्थित अन्य नक्षत्रों तथा ग्रहों पर अग्रगामी यात्रा के लिए किया जायेगा और जहां वायुमण्डल में आलोड़ित होने वाली तरङ्गों, लहरियों, ब्रह्माण्ड-रश्मियों के विकरण वायुहीन शून्यता, विद्युत धाराओं, विस्फोटों, उल्कापातों आदि का वैज्ञानिक अध्ययन, अनुसन्धान तथा विवेचन किये जाने की व्यवस्था की गई है। ऋतु-परिवर्तन, तूफानों, वात्याचक्रों, ग्रह-उपग्रह की चालों समुद्री तूफानों, ग्रहण' आदि का अधिक वैज्ञानिक परिज्ञान भी इनके द्वारा उपलब्ध किया जा सकेगा, ताकि प्रकृति-सम्बन्धी परिवर्तनों आदि की सही सही भविष्य-वाणियाँ की जा सकें। इनके साथ ही मनुष्य आज इस बात की भी खोज में लगा है कि सुदूर स्थित नक्षत्रों तथा ग्रहों में से किसीमें भी प्राणियों का अस्तित्व है या नहीं और क्या वहाँ ऐसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातावरण है, जिसमें मानव उतर कर अपना आवास बना सके। इस वैज्ञानिक अनुसन्धान से पुराणों तथा प्राचीनतम ग्रन्थों में वर्णित देव-योनियों के अस्तित्व एवं देवलोक, ब्रह्मलोक आदि का भी पता लगाया जा सकेगा और उनके बारे में प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध हो सकेगी।

रहस्यात्मक उड़न-तश्तरियाँ

अक्सर इस तरह की खबरें आती रहती हैं कि सुदूर नक्षत्रों से कोई अधिक विकसित, सुसभ्य.सुसस्कृत एवं दिव्यज्ञान-विज्ञान-सम्पन्न जाति पृथ्वी-तल पर अपने उड़न-तश्तरियों के रूप मे अनुसन्धान-यान भेजती रहती है, जिसको अनेक देशों के लोगों ने आकाश में तीव्रगति से उड़ते हुए तथा विलुप्त होते हुए देखा है। उसके चित्र भी लिए गये हैं और उन पर अनुसन्धान किया जारहा है। इस तरह की खबरों के सत्यासत्य होने की पुष्टि होना अभी शेष है। यदि उनमें कुछ भी प्रामाणिकता हुई, तो यह निर्विवाद सिद्ध हो जाता है कि नीलाकाश में फैली हुई आकाशगंगाओं में से किसी न किसी नक्षत्र-लोक में अधिक सक्षम दिव्यभावापन्न जीवित प्राणियों का निवास है और जो अब इस भूमण्डल की छानबीन में लगे हैं। यहाँ पर यह कहना अप्रासङ्गिक न होगा कि हमारे यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के वैज्ञानिकों ने भी अब इसी लक्ष्य को दृष्टि में रख कर अन्तरिक्ष यात्राएँ प्रारम्भ कर दी हैं। हो सकता है कि निकट या सुदूर भविष्य में हम अपने इस अभियान में सफल होजायें और अन्य नक्षत्रवासियों से हमारा भी सम्पर्क स्थापित होजाये।

संहार कला-दक्ष नृशंस मानव

इस प्रकार जो वैज्ञानिक अभ्युत्थान हुआ है और होरहा है, उसकी एक प्रतिक्रिया भी दृष्टिगोचर होने लगी है। आज जब मानव सभ्यता तथा संस्कृति की इस पराकष्ठा पर पहुँच गया है, तब ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपनी इस उन्नति से ऊब गया है और वह पुनः दस लाख वर्ष पुराने आदिम युग में लौट जाने के लिए लालायित हो उठा है। यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि क्या आज का मनुष्य शताब्दियों से अर्जित अप्रतिम ज्ञान-वैभव, आध्यात्मिक समृद्धि तथा सामाजिक नियमन तथा जीवनादर्शों को भुला देना चाहता है ? आज का इन्सान जिस कदर नीचे उतर कर दुराचार, अभिचार, कदाचार, अनाचार, अन्याय तथा अत्याचार बेहिचक उच्छृङ्खल, निरंकुश तथा स्वच्छन्द मनोवृत्ति के साथ करने लगा है, उससे इस प्रकार सोचने के लिए विवश होना पड़ रहा है।

अगर हम गौर से देखें तो हमें विदित होगा कि एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार से आज का मानव आदि युग के मनुष्य से अधिक निर्मम, कठोर, पाखण्डी, दम्भी तथा प्रपञ्ची है; क्योंकि उसे बुद्धि की जो प्रखरता प्राप्त हो गई है, विज्ञान की जो सीमा-हीन शक्ति उपलब्ध होगई है, साधनों का जो प्रचुर भण्डार मिल गया है, उसका उपयोग वह अपने ही बन्धुओं, सहवासियों, सहजीवियों तथा सहगामियों के शोषण, प्रवञ्चन एवं दोहन-शोषण में करने लगा है। मानव-कल्याण तथा परोपकार के लिए जिन साधनों, शक्तियों तथा प्रविधियों का उपयोग होना चाहिए, आज उन्हींका उपयोग अत्यन्त कला-कौशल एवं बुद्धि-चातुर्य के साथ जन-संहार के लिए किया जा रहा है। आदिम युग का मानव तो जो कुछ करता था, उसके मूल में उसकी सहज वृत्ति मात्र थी; वह परिस्थितियों से विवश था; उसकी बुद्धि अविकसित थी, उसे सदसद् का कोई विवेक नहीं था। वह केवल अपनी क्षुधा व काम-पिपासा मिटाने एवं जीवन-रक्षा के लिए संघर्ष-रत होता था। आज की भाषा में वह असभ्य, बर्बर तथा हिंस्र पशु-जैसा था। पर वह जैसा भी था, परिस्थिति-वश बना था और वह उसी रूप में आचरण करने के लिए उस समय विवश था। पर आज के मनुष्य की तो वह स्थिति नहीं है। मनुष्यों के शारीरिक कष्टों के निवारण तथा व्याधियों के शमन के लिए जिन उपचारों, औषधियों, प्रविधियों का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आविष्कार किया गया है, उन्हींका उपयोग विचक्षण दक्षता के साथ आज का जाग्रत प्रबुद्ध तथा चतुर मनुष्य अपने सहवासियों के संहार के लिए करने लगा है। कष्ट निवारणार्थ आपरेशन के लिए डाक्टर के जिस चाकू का मानव ने आविष्कार किया है, उसी चाकू से इन्सान अपने ही समान दूसरे इन्सान का गला काटने लगा है। यह स्थिति कितनी विषम तथा भयावह है—यही हमारे लिए गहन चिन्ता का विषय है।

आदि मानव तो अपनी आदि अवस्था में संघर्ष करके यथाशक्ति सुख-शान्ति अर्जित कर लेता था और कठिनाई से जीवन व्यतीत करता हुआ भी सन्तोष प्राप्त करता रहता था। पर आज का विकसित बुद्धि-युक्त मानव वास्तविक सुख-शान्ति को—जीवन के सरल आनन्द को—खोकर ही दुष्कर्मों तथा पर-पीड़न, हिंसा-प्रतिहिंसा, छल-छद्मों, आडम्बरों आदि दुष्ट काण्डों में प्रवृत्त होता है। इससे सारा मानव-समाज उत्तप्त एवं उत्पीड़ित हो उठा है।

ऐसी स्थिति में सहज ही मेरा यह दृष्टिकोण बन गया है कि मानव से संसार के सभी प्राणी भले और अच्छे हैं, क्योंकि मानव ही एक ऐसा प्राणी है, जिसे अधिक से अधिक सुख और विलासिता की अभिलाषा बनी रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ | मानव धर्म एवं परम्पराएँ

मानव पृथ्वी पर कब आया ? कब उसका जन्म हुआ ? कैसे किस पदार्थ से मानव की रचना हुई?—इन प्रश्नों पर अभी तक वैज्ञानिकों और विद्वानों में मतभेद चल रहे हैं; अभी तक कोई एक राय तय नहीं हो पाई। आदि मानव शुरू के समय में वनमानुषों जैसी शक्ल सूरत का था और बन्दरों की तरह पेड़ों पर रहता था। पेड़ ही आदि मानव का मुख्य निवास-स्थान होता था। इस तथ्य से सभी वैज्ञानिक व विद्वान सहमत हैं। पेड़ों पर रह कर पेड़ों के फल-फूल या छोटे-मोटे जानवरों का शिकार करके कच्चा गोश्त ही उस आदि मानव की उदर-पूर्ति का साधन था।

भयानक तूफान

प्रागैतिहासिक मान्यता के अनुसार पेड़ों पर रहते-रहते हजारों सालों बाद एक बार ऐसा भयंकर तूफान आया, जिसकी वजह से अधिकांश पेड़ टूट कर पृथ्वी पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिर पड़े। इससे मानव के निवास का सहारा समाप्त होगया और मानव को बाध्य होकर पृथ्वी पर आना पड़ा। लेकिन पृथ्वी पर मानव अन्य हिंसक प्राणियों की वजह से सुरक्षित नहीं रह सकता था। अतः उसने इस समस्या का हल ढूँढने की चेष्टा की और यहीं से मानव की बुद्धि का विकास होना शुरू होगया। सोचते सोचते मानव ने आखिर गिरे हुए पेड़ों की टहनियों और पत्तों की सहायता से बेढंगी-सी झोपड़ी की सूरत बना डाली, जिसमें छिप कर बैठने से उसकी कुछ सुरक्षा अवश्य हुई। किन्तु हिंसक जानवर तो चारों ओर घूमते ही रहते थे; और वे अक्सर झोपड़ी में घुस कर उसमें रहने वालों पर प्रहार भी करते रहते थे। इस खतरे से बचने के लिए मानव ने अन्य उपाय खोजने शुरू किये। उसने पत्थरों को देखा; उन्हें देखकर उसने उनके उपयोग की कल्पना की और वन्य हिंसक पशुओं को दूर भगाने के लिए पत्थर के टुकड़ों का प्रयोग करना शुरू कर दिया। पत्थरों के इस प्रयोग से ही हथियारों का जन्म हुआ। हम कह सकते हैं कि शस्त्रों की मूल कल्पना यहीं से प्रारम्भ हुई। होता यह था कि रात को झोपड़ी के दरवाजे में आड़ी तिरछी पेड़ की टहनियाँ फँसा कर झोपड़ी का दरवाजा बन्द कर दिया जाता था और दिन में पत्थर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फेंक फेंक कर हिंसक प्राणियों से बचाव किया जाता था। खानपान, इस अवस्था में भी, पहले की तरह ही कच्चा गोश्त, कन्द, मूल, फल आदि के रूप में चलता रहा। इस प्रकार मानव ने पृथ्वी पर निवास-स्थान बनाकर रहना शुरू किया।

विकास की दिशायें

पृथ्वी पर आने के बाद मानव की बुद्धि विकसित होनी शुरू होगई। इसीसे सुरक्षा के लिए उसने हथियार के रूप में पत्थर के टुकड़े और रहने के लिए मिट्टी व टहनियों के प्रयोग से झोपड़ी का निर्माण कर डाला। पृथ्वी पर इधर उधर मानव ने घूमना भी शुरू किया। हथियारों के रूप में पत्थर हाथ में होते ही थे; इसलिए निडर होकर उसने धरती-सम्बन्धी अन्य जानकारी प्राप्त करने के लिए दूर दूर के चक्कर लगाने शुरू कर दिये। पत्थरों को नुकीले बना कर उनमें धार निकाली गई और आधुनिक कुल्हाड़ो, चाकू, छूरी आदि के रूप में उनका प्रयोग किया जाने लगा। इन्हें प्रस्तर-युग के औजारों एवं शस्त्रों की संज्ञा दी गई है। संसार के अनेक स्थानों में पाषाण-युग के ये हथियार प्राप्त हुए हैं। जावा, चीन तथा अफ्रीका में लगभग ५ लाख वर्ष पूर्व के आदि मानव की अस्थियाँ प्राप्त हुई हैं। भारतस्थित शिवालिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़ियों में लगभग दो करोड़ वर्ष पूर्व पाई जाने वाली 'बानर' जाति जैसे प्राणियों की हड्डियाँ प्राप्त हुई हैं।

पत्थरों के विभिन्न प्रकार के औजारों के निर्माण के साथ प्राक्कालीन मानव की बुद्धि का क्रमिक विकास प्रारम्भ होगया। उसकी जिज्ञासा-वृत्ति जाग उठी और वह फैली हुई धरती के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए सावधानी के साथ अपने पत्थरों के हथियारों की सहायता से वन-प्रान्तर में विचरण करने लगा। उसका यह परिभ्रमण वर्षों तक चलता रहा होगा, जिसमें वह भाँति भाँति के छोटे-बड़े वन्य पशुओं, जलस्रोतों, भूमिखण्डों, नदियों, पहाड़ों, गुफाओं, जंगली फल-फूलों, कन्दमूलों आदि के सम्पर्क में आया होगा और इनकी जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा में नये से नया ज्ञान प्राप्त किया होगा। इस प्रकार प्रत्येक प्रयोग द्वारा उसके अनुभवों का भण्डार बढ़ता गया होगा, जिससे वह उत्तरोत्तर लाभान्वित एवं उत्साहित होता रहा होगा।

खेती की प्रथम जानकारी

अपनी इस अनुसन्धान एवं खोज-यात्रा के दर्मियान धरती के किसी कोने में उसे अनाज का उगा हुआ कोई पौधा अवश्य मिला होगा। इन पौधों में लगी हुई बालियों में मिले अनाज के रसीले दानों को जब पहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार उसने चखा होगा, तब अवश्य ही उसे बड़ा मजा आया होगा। निश्चय ही अनाज के इन दानों का स्वाद उसे गोश्त आदि के जायके से अलग कुछ अपूर्व-सा लगा होगा; तभी वह उनकी ओर अधिक से अधिक दिलचस्पी से आकृष्ट हुआ होगा। इसके साथ ही उसने जब अनाज के इन सूखे दानों को वर्षा-काल में पौधे के रूप में उगते तथा बढ़ते हुए देखा होगा—तब वह आनन्द से नाच उठा हो तो क्या आश्चर्य! उसके इसी प्रत्यक्ष ज्ञान तथा अनुभव ने खेती करने की अस्पष्ट प्रवृति उसमें उत्पन्न की होगी।

फेंके हुए दानों को इस रूप में उगते देख कर मानव ने इधर-उधर और अधिक मात्रा में अनाज के दाने फेंकने शुरू किए होगे। यहीं से मानव को खेतीबाड़ी सम्बन्धी पहली जानकारी प्राप्त हुई, जो धीरे-धीरे विकसित होती गई। एक प्रकार के अनाज की जानकारी मिलने से, खाने लायक अन्य अनाजों की जानकारी का प्रयास किया गया। जैसे जैसे जानकारी मिलती गई, वैसे वैसे खेतीबाड़ी का विस्तार बढ़ता गया और खेती करने के तरीकों में क्रमशः सुधार होता गया। इस प्रकार मानव-जीवन की सबसे बड़ी समस्या उदर-पूर्ति का हल उसके हाथ में आ गया। इसे मानव की एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत बड़ी विजय कही जा सकती है। यह सफलता मानव को पृथ्वी पर आने के हजारों वर्षों के बाद पूरी तरह मिल पाई होगी। सुदीर्घ काल में मानव ने पत्थर को घिस कर, काट कर नुकीले, गोल, छुरी की तरह धारदार आदि कई प्रकार के औजार एवं हथियार बनाने शुरू किये, जिनसे वह शिकार, खेतोबाड़ी, आत्मरक्षा, लकड़ी काटना, गड्ढे खोदना, घर बनाना आदि अनेकों काम करने लगा।

दानवाकार आदि मानव

आजकल कई चिड़ियाघरों में वनमानुष देखने को मिलता है। शुरू शुरू में मानव का भी हूबहू यही रूप था। पूरे शरीर पर लम्बे लम्बे बाल, काला स्याह रंग, शरीर से निकलती हुई बहुत तीव्र और घिनौनी बदबू, नीचे से ऊपर तक बिल्कुल नंगा, आज के मानव से लम्बाई चौड़ाई में ड्योढा दुगुना कद, तेज हथियार की तरह पैने और बड़े बड़े नाखून, हाथ, पैर, मुँह, सिर आदि अंगों की बेढंगी-सी बनावट। इस प्रकार का बेढंगा-रूप हमारे पूर्वज मानव का था। इस दान-वीय आकार को आज का मानव यदि कहीं देख ले, तो बहुत सम्भव है कि वह बेहोश होजाये अथवा उसके प्राण ही निकल जायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे पूर्वज इस आदिमानव का स्वभाव एवं आदतें भी, अविकसित बुद्धि होने के कारण, बहुत भद्दी और बेढंगी थीं। किसी तालाब या नदी में पानी मिलने पर, लम्बा लेट कर पानी में मुँह डालकर वह पानी पीता था। टट्टी, पेशाब के लिए कोई जगह या समय का बन्धन नहीं था। जब जहाँ इच्छा हुई, पाखाना-पेशाब कर डाला। शर्म-लिहाज उस समय पैदा ही नहीं हुई थी। छोटे-छोटे जानवरों का शिकार करके, जानवर को खड़े ही खड़े हाथों के तेज नाखूनों से चीर कर कच्चा गोश्त खा लेना और रक्त पी लेना भी आदि मानव के आहार और प्यास बुझाने का एक साधन था। सोने के लिए कंकड़ीली, पथरीली, ऊबड़-खाबड़ जमीन ही पर्याप्त थी। कोई भी पुरुष किसी भी स्त्री के साथ सहवास कर लेता था। उस समय ऐसा भी होता था कि सबके देखते रहने पर भी उन्मुक्त रूप से सहवास सम्पन्न होजाता था, जैसा कि आजकल हम पशुओं को सहवास करते हुए देखते हैं। उस समय आदि मानव-समाज में लज्जा या संकोच जैसा कोई भाव उत्पन्न नहीं हुआ था। भोजन-पान के समान ही सहवास-क्रिया हो जाती थी। उसमें मात्र सहजता थी, अन्य कोई भाव नहीं था; पर बाद में धीरे-धीरे परिस्थिति-वश उत्पन्न समस्याओं के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण इस प्रक्रिया में परिवर्तन उपस्थित हुआ।

स्वच्छन्द तथा निर्द्वन्द्व जीवन

उस समय आदि मानव पूर्ण रूप से अपरिग्रही था। उसका न अपना कोई घर था, न कोई सामान। वह स्वच्छन्द, उन्मुक्त तथा चिन्ताहीन था। संचय या संग्रह करना उसे आता ही नहीं था। किसी भी प्रकार के सांसारिक पदार्थ की जानकारी उसे नहीं थी; उसकी बुद्धि सर्वथा अविकसित थी। नैसर्गिक वृत्तियों के वशीभूत वह सारे कार्य करता था।

इस प्रकार उत्पन्न आदिम युग का मानव नामधारी प्राणी अन्य पशुओं के समान ही सर्वथा आरण्यक था। वह जंगलों में रहता था और वहीं रहकर अपने आहार आदि की आवश्यकताएँ अपनी वृत्तियों की प्रेरणा से पूरी करता था। इस अवस्था में उसने अवश्य ही कई हजार वर्ष बिताए होंगे।

बुद्धि तत्व की विशेषता

आदि मानव में अन्य वन्य पशुओं की अपेक्षा उस आदिम युग में भी बुद्धितत्व विशेष था। सुख-दुःख की अनुभूति भी उसमें विशेष थी। हृदय में उत्पन्न होने वाली भाव लहरियां उसे प्रभावित अवश्य करती थीं। वह खुश भी होता था, और नाखुश भी। वह कठोर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, साथ ही दयालु भी। एक दूसरे के दुःख की अनुभूति उसे होती थी। उसे क्रोध भी आता था, तथा रोष भी होता था; सन्तोष एवं शान्ति का भी भाव उसके अन्तर में उत्पन्न होता था। बहरहाल वह सोचता भी था और सोच कर तदनुकूल कार्य करने की प्रेरणा उसने वर्षों के अभ्यास तथा परिस्थितियों के संघर्ष के बाद अवश्य प्राप्त कर ली थी।

प्रकृति पर विजय

कालान्तर में आदि मानव में ज्यों ज्यों बुद्धितत्व तथा हृदय तत्व का विकास होता गया, त्यों त्यों उसकी प्रारम्भिक प्रक्रियायों, आदतों, रहन-सहन के तरीकों, रुचियों, भोजन-पान की विधियों तथा स्वच्छन्द जीवन पद्धति में परिवर्तन होता गया। क्रमशः उसने अपनी सहज प्रकृति पर विजय प्राप्त की और अन्य वन्य प्राणियों की अपेक्षा उसने अधिक संस्कारवान, सभ्य तथा उच्च स्तर पर रहने का 'गुर' खोज लिया।

आदि युग का प्रथम मानव अकेले या जोड़े में रहता रहा होगा। इसके उपरान्त समूहगत चेतना उत्पन्न हुई होगी। तब वह छोटे-छोटे समूहों में रहने लगा होगा। इन छोटे-छोटे समूहों ने ही कबीलों का रूप ग्रहण किया होगा। इस रूप में रहते-रहते आदि मानव की समस्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतिविधियाँ बदल गई होंगी और उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए होंगे।

मानव अब झोपड़ी बना कर रहने लगा, खेतीबाड़ी करने लगा तथा पत्थर के औजार भी उसने बना डाले। इस समय दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह, मानवों का समूह एक साथ रहता था, जिससे उन्हें बड़े बड़े शिकार मारने और आत्मरक्षा करने में सहूलियत रहती थी। इतने पर भी ये मानव-समूह इखरे बिखरे ही रहते थे। उनके बीच में कहीं कम, कहीं ज्यादा फासला होता था। धीरे-धीरे इन्हीं समूहों की जनसंख्या बढ़ने लगी और आगे चल कर यही समूह छोटी-छोटी बस्तियों में परिवर्तित होते गए। जन-संख्या बढ़ने और बस्तियों के बन जाने पर मानव को उनकी व्यवस्था सुचारु रूप से चलाने की चिन्ता हुई। यहीं से मानव ने रीति-रिवाज व बन्धन और मान्यताएँ बनानी शुरू कीं, ताकि रहन-सहन-सम्बन्धी व्यवस्था ढंग से चल सके। धर्म-अधर्म तथा पाप-पुण्य की भावना का उदय रीति रिवाजों के साथ-साथ ही हुआ।

प्राप्त ज्ञान व अनुभव का प्रसार

मानव जाति के समूह पृथ्वी के हर भाग में फैले हुए थे। किन्हीं दो समूहों में फर्लांगों का फासला था,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्हींमें गजों का फासला ही होगा, तो किन्हीं दो समूहों में मीलों का फासला रहा होगा। इस प्रकार मानव जो नई जानकारी प्राप्त करता था, उसका ज्ञान आसपास के दो चार समूहों को छोड़ कर, दूर बसने वाले समूहों को नहीं हो पाता था, क्योंकि न तो उस समय यात्रा के लिए कोई प्रबन्ध था और न ही यात्रा करना हिंसक पशुओं की वजह से सुरक्षित था। इसलिए दूर-दूर बसने वाले समूह न तो एक दूसरे से मिल पाते थे और न ही नई जानकारी प्राप्त कर सकते थे। दूसरे मानव इतना विचारशील भी नहीं हो पाया था कि वह यह समझता कि अपनी नई जानकारी का ज्ञान दूसरे समूहों को भी देना चाहिए, ताकि उनके जीवन में भी तदनुसार उन्नति होसके। इस लिए जिस क्षेत्र के बसने वालों को जैसा जो कुछ समझ में आया, अथवा जिस बात को सुविधाजनक समझा गया, उस क्षेत्र में वही रीतिरिवाज प्रचलित होगए। उन्हींके अनुसार वहाँ के मानव ने अपने जीवन को बिताना शुरू कर दिया। समय-समय पर परिस्थिति-वश इन रीति-रिवाजों में परिवर्तन अथवा सुधार होते गए और आगे चल कर यही रीति-रिवाज सामाजिक और धार्मिक प्रथाएँ, परम्पराएँ और मान्यताएँ बनते चले गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समान तथा पृथक् मान्यताएँ

इस प्रकार अलग अलग क्षेत्रों में रहने वाले आदि मानव ने अलग अलग जानकारी प्राप्त की; अलग अलग अपने विचार और परिस्थिति के अनुसार अलग अलग नियम व मान्यताएँ बनाईं। उनमें कतिपय नियम एवं मान्यताएँ आपस में एक दूसरे समूहों की मिलती जुलती भी थीं, तो बहुत से नियम व मान्यताएँ एक दूसरे से पूर्णतया विपरीत भी थीं। किसी क्षेत्र के रहने वालों की समझ में जब यह आया कि उदर-पूर्ति तो खेतीबाड़ी के अनाज से हो ही जाती है, तब उसने अवश्य सोचा होगा कि अपने उदर की पूर्ति के लिए अन्य प्राणियों की हत्या क्यों की जाय? और क्यों उन्हें इस प्रकार पीड़ित किया जाये? उस समय के मानव ने अपने ही कष्टों तथा दुःखों से अन्य प्राणियों के कष्टों की गहराई तथा तीव्रता का अनुभव किया होगा। फलतः इस तरह के विचार वाले क्षेत्रों ने मांस खाना बन्द कर दिया होगा, ताकि प्राणियों को न मारा जाये और उन्हें मरणान्तक पीड़ा न पहुँचाई जाये। दूसरे क्षेत्र में रहने वालों को खेतीबाड़ी से उदर-पूर्ति होने के साथ साथ गोश्त भी खाते रहने में कोई हानि नहीं नजर आयी होगी। फलतः उन्होंने गोश्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाता बन्द नहीं किया। इस प्रकार अलग अलग क्षेत्र-वासियों ने जहाँ कुछ मिलती-जुलती मान्यताएँ बनाईं, वहाँ एक दूसरे से बिल्कुल विपरीत मान्यताएँ भी बनाईं। यही कारण है कि प्राचीन मानव द्वारा अलग अलग बनाए गए नियम व मान्यताएँ आज भी संसार में अलग अलग रूपों में प्रचलित हैं। इस प्रकार आदि पुरुष वर्ग ने जो नियम-कायदे रीति-रिवाज निर्मित किये, उन पर उसने अमल करना शुरू किया? पर कालान्तर में परिस्थिति-वश उनमें सुधार एवं परिवर्तन भी हुए। फिर भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी वे रीति-रस्म अपने मूल रूप में अथवा परिवर्तित रूप में कायम रहे और आगे चल कर यही सामाजिक प्रथाएँ और परम्पराएँ बन गईं। बाद में इन प्रथा और परम्पराओं का इतना महत्व बढ़ता गया कि, धर्म का रूप भी इन्हीं प्रथाओं पर आधारित होगया। इन लोक-प्रथाओं के विरुद्ध आचरण करने वाले को अधर्मी और पापी कहा जाने लगा तथा उसका जाति से बहिष्कार भी होने लगा।

जिज्ञासा एवं अन्वेषण की प्रवृत्ति

मानव स्वभावतः जिज्ञासु होता है। फलतः वह नई-नई जानकारी और नए नए पदार्थों के उपयोग के बारे में खोज-बीन करता रहा। इससे जैसे जैसे मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभ्यता और विकास की ओर बढ़ता गया वैसे वैसे मानव के रास्ते मे कुछ विपत्तियाँ भी आने लगीं—रोग, मृत्यु, अति वृष्टि, कम वृष्टि तूफान, भूत-प्रेत का डर आदि। मानव का अपना ही डीलडौल राक्षस जैसा होता था। रात के अन्धेरे में वह अपनी ही शक्ल के व्यक्तियों के डरावने तथा बर्बर चेहरों को और भी अधिक भीषण रूप में देख कर भयभीत होजाता रहा हो—तो क्या आश्चर्य ! रात में कुरूप चीजें बहुत भयावनी दिखाई पड़ती हैं। अन्य अनेक प्रकार की दैहिक, दैविक एवं भौतिक विपत्तियों ने भी मानव-जीवन को अस्तव्यस्त करना शुरू कर दिया। तब मानव ने अपने काल्पनिक मन से इन विपत्तियों से छुटकारा पाने के लिए एक काल्पनिक शक्ति की कल्पना की और अपनी कल्पना के आधार पर ही उस शक्ति की प्रतिमा भी बना डाली। अपनी सूझ-बूझ के अनुसार उस प्रतिमा को उसने भेंट-पूजा चढ़ाना शुरू कर दिया। इस प्रकार हमारे देवी—देवता और उनकी पूजा—आराधना का जन्म हुआ। जैसे अलग-अलग मानव-समूहों ने अपने अपने विचारानुसार अलग अलग नियम व मान्यताएँ बनाई थीं, वैसे ही अलग-अलग क्षेत्रों में देवी-देवताओं की प्रतिमाएँ भी अलग-अलग किस्म की बनीं तथा उनके पूजा आराधना के ढंग भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलग अलग ही बने। इसीलिए आज भी पूर्वजों द्वारा बनाई गई प्रणाली के अनुसार अलग अलग क्षेत्रों में अलग अलग देवी-देवताओं का रूप मिलता है और हर क्षेत्र में देवी-देवता की पूजा-आराधना के ढंग में भी अन्तर मिलता है।

इष्ट तथा क्रूर देवी-देवताओं की कल्पना

जंगलों में कई प्रकार के विषैले जानवर भी होते थे, जैसे सर्प-बिच्छू आदि। हिंसक जानवर शेर-चीता-भेड़िये आदि भी मुक्त रूप से विचरते रहते थे। उस समय नृशंस जलचरों की संख्या भी खूब थी। पानी में घड़ियाल वगैरह खतरनाक जानवर होते थे, जो मानव को मौत के घाट उतार देते थे। उस समय मानव की बुद्धि तो इतनी विकसित हो नहीं पाई थी, इस लिए इनसे छुटकारे का और कोई उपाय न मिलने पर इन सबसे रक्षा में सहायकों को भी मानव ने देवता मानना शुरू कर दिया था और इनकी भी पूजा होने लगी। संसार के अनेक भागों में बहुत से अविकसित प्रकार के कबीलों में आज भी कुछ जानवरों की भी पूजा होती है। इस समय भी नागपूजा उसी समय से प्रचलित चली आ रही है।

इसके अलावा मानव ने उन सभी पदार्थों और प्राणियों को भी देवता की श्रेणी में शामिल कर लिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनसे मानव जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति होती थी। पृथ्वी से मानव को अन्न-जल, फलफूल मिलते थे; चन्द्रमा से रात को शीतल चांदनी और मानव शरीर को स्निग्धता मिलती थी; सूर्य से दिन में प्रकाश, फल-फूल व अनाज पकने के लिए गर्मी प्राप्त होती थी; धूप से सर्दी का बचाव होता था; मेघों से वर्षा होती थी; वायु से जीवन की तरोताजगी तथा नवीन गति मिलती थी और गाय से अमृत समान स्वादिष्ट दूध, दही, घी तथा खेत जोतने के लिए बैल मिलते थे। उनके मरने के उपरान्त उनका चमड़ा अनेक उपयोगी कामों में प्रयुक्त होता था; भैंस उस समय पालतू नहीं होपाई थी। इस प्रकार जितने पदार्थ मानव के जीवन की गाड़ी चलाने में सहायक सिद्ध हुए, वे सबके सब देव-ताओं की श्रेणी में प्रविष्ट होते गए। मानव के पास उस समय पूरी सूझबूझ थी नहीं। मानव की अधिक आवश्यकताएँ भी नहीं थीं; उस समय मानव को सिर्फ पेट भरने और आत्मरक्षा की चिन्ता होती थी; इसलिए इन दोनों आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक देवता इष्ट देव के रूप में और इन दोनों आवश्यकताओं में बाधक देवता क्रूर एवं उग्र देवों की श्रेणी में माने जाने लगे। इस प्रकार आदि मानव ने देवी-देवताओं की सृष्टि की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज भी संसार भर में किसी न किसी रूप में इन देवी-देवताओं की पूजा होती है। क्रूर देवताओं को उस समय से आज तक भी बकरा, भैंसा, मानव आदि प्राणियों की बलि देकर खुश किया जाता आ रहा है और इष्ट एवं सानुकूल देवताओं को फल, फूल, मिष्ठान्न आदि चीजों से प्रसन्न किया जाता आ रहा है। इस समय भी देवी-देवताओं का कतिपय परिवर्तनों के साथ, पूर्ववत पूजन-अर्चन होता है।

इशारे, खाका, चित्र और बोली

आदि मानव इसके उपरान्त विकास की ओर तेजी से अग्रसर होने लगा; परन्तु अब सबसे बड़ी समस्या थी अपने मन के भाव दूसरों को बताना और दूसरों के मन के भाव जानना। बोलचाल की भाषा का जन्म अभी हुआ नहीं था; वैसे दुःख, भय, खतरा, खुशी आदि प्रकट करने के लिए कुछ आवाजों के इशारे बना रखे गये थे। मुखमुद्रा, आँखों के चढ़ाव-उतार, भृकुटि-सञ्चालन, अंग-विन्यास, कम्पन, चीख, कराह, आह, रोमाञ्च आदि क्रियाओं से भी भावों का अभिव्यञ्जन होता था। इस प्रकार उस समय आदि मानव अपने मन तथा हृदय के भावों एवं विचारों को दूसरे मानव के मन एवं हृदय में सम्प्रेषित करता था। कालान्तर में जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि मानव ने अधिक प्रगति की, प्रकृति के जब वह अधिक निकट आया, वनस्पतियों आदि से जब उसका अधिक परिचय बढ़ा व खेती करने की उपयोगिता का उसे ज्ञान हुआ, तब वह अधिक व्यवस्थित रूप से रहने लगा। छोटी छोटी जमातें बनीं, बस्तियाँ बनी तथा कुछ नियम-कायदे भी बने। इस प्रकार एक समन्वित समाज का उदय हुआ और जनसंख्या दिनोंदिन बढ़ने लगी एवं देवी-देवताओं का प्रादुर्भाव भी होगया। ऐसी परिस्थिति में बोलचाल के कुछ इशारों से जब काम चलना असम्भव प्रतीत होने लगा तब मानव ने चीजों का खाका या चित्र बना बना कर उनके नाम रखने शुरू किए। इसे चित्रलिपि-भाषा कह सकते हैं। इस तरह कुछ नाम और कुछ इशारे मिला कर काम चलाना शुरू किया गया। फिर धीरे धीरे इशारों को भी नामों में परिवर्तित कर लिया गया और एक टूटी-फूटी काम-चलाऊ भाषा ने रूप ग्रहण कर लिया। आगे चल कर भाषा में समय-समय पर सुधार होता गया और कुछ वर्षों बाद भाषा पूर्ण रूप से समझने-समझाने लायक बन गई।

लिपि का विकास

इसके बाद मानव ने खाका, चित्र और कुछ इशारे मिलाकर जमीन पर लिखने का अभ्यास किया, जिसको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घण्टों तक देखने पर कुछ आधी–अधूरी बात समझ में आती थी। इसके बाद खाका चित्रों की जगह भी इशारे बना कर भर दिए गए। उस समय के लिहाज से एक पूर्ण लिपि तैयार होगई। इस लिपि की लिखावट को आसानी से नहीं पढ़ा जा सकता था, क्योंकि एक तो लिखने का अभ्यास न होने की वजह से लिखावट टेढ़ी-मेढ़ी होती थी, छोटी बड़ी भी होती थी, जो देखने में भद्दी लगती थी; दूसरे शुरू-शुरू की लिपि में मात्रा आदि भी नहीं होती थी। फिर भी इसी लिपि के सहारे पठन-पाठन का कार्य आरम्भ होगया और धीरे धीरे लिपि की कमियों की भी पूर्ति होती गई।

भाषा और लिपि में विभिन्नता

अलग अलग क्षेत्रों में रहने और अलग अलग जानकारी प्राप्त करने की वजह से, जैसे परम्पराओं और धार्मिक कार्यों में भिन्नता आ गई थी, वैसे ही भाषाएँ और लिपि भी अलग अलग क्षेत्रों में भिन्न भिन्न प्रकार की प्रचलित हुईं। किसी भी प्रान्त की मुख्य भाषा एक होने पर भी, हर दस बारह मील के फासले के बाद भाषा के कुछ शब्दों में और बोलचाल के लहजे में थोड़ा बहुत अन्तर आजाना स्वाभाविक है, जो आज भी पाया जाता है। यह इस बात का प्रमाण है कि अलग समूहों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा अपनी भाषाएँ अलग अलग ही बनीं; परन्तु आस-पास के कुछ समूहों में, जो बहुत नजदीक होते थे, एक दूसरे समूह के शब्द, रातदिन मानव के एक दूसरे से मिलते रहने की वजह से, शामिल होते रहते थे। आगे चलकर इन्हीं कई समूहों को मिला कर प्रान्त बन-गए; इसलिए उस क्षेत्रवासी समूहों की भाषा में किसी अंश तक समानता और शब्द एवं उच्चारण के लहजों में कहीं कहीं भिन्नता भी पाई जाती है। आज तक भी यही स्थिति है, जो मूलतः आदिम युग की देन है। शुरू शुरू की लिपि और लिखावट में भी इसी तरह के अन्तर पाए जाते थे। बाद में भाषा और लिपि में सुधार भी होता गया तथा समानता भी आती गई। इस प्रकार भाषाओं और लिपियों का प्रचलन होगया, जिनकी वजह से आज का मानव बड़े आराम से बोल एवं लिख-पढ़ सकता है। पर इनको बनाने और प्रचलित करने में आदि मानव को घोर परिश्रम करना पड़ा था।

इस प्रकार मानव को पृथ्वी पर आए लाखों वर्ष बीत गए। इस बीच मानव ने बहुत उन्नति कर डाली थी। खेतीबाड़ी से खाने की समस्या का समाधान होगया था। पत्थर के हथियारों से सुरक्षा भी किसी सीमा तक संभव होगई थी। मकान बनाने की विधि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में भी उन्नति होगई थी। झोपड़ियों की बनावट में भी काफी सुधार होगया था। मोटी मोटी लकड़ियों की सहायता से झोपड़ी खड़ी होने लगी; पतली लकड़ी व पत्तों की सहायता से एवं गीली मिट्टी के प्रयोग से छत व झोपड़ी का, खुलने और बन्द होने वाला, दरवाजा बनने लगा। मानव भाषा द्वारा एक दूसरे के भाव समझने लगा और लिपि द्वारा छोटे मोटे सन्देशों का भी दूर के समूहों में संचार होने लगा।

नैसर्गिक प्रवृत्तियाँ

सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्राणियों में निसर्ग ने शरीर के पोषण, रक्षण, संवर्धन एवं सन्तति-उत्पादन की सहज प्रेरणाएँ तथा प्रवृत्तियाँ उत्पन्न कर दी हैं। बच्चे को जन्म देने वाली माता के हृदय में बच्चे के संरक्षण एवं पालने की प्रवृत्ति अपने आप पैदा होजाती है। यही प्रवृत्ति स्नेह एवं वात्सल्य भाव के नाम से अभिहित की जाती है। इसी प्रेरणा के वशीभूत होकर माता अपने बच्चे का अन्य हिंसक तत्वों से रक्षण करती है और उसे पोषण भी प्रदान करती है। स्तनपायी प्राणियों में माता अपने बच्चों को तब तक अपना दूध पिलाती है, जब तक वह अपना आहार स्वयं प्राप्त करने में समर्थ नहीं होजाता। पेट भरने, प्यास बुझाने तथा खतरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा अन्य प्राणियों के हमले से आत्मरक्षा करने की प्रवृत्ति सभी प्राणियों में जन्मजात होती है। यथा समय विश्राम करने एवं सोने की प्रक्रिया समस्त प्राणियों में स्वतः ही उद्भूत होती है। इसी प्रकार यौवनावस्था में काम-जन्य प्रवृत्ति (Sexual Tendency) अपने आप प्राणियों को अभिभूत कर लेती है। यह यौन प्रवृत्ति ही स्त्रीत्व का पुरुषत्व के प्रति तथा पुरुषत्व का स्त्रीत्व के प्रति आकर्षण उत्पन्न कर देती है। यह आकर्षण इतना प्रचण्ड एवं अनिवार्य होता है कि प्राणिमात्र को वह उपयुक्त समय पर अपने वशीभूत कर लेता है। इस प्रबल आकर्षण के परिणामस्वरूप ही समस्त प्राणियों की वंश-वृद्धि तथा सन्तानोत्पादन-प्रकिया सम्पादित होती है।

स्वच्छन्द यौनाचार

मानवेतर प्राणियों में तो यह यौन सम्बन्ध, प्राकृतिक एवं नैसर्गिक नियमों के अनुसार, अपनी अपनी जातियों में, ऋतु विशेष में बिना किसी भेदभाव के, सम्पादित होते हैं। प्रारम्भ में आदिम युगीन मानव की भी यही स्थिति रही है। उस समय कोई भी स्त्री किसी भी पुरुष के साथ सम्भोगरत होजाती थी अथवा कोई भी पुरुष किसी भी स्त्री के साथ, जब चाहे स्वेच्छा-पूर्वक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संभोग कर लेता था। वह स्वच्छन्द एवं निर्बन्ध आहार-विहार का युग था। किसी प्रकार की मान्यताओं का उद्भव तब तक नहीं हुआ था, न परिवार ही बने थे, न समाज। पिता-पुत्री अथवा माता-पुत्र में भी, सहज रूप में ही, सम्भोग-क्रिया-सम्पन्न हो जाती थी। एक स्त्री अनेक समयों पर अनेक पुरुषों से भी सम्बन्ध स्थापित कर लेती थी। इसी प्रकार एक पुरुष भिन्न-भिन्न समयों पर अनेक स्त्रियों से निस्संकोच सम्भोग कर लेता था। इसी प्रकार स्वच्छन्द स्वैराचार उस समय के आदि मानव की जीवन-पद्धति बन गई थी।

वात्सल्य भावना

इस प्रकार के यौन-सम्बन्धों से उत्पन्न सन्तान के प्रति उसको जन्म देने वाली माता का स्वाभाविक आकर्षण होता था। उसके हृदय में अपत्य स्नेह तथा वात्सल्य भावना अपने आप उत्पन्न होजाती थी, जिसके वशीभूत वह अपनी सन्तान का पालन-पोषण स्वतः ही उस समय तक करती थी, जब तक सन्तान–लड़की या लड़का-बड़ा होकर अपना भोजनादि प्राप्त करने में समर्थ नहीं होजाता था। आदिम युग में यही स्थिति बहुत दीर्घ काल तक रही होगी। कालान्तर में परिस्थितियों के वशीभूत होकर जनसंख्या के बढ़ने पर उत्पन्न अनेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्याओं के कारण मानव के इस स्वच्छन्द आहार-बिहार में परिवर्तन आना शुरू होगया और उसमें पारिवारिक एवं सामाजिक भावना की सूक्ष्म तथा अस्पष्ट भावनाएँ बीज के रूप में उदित होने लगीं।

आदि मानव के यौन सम्बन्धों ने अनेक समस्याएँ उत्पन्न कीं। उनमें एक समस्या थी नवजात सन्तान के पालन-पोषण के दायित्व तथा उसको जन्म देने वाली माता की। जन्म देने के कारण सन्तान के लालन-पालन का सीधा दायित्व उसकी माता पर आता था। उस समय प्रचलित स्वच्छन्द यौनाचार के कारण उस सन्तान के ठीक पिता का निश्चय कर सकना असम्भव था। अतः पुरुष पर सन्तान के पालन की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी नहीं आ पाती थी। आदि मानवों के विचार-शील वर्ग ने इस समस्या के समाधान की ओर ध्यान देना शुरू किया। उसने विचार किया कि सन्तानों के लालन-पालन और उनकी सुरक्षा की व्यवस्था किस प्रकार की जाये ? बच्चे को जन्म देने वाली अगर बच्चे की देखभाल ही करती रहे, तो उसका अपना पेट कैसे भरे और बच्चे को साथ लेकर अपने आहार की खोज में इधर-उधर जाए तो हिंसक जानवरों से औरत, अपनी व बच्चे की, दोनों की रक्षा किस प्रकार करे ? ऊपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमने यह बताया ही है कि शादी विवाह का उस समय तक प्रचलन नहीं हुआ था, इसलिए कोई पुरुष भी सद्य-प्रसूता इस आदि मानवी का साथ कैसे देता? यह पता तो होता ही नहीं था कि बच्चे का वास्तविक पिता है कौन ? इसलिए उस काल में बच्चों की सुरक्षा एक समस्या बन गई थी ।

नैसर्गिक आकर्षण

दूसरी ओर नैसर्गिक रूप से कुछ युवक-युवतियों के मन एक दूसरे की तरफ आकर्षित होने लगे और ये युवक-युवतियाँ सिर्फ एक दूसरे के होकर रहने की इच्छा प्रकट करने लगे । परन्तु उनकी इस इच्छापूर्ति में अन्य युवक-युवतियाँ बाधक बनने लगीं, क्योंकि उस समय तक न तो मानव पूर्णतया विकसित बुद्धि वाला होपाया था और न ही कोई खास बन्धन व नियम ही बन पाए थे । इसलिए प्रेमी जोड़े युवक-युवती से दूसरे युवा स्त्री-पुरुष भी सहवास की इच्छा प्रकट करते थे । युवक-युवती द्वारा दूसरे स्त्री-पुरुष से सहवास करने में आनाकानी करने पर झगड़ा शुरू होजाता था और उस समय के झगड़े का अन्त एक पक्ष के समाप्त होने पर ही होता था । इस प्रकार आदि मानव की यह एक दूसरी समस्या थी जो परेशानी का कारण बनी हुई थी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्धनों का श्रीगणेश

आदि मानव ने बच्चों की सुरक्षा व प्रेमी जोड़े का एक दूसरे पर निर्भर रहना,—दोनों समस्याओं का हल यह निकाला कि जो युवक युवती एक दूसरे के प्रति आकर्षित हों, वे एक दूसरे के बन कर ही रहें, कोई तीसरा उनके बीच हस्तक्षेप नहीं करे। शेष पुरुष अपनी इच्छा के अनुसार औरतों की संख्या रखें, परन्तु उस पुरुष को उन्हीं औरतों पर निर्भर रहना होगा, वह अन्य औरतों से सम्बन्ध नहीं कर पाएगा और उन औरतों और उनसे पैदा होने वाली संतानों की रक्षा व लालन-पालन का जिम्मेदार भी उस पुरुष को ही रहना पड़ेगा। इस प्रकार इन दो समस्याओं को हल करके, आदि मानव ने आज के प्रचलित शादी-ब्याह का सूत्रपात किया और यहीं से अलग अलग परिवारों की प्रणाली का जन्म हुआ तथा यहीं से मानव ने पशु के समान यौन क्रिया को त्याग कर पारिवारिक मर्यादा ग्रहण की। सामाजिक बन्धनों का यहीं से श्रीगणेश होता है।

स्त्री-पुरुष के बीच कार्य-विभाजन

इस प्रकार भावनात्मक सम्बन्धों के स्थापित होजाने तथा अलग अलग पारिवारिक प्रणाली का प्रचलन होजाने के बाद मानव ने औरत के जिम्मे बस्ती में रह कर घर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थी के रख-रखाव, बच्चों की देख-भाल और खाना वगैरह पकाने का काम दिया तथा पुरुष को खेतीबाड़ी, पशुओं की देखभाल आदि बाहरी काम सौंपे गये। इस तरह स्त्री-पुरुष के काम का बँटवारा होगया और तभी से यह प्रथा चली आ रही है कि औरत गृहस्थी ही सम्भाले और पुरुष, अपना जो भी व्यवसाय हो, उसकी देख-भाल करे। इस प्रकार आदि मानव और औरतें दिन भर अपने अपने जिम्मे के कर्तव्यों का पालन करने के उपरान्त रात को खा-पीकर बस्ती के एक स्थान पर एकत्र होते थे और आबाल-वृद्ध सब मिल कर नाचते-गाते, कूदते-उछलते तथा अन्य मनोरञ्जक क्रीड़ाओं में भाग लेते थे। इस रूप में सभी का जीवन पृथ्वी पर एक प्रकार से खूब सुख-शान्ति से व्यतीत होने लगा।

विशेषज्ञ वर्ग का उदय

उस काल में जिन लोगों ने भाषा व लिपि का प्रचलन करने में सबसे अधिक प्रयत्न किया था, वे लोग उनको और अधिक विकसित करने तथा सुधारने के प्रयत्न में बराबर लगे रहे। इसका परिणाम यह हुआ कि वे अपने अन्य सहवासियों की अपेक्षा भाषा-लिपि एव चिन्तन-मनन में अधिक आगे बढ़ गये और उन विधियों के अधिक जानकार होगए। इसके साथ ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस दिशा में अपने प्रयत्न से उन लोगों ने बहुत-सी नई बातों की रचना कर डाली; तदुपरान्त उन लोगों ने बस्ती के तमाम-बाल-वृद्ध-युवक समुदाय को एकत्र करके अपनी नई जानकारियों से परिचित कराना शुरू किया। इस जानकारी को प्राप्त करने के लिए आस-पास की उन बस्तियों के मानव भी, जहाँ किसी प्रकार की नई बातें नहीं खोजी जा सकी थीं, आने लगे। इस तरह से उस समय के समाज में शिक्षा-प्रणाली अथवा विद्याध्ययन का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। गुरु-शिष्य-शिक्षा-परम्परा का उदय यहीं से हुआ। कालान्तर में प्राप्त अनुभवों के आधार पर यह स्थापना की गई कि शिक्षा नियमित रूप से समाज के बच्चों को दी जानी चाहिए, ताकि वे बड़े होने पर उसका अपने व समाज के हित में प्रयोग कर सकें तथा उसको अधिक प्रचारित प्रसारित करने में समर्थ हों।

इस प्रकार आदि मानव-समाज विकास करता चला गया। समाज के जिस वर्ग ने भाषा, लिपि एवं अध्ययन-अध्यापन के कार्य में अधिक रुचि ली, वह विचार के क्षेत्र में अग्रणी होगया। इस वर्ग ने तरह तरह के अनुसन्धान कार्य सम्पादित किये और उनका लाभ समाज को देना प्रारम्भ किया तथा सारे मानव समुदाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को तत्कालीन परिस्थितियों में प्राकृतिक साधनों के उपयोग का ज्ञान प्रदान किया। देवी-देवताओं की स्थापना ने मानव को अधिक सोचने विचारने की प्रेरणा प्रदान की, जिसके परिणामस्वरूप आध्यात्मिक क्षेत्र में अनेक अनुसन्धान हुए और अन्ततः एक सृष्टि-नियन्ता ईश्वर के स्वरूप का आत्मसाक्षात्कार किया गया। इसके साथ ही अनेक धार्मिक निष्ठाओं, यम-नियमों, विधि-निषेधों का भी प्रचलन हुआ। इस दिशा में अग्रगमन करने वालों का एक अलग वर्ग ही समाज में बन गया।

ज्ञान के प्रसार तथा विचार के क्षेत्र में समाज के कल्याण की दृष्टि से, अग्रगमन करने वाले इन विशेषज्ञों को विशेष सम्मान तथा श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाने लगा, क्योंकि वे अपने अनुसन्धानों के प्रयोग द्वारा सारे मानव-समुदाय को विकसित जीवन-प्रणाली की शिक्षा देते थे और सबके साथ मिल कर व्यवस्थित जीवन जीने की विधि बतलाते थे, जिनका अनुगमन सभी लोग श्रद्धापूर्वक करते थे। इसके परिणामस्वरूप बस्ती के लोग उन्हें ज्ञानी, पंडित अथवा पूजनीय मानने लगे और उनके मुँह से निकली हुई हर बात सच्ची, मानव जाति के लिए भली, और महत्वपूर्ण मानने लगे। अन्ततः इन पंडितों का समाज में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगया और उन्हें भूदेवों की श्रेणी प्रदान की गई। अदृश्य शक्तियाँ और उनके प्रतीकस्वरूप देवता एवं उनकी मूर्तियाँ तो समस्त मानव समाज के लिए आराध्य तथा पूजनीय थीं ही। देव-पूजन तथा ईश्वर-आराधन की विधियों का विधान भी समाज के इसी विशेषज्ञ वर्ग ने निर्मित किया, जिसका परिपालन प्रायः समस्त मानवों ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। उस समय का मानव पूर्ण-तया भोलाभाला, अविकसित बुद्धिवाला, अबोध, अथच अनुगमनशील था। उसमें ज्ञान अथवा जीवन-मार्ग की सुविधाओं को पाने की तीव्र जिज्ञासा वृत्ति थी। उसकी इस जिज्ञासा की पूर्ति उसे इन पण्डितों से पूर्ण होती नजर आयी ; इसलिए आदि-मानव ने, अपने इन विशेष ज्ञान-सम्पन्न वर्ग द्वारा प्रदर्शित किये गये मार्ग को आँख मूँद कर स्वीकार कर लिया।

पुरोहितों का दायित्व

आदिमानवों के शेष समुदाय की विवेक-बुद्धि विशेष-जाग्रत नहीं हो पाई थी। वे अपने जीवन-कार्यों में इस कदर व्यस्त रहते तथा खेती-बाड़ी, भोजन-पूर्ति, बच्चों के लालन-पालन, स्त्रियों के प्रति कर्तव्य-पालन एवं मनोरञ्जन-कार्यक्रमों में इस प्रकार संलग्न रहते कि उनमें विशेष सोचने समझने की प्रवृत्ति ही नहीं जगती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी इस स्थिति का लाभ समाज के इस नवोदित विशेषज्ञ पण्डित वर्ग ने उठाया। उन्होंने सारे मानव-समुदाय के कल्याण-मार्ग की खोज का दायित्व स्वयं ग्रहण कर लिया और इस प्रकार तत्कालीन समाज के मन तथा हृदय को वशीभूत कर लिया। एक प्रकार से वे समाज के अग्रणी नेता बन गये और सबके हितों की कामना करने के दायित्व के ग्रहण करने के कारण ही उन्हें 'पुरोहित' नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। 'पुरोहित' का अर्थ है, जो वस्ती (पुर) में रहने वाले अपने समस्त सहवासियों के हितों की रक्षा एवं कल्याण की कामना करे।

जब इन पुरोहितों ने समस्त समाज के धार्मिक नेता एवं आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक की श्रेणी प्राप्त कर ली, तब स्वभावतः वे अपनी इस स्थिति का लाभ अन्य मानव समुदायों से प्राप्त करने लगे। उन्होंने सारे समाज के पथ-दर्शन का जब दायित्व ग्रहण किया, तब यह आवश्यक-सा होगया कि उनके जीवन-यापन का दायित्व शेष लोग वहन करें। तत्कालीन समाज ने इसे स्वीकार भी कर लिया और यह लोगों के पारिवारिक तथा सामाजिक कर्तव्यों का एक अंग बन गया।

इस 'पुरोहित' वर्ग ने प्रारम्भ में परम निःस्पृह एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याग भावना से समाज के नेतृत्व का दायित्व ग्रहण किया था। कालान्तर में इस वर्ग के न्यस्त स्वार्थ स्थापित होगये। फलतः अपने इन न्यस्त स्वार्थों को सदैव सुरक्षित रखने के लिए, 'पुरोहितों' ने शेष मानवों की अनिभज्ञता तथा धार्मिक श्रद्धा का लाभ उठाया हो, तो कोई आश्चर्य नहीं है। धीरे धीरे यह पुरोहित वर्ग अधिक ज्ञानवान, प्रज्ञासम्पन्न तथा सुदक्ष होगया। फलतः उसने ऐसे धर्म-ग्रन्थों तथा आचार-संहिताओं का निर्माण किया, जिनका आधिपत्य समस्त मानवों के हृदय एवं मस्तिष्क पर सदा के लिए स्थापित होगया। इसका नतीजा यह हुआ कि इस पुरोहित वर्ग पर शेष मानवों की अन्ध श्रद्धा होगई और वे विना किसी विवाद के उसके वताए हुए मार्ग का अनुसरण करने लगे। इस वर्ग के तर्क एवं वचन अकाट्य, अनुल्लंघनीय तथा सर्वमान्य होगये। एक प्रकार से इस पण्डित समुदाय का समस्त समाज पर मानसिक साम्राज्य स्थापित होगया।

इसमें शक नहीं कि आरम्भिक काल में इस पुरोहित वर्ग ने अत्यन्त त्याग तथा तपःपूर्ण जीवन बिताया और इसने दया, क्षमा, दाक्षिण्य, अपरिग्रह वृत्ति, अस्तेय आदि व्रतों का न केवल उपदेश दिया, वरन् उन्हें अपने जीवन में उतारा और उनका स्वयं प्रयोग किया, जिसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुम्बकीय प्रभाव शेष समाज पर पड़ा। पर कालान्तर में यह स्थिति वदल गई और यह वर्ग शेष समाज के शोषण दोहन पर अपना जीवन-निर्वाह कर सांसारिक सुखों का साधारणजनों की भाँति ही उपभोग करने लगा। चूँकि इस वर्ग का कार्य-क्षेत्र केवल चिन्तन, मनन, अध्ययन-अध्यापन, पूजा-पाठ तक सीमित था, अतः वह शरीर-श्रम से सर्वथा मुक्त रहता था। शारीरिक परिश्रम, मेहनत तथा अन्य कष्टों से बचे रहने के कारण यह वर्ग 'परोपजीवी' (Parasite) बन गया। दूसरे लोग अपने परिश्रम से अर्जित अन्न एवं धन द्वारा इस वर्ग को आसानी से अनायास जीवन की समस्त सुविधाएँ प्रदान करते थे।

मान्यता का दुरुपयोग

ऊपर हमने बताया ही है कि तत्कालीन समाज में इस पुरोहित वर्ग को जो मान्यता प्राप्त हुई, उसका कुछ कालोपरान्त दुरुपयोग होने लगा। पुरोहितों में एक श्रेणी तो, ऐसी जरूर रही, जिसने त्याग-तपस्या, ब्रह्म-चिन्तन, मनन, यम-नियम, धृत्ति, दया, क्षमा, सत्य, अहिंसा, अस्तेय एवं अपरिग्रह जैसे सात्विक व्रतों को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया तथा जीवन-मृत्यु, आत्मा-परमात्मा एवं प्रकृति के रहस्यों के अनुसन्धान से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना जीवन सार्थक बनाया और तदनुसार शेष समाज को भी दीक्षा दी; पर इन्हींमें से कुछ समुदाय ऐसे निकले, जिन्होंने समाज में अपनी मान्यताओं के कारण न्यस्त स्वार्थ स्थापित कर लिये और आध्यात्मिक उत्थान के मार्ग को छोड़ कर भौतिक सुखोपभोग को अपना लक्ष्य बनाया। पण्डे, पुजारी, मठाधीश धर्माचार्य, धर्म-गुरु आदि अपने प्रति जन-श्रद्धा का लाभ उठाने लगे और जनसाधारण की धार्मिक भक्ति एवं आस्था का, परलोक, तथा स्वर्ग-सुख के काल्पनिक भावों को उत्तेजित कर, शोषण करने लगे। इस प्रकार बिना शारीरिक श्रम किये ही उन्हें सारे समाज द्वारा अर्जित धन का अच्छा खास भाग—चढ़ावे,पुजापे, दान-दक्षिणा, अन्नधन, भोजन-पान, आदि के रूप में अपने आप मिलने लगा। इस विधि से उनके पास अपार द्रव्य संग्रहीत होगया। फलतः धीरे धीरे अपने पूर्व गुणों को छोड़ कर उन्होंने शेष समाज से कहीं अधिक साधन-सम्पन्नता उपलब्ध कर ली। सद्गुणों तथा जनकल्याण-कारी भावनाओं का उन पर कोई अङ्कुश एवं नियंत्रण नहीं रहा। आत्मनियंत्रण के अभाव में लक्ष्मी निरङ्कुश हो जाती है और वह मानव में स्वच्छन्द आहार-बिहार एवं ऐश्वर्य-विलास की प्रवृत्ति पैदा कर देती है। यही स्थिति इन न्यस्त स्वार्थी कथित धर्मगुरुओं की भी हुई। धन-जन के अहंभाव ने उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीतर अनेक दुर्गुण उत्पन्न कर दिये; फिर भी जन्मना प्राप्त अधिकारों के कारण वे शेष समाज पर अपना प्रभाव कायम रखने में समर्थ रहे।

जन्माधारित श्रेष्ठता

प्रारम्भ में पुरोहित वर्ग को समाज में जो श्रेष्ठता एवं गुरुता प्राप्त हुई थी, वह गुण-कर्म्मों तथा कठोर कर्तव्य-पालन के आधार पर थी। पर धीरे-धीरे इस वर्ग की श्रेष्ठता तथा मान्यता जन्माधारित होगई। जब जन्म से ही इस वर्ग को 'गुरुपद' अथवा 'गुरुडम' की उच्चता स्वयंसिद्ध होगई, तब गुण-कर्म एवं सत्यादिक व्रतों के पालनार्थ तप: पूर्ण जीवन बिताने की प्रवृति उनके मन से अपने आप नष्ट होगई।

समाज में न्यूनाधिक रूप में आज भी यही स्थिति है। आज भी जन्म से जाति का निर्धारण होता है, कर्म से नहीं। फलत: जन्मत: अब्राह्मण, कर्मणा विद्वान प्रकाण्ड पण्डित, ज्ञानवान तथा प्रतिभासम्पन्न होने के बावजूद समाज में प्रतिष्ठा नहीं प्राप्त कर सकता; हालाँकि अब लोगों का दृष्टिकोण किसी सीमा तक बदला हुआ है।

धर्म-व्यवसायी

जैसे [illegible] व्यव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृत होता है। जनसाधारण में धर्म, देवता एवं ईश्वर के प्रति जो गहन श्रद्धा बद्धमूल होगई है, उसका शोषण दोहन ये धर्म-व्यवसायी लोग तीर्थों, मन्दिरों, मठों, पुण्यस्थलों में तथा यज्ञादिक आयोजनों में खुल कर करते हैं। कभी कभी तो यह प्रक्रिया स्पष्ट ठगी, छल-छन्द तथा पाखण्ड का रूप धारण कर लेती है, जिसके कारण श्रद्धालु भक्त तीर्थ-यात्रियों को बड़ी कठिनाई में फँस जाना पड़ता है और अपना सब कुछ इन धर्म एवं स्वर्ग के ठेकेदारों को सौंप देना पड़ता है।

प्राचीन समय के इन्हीं धर्मविदों के इस तथाकथित पण्डित वर्ग ने, अर्थात् अधिक समझ वालों ने, मानव के मन में, भूत-प्रेत, पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक, देवी-देवताओं के तोष अथवा रोष एवं देवताओं के कोप से मुक्ति के उपायों के सम्बन्ध में पाखण्ड-पूर्ण अन्धविश्वास इस प्रकार कूट-कूट कर भर दिया था कि, आज लाखों साल बीत जाने पर और मानव के हर रूप में पूर्ण विकसित होजाने पर भी, वे ज्यों के त्यों बने हुए हैं। इस प्रकार इन धर्म-धुरीणों की हर पीढ़ी इस मानव-भावना का लाभ उठाती आरही है और आज भी वह पूजनीय बन-कर, ऐश्वर्य-विलास-पूर्ण जीवन व्यतीत कर रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'क्षत्रिय' वर्ग का आविर्भाव

आदिम युग के इतिहास को देखने से स्पष्ट पता चलता है कि उस समय का मानव सिर्फ मानव था,–न कोई छोटा बड़ा, न कोई छूत-अछूत, न कोई वैश्य, पंडित और न क्षत्रिय-शूद्र का ही कोई प्रश्न उस समय था। आदि मानव-समाज ने मानव की सुविधा के अनुसार अलग अलग कामों पर अलग अलग व्यक्ति नियुक्त किये थे; मानव जब खेतीबाड़ी का काम देखने के लिए बाहर खेतों में चले जाते थे, तब बस्तियों में सिर्फ औरतें रह जाती थी। बस्तियों के चारों तरफ घोर जंगल होता था, फलतः इन घने जंगलों से हिंसक जानवर आकर बस्ती में घुस आते थे, जो औरतों द्वारा मुकाबला करने पर भी बाल-बच्चों को हानि पहुँचा देते थे। इसलिए बस्तियों की रक्षा के लिए समाज ने एक विशेष वर्ग को तैनात किया। इस प्रकार रक्षार्थ तैनात वर्ग को 'क्षत्रिय' कहा जाने लगा। क्षतात् त्रायते इति क्षत्रियः' जो क्षत होने से, आक्रमित होने से, लोगों की रक्षा का कार्य करता है, उसे 'क्षत्रिय' कहा जाता है। जो 'ब्रह्म' को जानने और समझने तथा उसके 'साक्षात्कार' की साधना करता है, उसे 'ब्राह्मण' कहा जाने लगा। इस प्रकार समाज को प्रशिक्षण का दायित्व भी इसीने ग्रहण किया। फलतः शिक्षा देते और देवी देवता की पूजापाठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने वालों को पंडित और पुजारी कहा जाने लगा। पंडित का अर्थ, अधिक ज्ञानवान और पुजारी का अर्थ पूजा करने वाला। ये दोनों नाम भी मानव के काम के अनुरूप थे।

'वैश्य' वर्ण का उद्भव

इस प्रकार कुछ क्षेत्रों के मानव-समुदाय ने विशेष उन्नति कर ली और सभ्यता एवं संस्कृति की दिशा में काफी दूर तक आगे बढ़ गये। पर कुछ क्षेत्र ऐसे भी थे, जहाँ ज्ञान के प्रकाश की किरणें नहीं फैल पाई थीं और वहाँ के निवासी खान-पान, रहन-सहन; उत्पादन आदि दिशाओं में काफी पिछड़े हुए थे। इन पिछड़े हुए क्षेत्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति उन्नत क्षेत्रवाले मानवों के वर्ग द्वारा विधिवत की जाने लगी। यह वर्ग उन्नत क्षेत्रों में उत्पन्न वस्तुओं को पिछड़े क्षेत्र में पहुँचाने लगा और वहाँ प्राप्त होने वाली वस्तुओं को अपने यहाँ लाने लगा। उन्नत क्षेत्र में पैदा होने वाले मसाले एवं अनाज आदि वस्तुएँ लेकर यह वर्ग उन क्षेत्रों में जाता था, जहाँ उनकी माँग एवं आवश्यकता होती थी। वहाँ उन्हें देकर उनके बदले में वहाँ की विशिष्ट सामग्री दूसरे क्षेत्रों में लेकर यह वर्ग जाता था, और वहाँ उसे खपा कर वहाँ को खास-खास चीजें बदले में लेकर यह वर्ग अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता था। इस प्रकार लेन-देन का यह कार्य 'वस्तुविनिमय' के रूप में चलने लगा। इस कार्य को सम्पन्न करने में जिस वर्ग ने विशेष दिलचस्पी ली, उसे 'वैश्य' वर्ग की संज्ञा दी गई। 'वैश्य' का अर्थ है चीजों की अदला बदली करने वाला; अर्थात् एक चोज के बदले अपने जीवन-यापन की दृष्टि से अपना पारिश्रमिक लाभ (मुनाफा) के रूप में लेकर दूसरी चीज दे देने वाला। इस प्रकार मानव समाज की इस आवश्यकता ने 'वैश्य' वर्ग की सृष्टि की।

'शूद्र' श्रेणी का उदय

आदि मानव समाज की जनसंख्या धीरे धीरे बढ़ गई, तो अनेक समस्याओं के साथ सफाई तथा अन्य सेवाओं की आवश्यकता सामने आई। समाज में जो चिन्तन, मनन तथा ज्ञान के क्षेत्र में प्रवृत्ति से उन्मुख नहीं थे, जो समाज-रक्षा के कार्य में भी रुचि नहीं रखते थे, तथा जो वस्तु-विनियम के व्यवसाय में भी प्रवीण नहीं थे, उन्होंने सफाई तथा अन्य सेवाओं का कार्य स्वीकार कर लिया। यह वर्ग ऐसा था, जो किसी भी कार्य के लिए दूसरे के आदेश से प्रेरित होता था और अपनी इन सेवाओं के बदले में जीवन-यापन सामग्री अनाज, कपड़े आदि के रूप में प्राप्त करता था। इस वर्ग को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'शूद्र' संज्ञा से अभिहित किया गया । शूद्र का अर्थ निष्ठा-पूर्वक सेवा करने वाला होता है । इस वर्ग पर बस्ती तथा घरों की सफाई, खेती-कार्य में सहायता, घरेलू कार्यों में मदद तथा सामाजिक सेवाओं में योगदान का दायित्व था । उपर्युक्त ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्णों की सेवा में निरत रहना 'शूद्रों' का कर्तव्य माना गया ।

प्रवृत्ति-मूलक गुणकर्माधारित समाज-रचना

आदिमानवों की यह समाज-रचना नैसर्गिक, प्रवृत्ति-मूलक तथा कर्म-प्रधान थी । समाज में कुछ लोग सोचने समझने तथा ज्ञानार्जन का काम करने में प्रवृत्त होते हैं, कुछ लोगों की बुद्धि इतनी प्रखर नहीं होती; वे शरीर के बल-पौरुष के विकास पर विश्वास रखते हैं; फलतः वे शरीर के परिपोषण में तथा पराक्रम के खतर-नाक कार्य करने में प्रवृत्त होते हैं; कुछ लोगों की प्रवृत्ति लेन-देन की होती है; फलतः वे वस्तु-विनियम अथवा क्रय-विक्रय द्वारा समाज की सेवा में संलग्न होजाते हैं । कुछ लोगों से यह तीनों काम नहीं हो पाते । उनमें न बुद्धि-की प्रखरता होती है, न बल की और न वस्तुओं को इधर-उधर ले जाकर व्यवसाय करने की । वे सीधे-सादे, दूसरे के नेतृत्व एवं मार्ग-दर्शन में चलने के अभ्यासी होते हैं । फलतः वह अपनी सेवाओं द्वारा शेष समाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का हित करते हैं। इस प्रकार नैसर्गिक रूप से पाई जाने वाली इन चार प्रकार की प्रवृत्तियों ने समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णों का प्रकृत्या कार्य-विभाजन किया। वस्तुतः निसर्ग ने ही इन प्रवृत्तियों की सृष्टि की है; फलतः उपर्युक्त ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्णों का आविर्भाव प्रवृत्ति-मूलक एवं गुण-कर्माधारित ही है, जन्माधारित नहीं, जैसा कालान्तर में समाज में प्रचलित होगया।

भेदभाव-हीन समाज

इस प्रकार आदि मानव ने अपने जीवन-सम्बन्धी कार्यों को चार भागों में बाँट दिया। चारों प्रकार के काम करने वालों के अलग अलग उनके कामों के अनुरूप नामकरण भी कर दिए। परन्तु मानव-मानव में कभी कोई भेदभाव अथवा छुआछूत का प्रश्न ही नहीं पैदा हुआ। दिन में सब अपने अपने काम देखते, रात में सब एकत्र होकर एक साथ खाते-पीते, एक साथ बैठकर बातचीत करते, एक साथ नाच-गाना करते। मतलब यह कि किसी भी काम में आपस में कोई भेदभाव रखना वे जानते ही नहीं थे। भेदभाव पैदा करने अथवा मानव मानव में अलगाव पैदा करने के लिए उन्होंने कामों का बँटवारा किया भी नहीं था। उन्होंने तो सिर्फ मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और-मानव जीवन की सुविधा की दृष्टि से ही कामों का यह बँटवारा किया था। परन्तु समय के साथ साथ अलग अलग कार्यों के अनुसार अलग अलग जातियाँ बन गईं और जातियों के बीच में बहुत चौड़ी चौड़ी दरारें भी पड़ गईं। अब ब्राह्मण (पण्डित) के घर जन्म लेने वाला ब्राह्मण पण्डित कहलाता है, चाहे वह निपट अनपढ़, गँवार हो; वैश्य के घर पैदा होने वाला 'वैश्य' ही कहलाएगा, चाहे उसे व्यापार का 'क' 'ख' 'ग' भी न आता हो। शूद्र की औलाद 'शूद्र' ही कहलाएगा, चाहे वह ब्राह्मण से अधिक ज्ञानवान, प्रतिभासम्पन्न, सुसंस्कृत, सुशिक्षित और साफ-सुथरा हो। इस प्रकार जाति-पाँति का वर्तमान भेदभाव मानव-मन का केवल वहम है। वह एक कृत्रिम अहंभाव का पोषक है। मानवता के स्वस्थ विकास में इस प्रकार का बनावटी विभेद एक बहुत बड़ी बाधा है।

मुखिया का आविर्भाव

आदि काल में खेतीबाड़ी, जानवरों का शिकार, झोपड़े बनाना आदि सब काम मिलजुल कर होते थे। सभी पुरुष सभी कामों में सम्मिलित रहते, फिर उनका परस्पर बँटवारा कर लेते। इस तरह के बँटवारों में या औरत-सम्बन्धी बातों को लेकर झगड़े-झंझट भी कभी कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होजाया करते थे। मानव ने इन बातों के निपटाने के लिए, वस्ती के सबसे अधिक समझदार और सबसे अधिक शक्तिवान बुजुर्ग का चुनाव किया, जिसे मुखिया कहा जाने लगा। सभी झगड़े-झंझटों का निपटारा और शादी की रस्म मुखिया द्वारा सम्पन्न होने लगी। मुखिया का सभी आदर करते थे, सभी कहना मानते थे तथा उसके विरुद्ध किसीकी जाने की हिम्मत नहीं होती थी। मुखिया का अन्य लोगों की तरह ही रहन-सहन होता था और सबकी तरह ही वह खानपान करता था; अन्य लोगों की तरह ही उनके साथ मिल कर वह काम भी करता था; किसी बात में अन्य लोगों से उसमें कोई अन्तर नहीं होता था। इस प्रकार के मुखिया आज भी आदिवासी कबीलों में होते हैं। एक मुखिया के मर जाने पर फिर दूसरे मुखिया का चुनाव किया जाता है, जिसका पहले मुखिया से रिश्ते–नाते का कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं होता। यही मुखिया–प्रथा आगे चलकर राजा–महाराजा की जन्मदाता बनी; अन्ततः मुखिया प्रथा का एक वीभत्स और शोषक रूप बन गया।

तत्कालीन मान्यताएँ अब उपयोगी नहीं रहीं

जिस समय, जिस परिस्थिति में, आदि मानव ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी धार्मिक, सामाजिक, मान्यताएँ, प्रथाएँ एवं परम्पराएँ बनाई थीं, उस समय मानव के पास पहले का कोई मानदण्ड नहीं था। मानव बुद्धि तब तक पर्याप्त रूप से विकसित नहीं हो पाई थी, इसलिए उस समय आवश्यक सूझबूझ की कमी थी; शिक्षा-प्रणाली की वैज्ञानिक नियमित विधि प्रचलित नहीं थी; किसी भी बात को कार्य रूप में परिणत करने का कोई समुचित साधन नहीं था। आवागमन का भी साधन नहीं था, जिससे दूर-दूर के स्थानों में उपलब्ध ज्ञान प्राप्त करने में सारा समाज असमर्थ था।

ऐसी स्थिति में आदिम मानव ने उस समय अपनी सामयिक सूझबूझ के अनुसार परिस्थितियों से निपटने के लिए जो प्रथाएँ, परम्पराएँ, मान्यताएँ एवं विधि-नियम बनाये, वे उस समय के लिए अवश्य अनुकूल थे। पर आजकल की परिस्थितियों में, जब ज्ञान, विज्ञान, प्रविधि, सभ्यता, संस्कृति का समस्त विश्व में प्रचार-एवं प्रसार होगया है, दूर दूर के देश आवागमन की सुविधा के कारण एक दूसरे के बिलकुल निकट आगये हैं, और परस्पर सम्पर्क सम्बन्ध प्रगाढ़ होगया है, वे समस्त नियम-उपनियम, परम्पराएँ मान्यताएँ आदि उपयोगी नहीं होसकतीं। बढ़े हुए एवं विकसित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज की दृष्टि से उनमें सामयिक परिवतन आवश्यक होगये हैं।

आदिम काल में मानव भोलाभाला एवं शिक्षा-विहीन तो था ही; उस समय उसको गुरु रूप में ऐसे ही मानव मिले, जिन्होंने स्वार्थ पर विशेष दृष्टि रखी और उसीको आधार बनाकर शेष समाज को उसी राह पर चलाया। उनमें समष्टि के कल्याण की भावना इतनी अधिक नही थी, जितनी व्यष्टि के हित–साधन की। फलतः उस समय बनाए गये अधिकांश रीति-रिवाज आजकल की अपेक्षाओं के सर्वथा प्रतिकूल हैं। उस समय, यह ठीक है कि, आदि मानव ने जो कुछ किया था, उचित और दूरदर्शिता से ही किया था और अपनी अल्प बुद्धि का उसने अच्छे से अच्छा उपयोग किया था। इसलिए आदि मानव को दोषी नही माना जा सकता, क्योंकि इससे अधिक कुछ करने लायक उसकी परिस्थिति ही नहीं थी।

संसार में प्रचलित सभी देश व सभी जातियों में मानी जाने वाली प्रथाएँ आदि मानव द्वारा ही बनाई हुई हैं और सभी प्रथाएँ परिस्थिति-वश, सुविधानुसार, उस समय की आवश्यकता की पूर्ति के लिए निर्मित की गई थीं। बस्ती के मानव को जो कुछ भी समझ में आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसको प्रथा के रूप में अंगीकार कर लिया गया। वही प्रथा थोड़े बहुत परिवर्तन से पीढ़ी दर पीढ़ी अब तक चली आरही है और संसार के विभिन्न भागों में मानव-प्रसार के साथ साथ फैलती चली गई है। किसी क्षेत्र के लोगों को अन्य प्राणियों का शिकार करके पेट भरना बुरा लगा, अर्थात उनके मन में दयाभाव जागृत होगया, फलतः उन्होंने प्राणियों की हत्या बन्द करदी और साग, सब्जी अनाज फल-फूल खाकर वे अपना गुजारा करने लगे। पर कतिपय क्षेत्रों में भौगोलिक स्थिति तथा रुचि विशेष के कारण इसके विपरीत भावनाएँ बनी रहीं; फलस्वरूप उस क्षेत्र के निवासी मांसाहारी ही बने रहे। इसी तरह मृत्यु के बाद अन्तिम संस्कार के समय मानव शव को किसी क्षेत्र वालों ने जलाना ठीक समझा, तो किसी दूसरे क्षेत्र में शव को गड्ढा खोद कर उसमें गाड़ देना ही उचित माना। अधिक दयालु मानवों को मुर्दे को जैसा का तैसा छोड़ देना ठीक लगा, ताकि कुछ अन्य प्राणी मुर्दे का गोश्त खाकर अपना पेट भर लें। ये सभी प्रथाएँ संसार में आज भी ज्यों की त्यों चल रही हैं। इनमें से किसी भी प्रथा को मानने वाला मानव अन्यत्र जहाँ भी गया, अपने साथ साथ अपनी मान्यताओं एवं प्रथाओं को भी लेता गया। फलस्वरूप पृथ्वी पर इन प्रथाओं का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसारण व्यापक होता गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले मानव ने अपने मन-मुताबिक प्रथाएँ बना डालीं और उनके वंशज उसी परिपाटी पर इस समय भी करीब करीब उन्हीं प्रथाओं के अनुसार अपना जीवनयापन कर रहे हैं।

यह स्पष्ट है कि यद्यपि इन प्रथाओं का प्रचलन विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न रूपों में आज तक है; फिर भी इतना तो ठीक है ही कि वे सर्व काल के लिए समान रूप से सत्य नहीं हैं। अगर उनमें अन्तिम सत्य की वास्तविकता होती और शुद्ध सनातन शाश्वत होता, तो वे सर्वत्र एक समान ही गृहीत की जातीं और उनका रूप और आधार अलग अलग स्थानों में जुदा जुदा न होता।

आधुनिक आदर्शों की अपेक्षा

आदिम काल में जब उन प्रथाओं तथा मान्यताओं का जन्म हुआ था, तब मानव की विचारशक्ति परिपक्व नहीं हुई थी। वह अपनी शतशः मुसीबतों के बीच फँसा हुआ उनसे जूझ रहा था। अपने जीवन-निर्वाह तथा सुरक्षा के लिए उसे उस समय अथक परिश्रम करना पड़ता था। उस समय उसमें चिन्तन एवं मनन की प्रक्रिया भी नहीं उद्भूत हुई थी। ऐसी अवस्था में यह सोचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही गलत है कि उस समय मानव ने जिन जीवन-मूल्यों तथा आदर्शों को जन्म दिया, वे परम सत्य एवं विशुद्ध थे। उस समय के अग्रगन्ता पण्डित वर्ग ने अपनी अल्प विकसित बुद्धि से जिन नियम-उपनियमों को समाज के हित में प्रचलित किया, वे तत्कालीन स्थिति में भले ही उपयोगी सिद्ध हुए हों, पर अधुनिक समय के वे सर्वथा अनुपयुक्त हैं और उनमें पर्याप्त सुधार की अपेक्षा है।

आज का मानव अपने को सर्वगुण-सम्पन्न मानता है। विद्या, बुद्धि, धन व अन्य साधन पर्याप्त रूप में मानव के पास मौजूद हैं, फिर क्यों मानव पुरानी लकीरों को ही पीटता चला आरहा है ? क्यों पुरानी परिपाटी में वास्तविकता की खोज नहीं करता ? और क्यों उसमें नवीनीकरण नहीं करता ? आज के मानव से तो आदि मानव ही लाखों गुना अच्छा था, जिसने बिना बुद्धि, शिक्षा और साधनों के अपने समय के अनुकूल प्रथाएँ बनाईं और उन पर चल कर जीवन का सही आनन्द भी उठाया तथा अपनी मानसिक व शारीरिक शक्ति का कभी ह्रास नहीं होने दिया, और न कभी आत्मशान्ति से ही वञ्चित हुआ।

आज का मानव तो घर का रहा न घाट का, प्राचीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथाएँ कुछ छोड़ चुका है, कुछ पकड़े बैठा है। इस तरह आज का मानव आधा नया और आधा पुराना होकर अधर में लटक रहा है। नया कोई मार्ग बना नहीं पा रहा है। प्राचीन मार्ग पर चलने लायक उसमें सामर्थ्य नहीं है। दुविधा में फँस कर वह शारीरिक एवं मानसिक शक्तियाँ खो बैठा है और विचलित होकर उद्भ्रान्त की भाँति, उल्टे-सीधे कार्य कर रहा है, जिससे उसकी परेशानी एवं मुसीबतें और बढ़ती जारही हैं।

किसीको लाभ किसीको हानि

मानव ने प्रथाएँ स्वार्थ की सिद्धि के अनुसार ही बनाई हैं। प्रथा चाहे सामाजिक हो अथवा धार्मिक, इनसे कर्ता को भले ही फायदा पहुंचता हो, पर दूसरों को इनकी वजह से कष्ट भी पहुँचता है। जैसे झूठ बोलना संसार के मानव-समाज में वर्जित है; परन्तु जहाँ भी मानव का मतलब सिद्ध होता दिखाई देता है, वहाँ अगर झूठ बोलने से काम बनता है, तो मानव झूठ बोलने में कोई हिचक महसूस नहीं करेगा। जहाँ झूठ बोला जाता है, वहाँ किसी एक का अच्छा होता है, तो किसी दूसरे का बुरा भी होता है। इसी तरह चोरी करना पाप माना जाता है। मानव की जहाँ तक अभिलाषाएँ मन-मुताबिक चलती रहें, वहाँ तक ठीक है, पर जैसे ही उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वार्थ में कमी आई, वह किसी न किसी रूप में जनता की, सरकार की, अथवा अपने निजी रिश्ते–नातों की आँखों में धूल झोंकना शुरू कर देगा अथवा इनसे छिप कर कोई न कोई चोरी वाला काम करने में वह नहीं हिचकिचाएगा । मानव को धर्म, देवता एवं भगवान की तब याद आती है, जब वह किसी दैवी विपत्ति में फँस जाता है, लम्बी बीमारी से परेशान होजाता है अथवा किसी अनुचित अभिलाषा की पूर्ति की कामना करता है । मतलब यह कि जब किसी प्रकार से कोई आवश्यकता महसूस होती है, तभी धर्म और देवता याद आते हैं, वर्ना संसार की आपाधापी से मानव को फुर्सत ही कहाँ मिलती है । अपनी मनोकामना पूर्ति के लिए मानव भगवान को भी ठगने और प्रलोभन देने से नहीं चूकता । प्राचीन समय में दुश्मन के विनाश के लिए यज्ञ करने में धर्माचार्य और उसके कर्त्ता दोनों का ही स्वार्थ सधता था । धर्माचार्य को तो यज्ञ से मिलने वाले धन, दक्षिणा, खाने-पीने का सामान, वस्त्रादि का स्वार्थ होता था और कर्त्ता को अपने दुश्मन का नाश करने से आत्मशान्ति प्राप्त होती थी । इस प्रकार दुश्मन की वजह से जो काम बिगड़ा हुआ था, वह काम वन जाता था । इसके अलावा मानव स्वार्थ-सिद्धि के लिए धर्म की आड़ लेकर देवता-देवियों को सन्तुष्ट करने के लिए नर-बलि,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पशु-बलि जैसे कुकर्म भी कर डालता था। एक प्राणी की इच्छा-पूर्ति के लिए दूसरे कई प्राणियों की इच्छाओं को कुचल कर उन्हें संसार से विदा कर देना, धर्म कर्म कैसे कहा जा सकता है? इसी प्रकार मानव ने स्वार्थ-पूर्ति के लिए धर्म और देवताओं की आड़ लेकर ऐसे जघन्य और गर्हित कार्य किए हैं, जिन्हें धर्म के बजाय बड़े से बड़ा पाप कहने पर भी उन कार्यों की वीभत्सता कम नहीं होपाती।

धर्म के नाम पर लूट

धर्म के नाम पर धर्माचार्यों ने मानव को मनमाने ढंग से बेवकूफ बनाया है। इस पर भी मानव के मस्तिष्क में यह बात कभी नहीं आई कि जो कुछ धर्म के नाम पर बताया जारहा है अथवा किया जारहा है, क्या वास्तव में वह सब धर्म-कर्म कहलाने लायक है? मानव सहित सभी प्राणियों में आत्मा होती है। आत्मा परमात्मा का अंश होने की वजह से अजर अमर है। आत्मा न मर सकती है, न जल सकती है, न काटी जा सकती है; यह एक प्रकार की सूक्ष्मतम आकार-हीन परम शक्ति होती है, जो प्राणी में विद्यमान रहने के समय तक, प्राणी को जीवित रखती है। इसी आत्मा की तृप्ति के लिए मानव की मृत्यु के बाद धर्माचार्यों ने कितने आडम्बर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण कर्मकाण्ड मानव को बता रखे हैं, जिनसे धर्माचार्यों का स्वार्थ ही सिद्ध होपाता है। आत्मा तो पता नहीं कहाँ की कहाँ हवा में विलीन होकर पहुँच जाती है; फिर आत्मा तो सभी प्राणियों में होती है, मानव की आत्मा को ही तृप्ति की आवश्यकता क्यों हुई ? इसी प्रकार बच्चे के जन्म से लेकर शादी तक कई बार कई नामों से, संस्कारों के रूप में, आडम्बर रचे जाते हैं, जिनमें मानव या संतान का भला तो चाहे हो या न हो, धर्माचार्यों का भला तो हर संस्कार के कर्मकाण्ड में हो ही जाता है।

धर्म के नाम पर मानव का धन तो लुट ही रहा है, धर्म के नाम पर बहू-बेटियों की इज्जत भी लूटी जाती है। औरतों को तरह तरह के प्रलोभन देकर अपने ठिकाने पर बुला लिया जाता है और वहाँ उनकी इज्जत लूट ली जाती है। बड़े बड़े मठों के मठाधीश तो संसार के धनी से धनी पुरुष से भी अधिक ऐश्वर्य-पूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं; अनाप-शनाप सम्पत्ति के वे मालिक होते हैं और मठों में मानव-समाज की सभी प्रथाओं व मान्यताओं की खुले रूप में होली जलती रहती है। अब तो और बहुत से धूर्त गुण्डे धर्म की आड़ में नकली साधु का वेश धर कर बलात्कार और छल-प्रपञ्च और ठगने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की क्रियाओं का व्यूह-जाल रचते रहते हैं। ऐसी अवस्था में प्रचलित धर्म कर्म को व्यभिचार और ठगी का साधन कहना अधिक उपयुक्त होगा। यदि इस अवस्था में भी मानव समाज अब भी नहीं सँभला, अब भी असलियत जानने की चेष्टा नहीं की, तो कहना पड़ेगा कि मानव को व्यर्थ ही बुद्धि, विवेक तथा कर्तव्य-शक्ति का उद्‌बोध प्राप्त हुआ।

भारत में हिन्दू धर्म मानने वाले अपनी धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं, मान्यताओं, परम्पराओं के जन्मदाता वेद, शास्त्र, मनुस्मृति आदि पुस्तकों को मानते हैं तथा इन पुस्तकों में लिखे गए मन्त्रादिक को स्वयं भगवान् के मुख से निकले हुए समझते हैं। यह विश्वास भारतवर्ष के हिन्दू धर्मावलम्बियों के मस्तिष्क एवं हृदय में इस प्रकार बद्ध-मूल कर दिये गये हैं कि उनके विरुद्ध कोई हिन्दू एक शब्द भी सहने को तैयार नहीं होगा। फिर भी सच्चाई तो सच्चाई ही रहेगी, उछलने-कूदने से तो कोई हल निकलता नहीं। पहले लोग इन पुस्तकों को पढ़ें और देखें कि उनमें वास्तव में है क्या ? फिर यह सोचें कि मानव, पृथ्वी पर आने के हजारों साल बाद, जब पुस्तक लिखने-लायक शिक्षित होपाया था, तब उसने यह पुस्तकें लिखी होंगी, परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हजारों सालों के जीवन में मानव ने अनेकों प्रथाएँ, रीति-रिवाज भी बना डाले थे, जो मानव के पृथ्वी पर अवतरित होने के कुछ वर्षों के उपरान्त कायम होने शुरू होगए थे। पेड़ों पर रहते मानव ने अवश्य अन्य प्राणियों के समान बेढंगा जीवन बिताया था, परन्तु पृथ्वी पर आते ही मानव मस्तिष्क का विकास शुरू होगया था।

विचारणीय प्रश्न

अगर इन पुस्तकों के मन्त्र स्वयं भगवान् के मुख से निकले हुए हैं तो पहला प्रश्न यह पैदा होता है कि ये मन्त्र मानव के किस काल में भगवान् के मुख से निकले। शुरू शुरू में तो मानव बुद्धिमान और विचार-शील था ही नहीं, ताकि इन मन्त्रों को समझ कर वह कंठाग्र कर डालता। उस समय मानव लिखना भी नहीं जानता था, जो इनको लिख कर रख लेता। जब मानव स्वयं शिक्षित और विचारशील होकर इन मन्त्रों को लिखने अथवा कण्ठाग्र करने लायक हुआ, तब तक मानव अधिकांश प्रथाओं व रीति-रिवाजों का निर्माण भी कर चुका था। अतः उस समय भगवान् को कुछ कहने की आवश्यकता ही नहीं थी। इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि इन पुस्तकों को, शिक्षित होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद, मानव ने ही विकसित अवस्था में अपनी विचार-शक्ति के रूप में लिखा है। मानव का इन पुस्तकों को लिखने का ध्येय यह था कि बहुत-सी बस्तियाँ, जो अविकसित रह गई हैं, वे विकास की ओर अग्रसर होजाएँ और संसार के तमाम मानव एक-ही जैसे रीति-रिवाजों को मानना शुरू कर दें, ताकि मानव को अपने सामाजिक जीवन-निर्वाह में अधिक सुविधाएँ मिल सकें।

विद्वानों में मतभेद

उपर्युक्त धार्मिक ग्रन्थ अपनी जगह सब महत्वपूर्ण हैं और जिस समय लिखे गये थे, उस समय के लिए तो बहुत ही उपयोगी और महत्वपूर्ण रहे होंगे। उस समय भी मानव को मार्गदर्शन की अत्यन्त आवश्यकता थी, और इन ग्रंथों ने मानव-जीवन का मार्ग-दर्शन किया भी, इसमें कोई शक की बात नहीं। उस समय का मानव हर उस चीज को महत्वपूर्ण मानता था, जो उसके जीवन-मार्ग में आगे बढ़ने में सहायता करे, इसलिए मानव ने इन ग्रंथों को धार्मिक, पूजनीय और महत्वपूर्ण ग्रन्थ माने तो कोई आश्चर्यजनक बात नहीं। हिन्दुओं में सब धर्मग्रन्थों में वेदों को आदि मान्यता प्राप्त है। वेदों को अपौरुषेय माना जाता है। अर्थात्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें ईश्वरीय ज्ञान माना जाता है। वेदों को पढ़ने वाले और वेदों का अन्य भाषाओं में अनुवाद करने वाले विद्वानों में से, कोई भी वेदों के अर्थ के विषय में एक मत नहीं है। सभी विद्वान् अपने अपने विचारानुसार वेदों के मन्त्रों का भिन्न-भिन्न अर्थ निकालते हैं; ऐसी अवस्था में सर्वसाधारण के लिए वेदों का कौन-सा अर्थ ग्राह्य हो—यह समझ में नहीं आता। विद्वानों का यह कथन है कि संस्कृत के एक एक शब्द के कई-कई अर्थ निकलते हैं, अतः जिसके जैसा समझ में आता है वैसा ही वह उनके अर्थ निकालता है। जब विद्वान् एक मत नहीं हो पारहे हैं, तब कैसे पता चले कि वेदों की मूल-भावना क्या है ? जब वेदों का अवतरण मानव-समाज के बीच हुआ, तब उस समय की स्थिति को देखकर जो बात वेदों में अंकित हुई, उसका यथार्थ ज्ञान आज प्राप्त करना कठिन है। आश्चर्य की बात यह है कि जिस चीज के सिर-पैर का ही पता नहीं, उस चीज का महत्व आधुनिक जन-जीवन में कैसे स्थापित होसकता है ? धर्माचार्यों तथा मठाधीशों द्वारा किया गया प्रचार भी वेदों के यथार्थ बोध में बाधक है।

धर्मग्रन्थों में जगह-जगह अग्नि, वायु, वरुण, इन्द्र, पृथ्वी आदि को देवता माना गया है। क्या ये सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान से भी बड़े और महत्वपूर्ण हैं, जिनका गुणगान किया गया है ? क्या अग्नि, वायु, पृथ्वी आदि जड़-पदार्थों को देवता मानना, आदि मानव की भोलापन और अविकसित अवस्था को नहीं प्रकट करता ? वस्तुतः आदिम युग में मानव के पास बोलचाल की भाषा और बुद्धि पूर्णतया अविकसित थी। ऐसी अवस्था में उस काल मे बड़े-बड़े ग्रन्थों की रचना सम्भव ही नहीं थी। इसके अलावा आदि काल में यदि इन धार्मिक ग्रन्थों की रचना की गई होती तो आज पूरे संसार की धार्मिक व सामाजिक प्रथाएँ भी इन ग्रन्थों के अनुसार पूरे संसार में एक समान ही होतीं।

देवताओं की मान्यता !

देवता उसे माना जा सकता है, जो अपनी पूजा, आराधना के बदले में, बिना परिश्रम किए, मानव की इच्छा–पूर्ति कर दे। आज के वैज्ञानिक युग में अनेकों ऐसे कल-कारखाने, उद्योग, यन्त्र व व्यवसाय आदि प्रचलित हैं, जिनसे मानव का जीवन आराम से, बिना परिश्रम किये ही, व्यतीत होजाता है। ऐसी अवस्था में जब इस तकनीकी अभियान्त्रिकी की मदद से मानव-श्रम की बचत होजाती है, तब इन सब प्रविधियों-यन्त्रों आदि को भी देवता माना जाना चाहिए। इस वैज्ञा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निक युग में तो ऐसे ऐसे बिजली के उपकरण तैयार हो चुके हैं, जो बिना परिश्रम, बटन दबाते ही, मानव की बहुत सी इच्छाओं की पूर्ति कर देते हैं। इस प्रकार इन बिजली के उपकरणों की श्रेणी तो देवताओं से भी ऊपर चली जाती है। पर अग्नि, वायु, पृथ्वी और जल प्रकृति के वे तत्व मात्र हैं, जो सृष्टि के परिपोषण, परिवर्धन एवं अभिरक्षण में सहायता पहुँचाते हैं। वे वैज्ञानिक अनुसन्धान के आधार अवश्य हैं, पर उन्हें सृष्टि के पूर्ण सञ्चालक व नियामक का उच्चासन नहीं प्रदान किया जासकता, और न उन्हें देवी-देवता की श्रेणी में ही परिगणित किया जा सकता है।

धर्मग्रन्थों का जबानी महत्व

हिन्दू धर्मानुयायियों ने वेदों तथा धर्मिक ग्रन्थों को अत्यन्त महत्व दिया है। पर हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों के मर्म के ज्ञाता न हिन्दुओं में मिलेंगे, न अन्य जातियों में। इन ग्रन्थों में बताए हुए मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति भी दुर्लभ हैं। सत्य तो यह है कि पञ्चानबे प्रतिशत हिन्दू परिवारों में इनमें से कोई ग्रन्थ नहीं मिलेगा। धर्माचार्यों द्वारा प्रसारित अन्धविश्वास के कारण इन ग्रन्थों की व्याख्या सुनने मात्र से ही श्रोतागण अपने आपको स्वर्ग का अधिकारी मान बैठते हैं। ग्रन्थों में जो शिक्षाएँ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आचरण, व्यवहार-सम्बन्धी बातें लिखी हैं, उन पर अमल करने की वे कोई आवश्यकता नहीं समझते; इसलिए हिन्दुओं में भी सिर्फ जवान से कहने भर का महत्व धार्मिक ग्रन्थों का है। जब स्वयं हिन्दू अपने धार्मिक ग्रन्थों का सम्मान इस प्रकार हलके मन के साथ करते हैं, तो सोचने की बात यह है कि वास्तव में इन ग्रन्थों का महत्व किस प्रकार प्रभाव पूर्ण होसकता है।

हिन्दू धर्म है क्या ?

धार्मिक सम्प्रदायों में जितनी भेड़ियाधसान हिन्दू धर्म में है, इतनी शायद ही और किसी सम्प्रदाय में हो। प्रथम तो हिन्दू धर्म के नाम से कई एक सम्प्रदाय चल रहे हैं, इसलिए यह पता लगना ही कठिन होजाता है कि हिन्दू धर्म वास्तव में है क्या? सनातन धर्म, जैन धर्म, बौद्ध धर्म, आर्य धर्म, राधास्वामी धर्म, प्रणामी धर्म आदि के अनुगामी अनेकों सम्प्रदाय हैं, जिनके इष्ट देवता तथापूजा-अर्चन-विधियाँ भी अलग अलग हैं। इतना ही नहीं, उनके धार्मिक ग्रन्थ भी अलग अलग हैं। फिर भी वे सभी हिन्दू धर्मावलम्बी ही कहलाते हैं। ऐसी अवस्था में यह पता ही नहीं चल सकता कि वास्तव में सही हिन्दू धर्म कौनसा है? सभी धार्मिक सम्प्रदाय अपने धर्म को दूसरों से अधिक महत्वपूर्ण और अधिक अच्छा बतलाते हैं। इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धार्मिक सम्प्रदायों की अधिकता से धर्म एक प्रकार से दूकानदारी होगई है। सभी सम्प्रदाय अपनी अपनी दूकानें लगाकर बैठ गए हैं और वे दूसरे दूकानदारों से अपने माल को बढ़िया, असली एवं औरों से अच्छा बताते हैं। आजकल के धर्म की भी यही परिपाटी है।

किसी एक ही देवता को एक ही प्रकार की पूजा-पद्धति से माना जाए तो मानव को उसके प्रति श्रद्धा व विश्वास होसकता है, किन्तु इतने अलग अलग सम्प्रदाय तो मानव में धार्मिक भावना जगाने के बजाय, मनमुटाव एवं मनोमालिन्य की भावना पैदा करते हैं, क्योंकि एक सम्प्रदाय दूसरे को हेय दृष्टि से देखता है। इस प्रकार यह धार्मिक विद्वेषपूर्ण घृणा समाज में बढ़ कर उसे विश्रृ-ङ्खलित तथा तोड़ती रहती है। धर्मों के विद्यार्थी तथा जिज्ञासु प्रयत्न करने के बावजूद यह नहीं समझ पाते कि कौन सा सम्प्रदाय अधिक अच्छा एवं समाज-हितकारी है।

सनातन धर्म की कमजोरी

हिन्दुओं में सनातन धर्मानुयायी सबसे अधिक संख्या में हैं और आदि मानव द्वारा प्रचलित किये जाने के कारण यह सबसे प्राचीन भी है। परन्तु यह धर्म मानव के उस काल में बना है जब मानव की बुद्धि,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार-शक्ति एवं कल्पना सर्वथा अविकसित अवस्था में थीं; उसमें वैज्ञानिक विवेचन की कोई क्षमता नहीं थी। उस समय के धर्माचार्यों ने अपने अपरिपक्व ज्ञान से जो भी धार्मिक व्यवस्थाएँ निर्मित कीं, उनमें पाखंड एवं अन्धविश्वास अपने आप प्रविष्ट होगया। फलतः आज धर्म मानव-जीवन से बहिष्कृत होता जारहा है। हमारे प्राचीनतम सनातन धर्म की सबसे बड़ी कमजोरी है छुआछूत। शूद्र वर्ण अथवा हरिजनों से, उनके कर्मणा गुणी श्रद्धावान तथा विद्वान् होने के बावज़ूद जितनी घृणा उच्चवर्णीय सनातन धर्मी करते हैं, उतनी अधिक और कोई धर्मावलम्बी नहीं करता। वस्तुतः यह छुआ-छूत का भाव आदि मानव में कतई नहीं था। यह मानव के सभ्यता काल की देन है। मानव जाति में जन्मतः ब्राह्मण को रूप-गुणहीन होने के बावजूद अधिक महत्व देना अथवा पूजनीय बताना—सनातन धर्म की दूसरी कमजोरी है। सनातन धर्म की तीसरी कमजोरी यह है कि इस धर्म के धर्माचार्यों ने मानव का मार्ग-निर्देशन करने की अपेक्षा मानव को गुमराह अधिक किया अथवा मानव को ऐसे अन्धविश्वास और कुरीतियों से परिचित कराया, जिनसे मानव का कोई भला नहीं होता। चौथी कमजोरी यह है कि सनातन धर्म ने दान-दक्षिणा का जो रिवाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाया, उसका स्वरूप ठग विद्या जैसा प्रतीत होता है। इस प्रकार और भी बहुत सी ऐसी कमजोरियाँ इस धर्म में हैं जो स्वयं ही धर्म का भक्षण कर रही हैं, और धर्माचार्यों की जड़ें हिला रही हैं।

वासना का प्रतिरूप

सनातन धर्मावलम्बियों की पूजा-विधि और देवताओं के नाम पर खुले रूप में यौन क्रियाओं का प्रदर्शन उनके भीतर जमी हुई वासना का ही प्रतिरूप है। वैसे भारत में यौन क्रियाओं का प्रदर्शन तो क्या, यौन-सम्बन्धी बातें करना भी संस्कृति के विरुद्ध समझा जाता है। फिर मन्दिरों में यौन-क्रिया में लीन मानव-दृश्य दिखलाना कहाँ तक उचित माना जा सकता है? इन मन्दिरों में हर जाति, हर वर्ग के औरत, मर्द, बच्चे, युवक-युवतियाँ धार्मिक भावनाएँ लेकर और देवता का पवित्र स्थान मान कर जाते हैं। विशेषतया ऐसे दृश्य जगन्नाथ जी के मन्दिर-पुरी, (उड़ीसा) में स्थित कोणार्क मन्दिर और खजुराहो के मन्दिरों (उतर प्रदेश) में देखे जा सकते हैं। इस प्रकार के लज्जाजनक दृश्य, भले घरों की बहू-बेटियों के साथ जाने वाला परिवार देख कर क्या अनुभव करता होगा और कैसे वे लोग एकत्र होकर इन दृश्यों को देख पाते होंगे? इसके अलावा शिवलिंग की पूजा करीब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करीब सभी भारतवासी करते हैं। शिवलिंग का रूप शिवपार्वती की भोगक्रिया का प्रदर्शन मात्र है। क्या शिव जी की पूजा को इस रूप में किया जाना समीचीन है? क्या शिव-पार्वती के और अंग पूजने लायक नहीं थे? क्या कोई देवता ऐसा निर्लज्ज होसकता है जो अपने ऐसे रूप को पूजने की आज्ञा दे? अगर स्वयं देवता ने अपने को इस रूप में पूजे जाने की प्रेरणा दी है, तो फिर ऐसे दृश्यों को लज्जाजनक और आचरण-हीनता का प्रतीक भी नहीं मानना चाहिए?

भगवान कृष्ण की रासलीला

श्रीकृष्ण जी भगवान के पूर्ण अवतार माने जाते हैं और पूरा भारत उन्हें पूजता भी है। भारतीय संस्कृति के अनुसार खुले रूप में परायी औरतों के साथ रंग-रेलियाँ मनाना बहुत ही नीचता और लज्जा का काम माना जाता है। भारत में एक से अधिक औरतों से शादी करना भी अनैतिक माना जाता है। परन्तु श्रीकृष्ण जी के सोलह हजार रानियाँ भी थीं। गोकुल की गोपियों के साथ श्रीकृष्ण का स्वच्छन्द एवं उच्छृङ्खल बिहार रास-क्रीड़ा के रूप में प्रसिद्ध है। क्या यह सब बातें भारत में भगवान के रूप में माने जाने वाले अवतार के लिए उचित हैं? भगवान कृष्ण के इस आचरण का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुकरण अगर मानव करता है, तो क्या आश्चर्य है। भगवान कृष्ण के क्रिया-कलापों से शिक्षा लेने एवं तदनुकूल आचरण करने की प्रेरणा तो हमें मिलती ही रहती है।

जगह जगह शहर एवं कस्बों में श्रीकृष्णलीला दिखाई जाती है। उसमें कृष्ण जी के गोपियों के साथ उत्तेजक हावभाव-पूर्ण नृत्य तथा स्वच्छन्द प्रणय-दृश्य तो दिखाए ही जाते हैं, जो अश्लीलता की कोटि तक पहुँच जाते हैं। क्या इनसे मानव-मन पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता ?

देवताओं की विचित्र लीला

देवताओं की कथा भी बड़ी विचित्र है; वे किसी भी सत्यवादी की दृढ़ता, तपस्वी की अटूट निष्ठा, पतिव्रता का अखण्ड पति–प्रेम तथा कर्तव्यशील व्यक्ति की कर्मयोग-साधना देखकर काँप उठते हैं। वे झटपट उसकी परीक्षा लेने के लिए तुल जाते हैं। सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र की परीक्षा उन्होंने ली; ऋषि विश्वामित्र का तपोभङ्ग उन्होंने कराया; राजा शिवि की दानशीलता का अत्यन्त क्रूर परीक्षण उन्होंने किया; पति को निरन्तर भगवान की तरह पूजने वाली सती अनुसूया की उन्होंने कठोर परीक्षा ली और उसे अपने व्रत से डिगा कर पथ-भ्रष्ट करने की चातुर्य-पूर्ण असफल चेष्टा की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, कर्तव्यपरायणता एवं सदाचरण से ईर्ष्या करने वालों को देवत्व की पूजनीय श्रेणी प्रदान करना भी सहज मूर्खता है।

देवता निहित-स्वार्थ-कल्पना-मात्र

अगर कोई सद्कार्य करता है, तो उसकी सराहना होनी चाहिए; उसका समादर होना चाहिए और उसे प्रोत्साहन मिलना चाहिए; पर होता यह है, कि देवगण तथा सुरेन्द्र इन्द्र ही मानव के तपश्चरण से भयभीत एवं आतङ्कित होकर से सन्मार्ग से विचलित करने पर तुल जाते हैं, इस तरह तो वे देवत्व के समुच्च पद से स्वयं ही पतित होजाते हैं। इससे तो यही स्पष्ट होता है कि देवयोनि अत्यन्त दुर्बल कोटि की होती है और उनका आन्तरिक स्वरूप निम्न एवं हेय होता है। जो देवता पतिव्रता स्त्री-शक्ति से त्रस्त होसकते हैं, उनमें किसी प्रकार की आत्मशक्ति का होना सन्दिग्ध ही है। फलतः वे किसी प्रकार भी पूजा-योग्य नहीं माने जाने चाहिए। इसका एक फलितार्थ यह भी होता है कि हमारे धर्माचार्यों ने देवताओं के जिन प्रतीकों को समाज में प्रतिष्ठित किया है, वे सब मिथ्या एवं पाखण्ड-पूर्ण हैं। वे केवल मठाधीशों की निहित स्वार्थी कल्पना मात्र हैं। उनका यथार्थ अस्तित्व है ही नहीं। ऐसे कपोल कल्पित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवताओं से मानव का उत्कर्ष कैसे होसकता है !

सम्प्रदायों की विद्वेषी भीड़ से एकता का विनाश

भारतवर्ष में जब जब धर्म के नाम पर बुराइयों, कुरीतियों, वाममार्गी भैरवी चक्रों, मिथ्या कर्म-काण्डों, दुराचारों, अनैतिक स्वैराचारों, वलि प्रथा आदि का उन्मुक्त प्रचार-प्रसार हुआ है, तव तब किसी न किसी नये धर्म-प्रवर्तक का आविर्भाव हुआ है। सामाजिक विषमता, निहित स्वार्थी अहम्मन्यता, सामन्तवादी लिप्सा एवं शुद्ध तथा सत्य धर्म की अवमानना ने जब जब पृथ्वी को प्रताड़ित, लाञ्छित तथा दुर्वह भारवाही बनाया है, तव तब किसी न किसी महापुरुष, महात्मा, तपोनिष्ठ साधक अथवा अवतार-पुरुष का उद्भव हुआ है और उसने अपने वलपराक्रम, ज्ञान-प्रतिभा राजनैतिक दाक्षिण्य तथा असाधारण पुरुषार्थ द्वारा मानवता का उद्धार किया है। पर उसके तिरोभाव के बाद हुआ यही है कि उसके अनुगामियों ने उसके नाम पर नये सम्प्रदाय की सृष्टि कर समाज में उसके ही महत्व को अग्रसर किया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि जितने ऐसे महा पुरुष अथवा अवतार हुए हैं, उतने ही सम्प्रदाय बन गये हैं और ये सम्प्रदाय परस्पर विद्वेषी, प्रतियोगी तथा एक दूसरे के आलोचक बन गये हैं। इसीसे विभिन्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मत-मतान्तरों ने हमारे समाज की आधारभूत एकता नष्ट की है और उसे खोखला बना दिया है। हिन्दुओं को उसके जातिवाद ने ही एक ओर तोड़ कर रखदिया है, वहाँ दूसरी तरफ निर्गुण, सगुण, द्वैत, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, कबीरपन्थी, गोरखपन्थी, राधास्वामी जैसे अनेक पूजा-उपासना के विचारभेदों ने समाज की अन्तर्निहित शक्ति को खण्डित कर दिया है। हिन्दू, बौद्ध, जैन, सिख, मुसलमान, ईसाई, फारसी आदि बड़े बड़े सम्प्रदाय पहले ही मानवता को विभक्त किये हुए थे; उनके भीतर के अवान्तर भेदों ने और भी सृष्टि को खण्ड खण्ड करके रख दिया है, जिसका दुष्प्रभाव पीढ़ी दर पीढ़ी बढ़ता ही जारहा है। साम्प्रदायिक संघर्ष, दंगे, धार्मिक विवाद एवं मनोमालिन्य ईर्ष्या, द्वेष, परस्पर घृणा आदि दुष्ट भावनाओं से सारा समाज छिन्न-भिन्न होता जारहा है।

इसमें शक नहीं कि आपस की 'तू तू मैं मैं' से धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचती है और जनसाधारण का धर्म पर विश्वास विचलित होजाता है। किसी भी महापुरुष अथवा अवतार ने कोई ऐसा धार्मिक सम्प्रदाय नहीं पैदा किया जिसकी विशेषताओं को देख कर संसार के मानव उसकी तरफ अपने आप खिचते चले आएं और पूरा संसार एक परिवार की तरह एक धागे में बँध जाए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल्कि अभी तक प्रचलित धार्मिक सम्प्रदायों को देखते हुए तो मानव में फूट के बीज ही अंकुरित हुए है, जिससे मानव-एकता भंग हुई है। महात्मा बुद्ध आए–बौद्ध धर्म बनाकर चले गए; तीर्थंकर महावीर जी आए–जैन धर्म बनाकर चले गए; स्वामी दयानन्द आए–आर्य समाज सम्प्रदाय बना डाला; रामचन्द्रजी, श्री कृष्णजी, हनुमान जी के अनुयायी–सनातनधर्मी वैष्णव कहलाने लगे। शक्ति के उपासक शाक्तों का सम्प्रदाय बना; शिव के उपासक शैवों का समुदाय बना; तन्त्राधारित तान्त्रिकों ने अपना प्रभाव बढ़ाया एवं चमत्कारों की सृष्टि की। इसका मतलब तो यह हुआ कि धर्म-प्रवर्तकों के विचारों में यथार्थ और वास्तविकता की कमी थी, जिसकी वजह से पूरे संसार का मानव उनकी ओर आकर्षित न होकर टुकड़ों टुकड़ों में बँट गया और गुरुडम के चक्र-जाल में ग्रस्त होगया। अगर इन महापुरुषों में से किसी एक के भी विचारों में पूर्णता और ठोस यथार्थ होता तो कोई कारण नहीं था कि पूरा संसार उसके विचारों का एक चित्त, मन तथा हृदय से उसका अनुगामी न बन जाता।

परिवर्तित समय के अनुसार धर्माचार्यों को आज के मानव के प्रश्नों का उत्तर देने के लिए अपने आपको तैयार रखना चाहिए। धर्माचार्यों से मानव, हर धार्मिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथा का यथार्थ रूप जानना चाहेगा और धर्माचार्य अगर मानव को सन्तोषजनक उत्तर न दे पाए तो संसार में धर्माचार्यों के साथ-साथ धर्म-कर्म का महत्व भी यथा-सम्भव शीघ्र ही नष्ट होजायेगा।

मानव का श्रेष्ठत्व

यह कितने आश्चर्य की बात है कि देवता कोई भी अनुचित काम, यौन-क्रिया, मदिरा पान, नरबलि, पशु-बलि, यज्ञ में मांस की आहुति द्वारा मांस-भक्षण, परस्त्री सम्भोग, अप्सराओं के साथ उन्मुक्त विहार आदि सब कुछ कर सकते हैं; सब कुछ उनके लिए उचित ठहराया गया। पर उनके प्रति पूज्य भाव एवं श्रद्धा भक्ति रखने वाले मानवों के लिए यह सब अनुचित माना गया। देवता का तो आचरण मानव से बहुत ऊँचा होना चाहिए, तभी वे देवता कहलाने के अधिकारी हो सकते हैं और भक्त मानवों द्वारा पूजन अर्चन के पात्र होसकते हैं। ऐसे देवताओं से तो मानव ही ऊँचा है, जो कुछ तो लोक-लज्जा का ध्यान रखता है और अपना आहार व आचरण मर्यादा से बाहर नहीं जाने देता।

उपर्युक्त विवरणों से यह बात स्पष्टतया प्रमाणित होजाती है कि हमारी धार्मिक प्रथाएँ और सामाजिक मान्यताएँ एवं परम्पराएँ, आधुनिक समय के तकाजे के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुकूल नहीं हैं। इसके साथ साथ यह भी प्रमाणित होजाता है कि आदि काल में पूरे संसार का मानव एक था; एक ही प्रकार की परिस्थिति में रह कर उसे अपने जीवन-मार्ग का संयोजन करना पड़ता था। प्राक् ऐतिहासिक काल में आदि मानव को जीवन आगे बढ़ाने के लिए कई भयानक एवं खतरनाक स्थितियां को पार करना पड़ा और हर अवस्था को पार करने में उसे अपने बुद्धि-बल का सहारा मिला और अनेक दैहिक, दैविक तथा भौतिक विपत्तियों के निवारणार्थ उसने अज्ञात दैवी शक्तियों की आराधना प्रारम्भ की। मानव ने अपनी सुविधा व परिस्थिति के अनुकूल, समय समय पर भाषा, लिपि, मान्यताएँ, प्रथाएँ बनाईं, और जैसे जैसे विकसित होकर मानव पृथ्वी पर फैलने लगा, वैसे वैसे उसके द्वारा बनाई गई मान्यताएँ, प्रथाएँ तथा ज्ञान-विज्ञान की गरिमा भी सर्वत्र फैलती गई। जो मानव पृथ्वी के गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों में रहने लगे, वे कुछ काले रंग के होगये और जो पृथ्वी के शीतल जलवायु वाले क्षेत्रों में पहुँचे, वे गोरे रंग के ही रहे। इसी प्रकार बस्तियों से कस्बे बने, कस्बों से शहर और फिर कई कई शहर जनसंख्या-वृद्धि के साथ साथ बसते गए। तदुपरान्त अलग अलग नामों से अलग अलग मुल्क बन गए। जिनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस प्रकार की भाषा, लिपि, प्रथा, मान्यता वाले पुरुष पहुँचे, उसी प्रकार की बातों का प्रचलन वहाँ होगया ।

संसार में आज हम जो धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक तथा भौतिक विभिन्नताएँ देख रहे हैं और रहन सहन, भाषा, लिपि, रीति-रिवाज में जो अन्तर दृष्टिगोचर होरहा है, वह सब आदि मानव के विविध एवं विभिन्न परिवेशों, पर्यावरण तथा जलवायु के कारण स्वीकृत जीवन-पद्धति के कारण है ।

आदिमयुग में सर्वत्र व्याप्त अनभिज्ञता अथवा आदि मानव की परिस्थिति की जटिलता का ही यह परिणाम है । क्योंकि आदि मानव मजबूर था, उसके पास किसी से सलाह करने, विचार करने, सोचने समझने लायक बुद्धि, भाषा, आवागमन के साधन आदि कुछ भी तो नहीं था । जो मानव समूह जहाँ बैठा था, उसको उल्टा-पल्टा जो कुछ समझ में आया वही प्रथा बन गई, जो बाद में उसके वंशजों की सामाजिक मान्यता बनगई, धर्म-सम्बन्धी बातें धार्मिक प्रथाएँ बन गई । अगर मानव की उस समय अपनी मानसिक शक्तियाँ जागृत होतीं और मानव के पास कुछ साधन भी होते, तो आज पूरे संसार में एक समान प्रथाएँ, मान्यताएँ प्रचलित होतीं; प्रथाओं और मान्यताओं में इतनी भिन्नता नहीं होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितनी आज संसार के अलग अलग क्षेत्रों के अलग अलग वासियों में एक दूसरी प्रथा के पूर्णतया विपरीत दिखलाई दे रही हैं।

जिस क्षेत्र के मानव ने जो कुछ अपने बुजुर्गों को मानते देखा अथवा जो कुछ बुजुर्गों से जानकारी मिली, उसीके अनुसार वहाँ के निवासियों ने जीवन-यापन करना शुरू कर दिया। उस समय मानव ने उचित अनुचित, कर्तव्याकर्तव्य पर अधिक विचार ही नहीं किया, क्योंकि जीवन-गाड़ी तो किसी न किसी तरह चलानी ही थी। आज हालत यह है कि समाज उस मानव को बुरा समझता है जो प्रथाओं के उचित अनुचित के आधार पर उनमें हेर फेर के विषय में सोचता है? क्योंकि मानव लाखों सालों से चलती आ रही प्रणालियों के विषय में ही देखता, सुनता आरहा है, इसलिए उन प्रणालियों के विरुद्ध सोचने व कुछ करने वाला उसको अवश्य अटपटा-सा काम करने वाला महसूस होगा; अतः वह बुरा भी लगेगा। किसी भी एक क्षेत्र के निवासियों की प्रथाओं में अगर वास्तविकता या यथार्थ होता तो संसार के अन्य क्षेत्रों के निवासी उसकी ओर स्वतः आकर्षित होजाते। परन्तु ऐसा तो नहीं है, संसार-वासी सभी अपनी प्राचीन प्रथाओं के अनुसार ही चल रहे हैं। इसका मतलब स्पष्ट यही होता कि सब मानव बुजुर्गों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसरण को ही महत्व देते हैं। वास्तविकता अथवा तथ्य खोजने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं समझते पर अब समय पलट रहा है और आज का मानव वास्तविकता और तथ्यों को अधिक महत्व देरहा है और बहुत शीघ्र ही प्राचीन प्रथाओं, मान्यताओं का अन्त भी होने वाला है। आशा है नई प्रथाएँ वास्तविकता के आधारपर ही बनेंगी। आज के युग की यही माँग भी है।

विचार—जो अन्धविश्वास बन गये

ऊपर हमने बताया है कि आदिमानव को सबसे अधिक गुमराह करने वाले कुछ प्रखर बुद्धि वाले पुरुष ही थे, जो आगे चलकर धर्माचार्य कहलाने लगे। पुरुष मन्द बुद्धि और तीव्र बुद्धि वाले तो होते ही आए हैं। तीव्र तथा सूक्ष्म बुद्धिवालों ने उस समय की मानव की अनभिज्ञता का लाभ उठा कर, मानव जाति में कुछ ऐसे विचार भर दिये, जो अन्ततः अन्धविश्वास के रूप में बदल गये और जो समय के साथ आगे न बढ़ सकने के कारण प्रतिगामी रूढ़ियों के रूप में प्रचलित होगये। उन्हीं विचारों से युक्त पुस्तकें भी छपने लगीं। चारों ओर से एक ही प्रकार के विचारों का प्रसार होने लगा, तो मानव-मन में उन्हीं विचारों ने दृढ़ता से अधिकार जमा लिया और फिर लाखों सालों तक उन्हीं विचारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एक पर एक तह जमती चली गई, जिससे उन विचारों के विरुद्ध किसी भी धार्मिक अथवा सामाजिक प्रथा का उल्लंघन करना तो दूर की बात है, सोचना भी मानव जाति के लिए असह्य होगया। वर्ना सही मानी में मानव की धार्मिक सामाजिक प्रथाओं का विश्लेषण करने पर उनमें कोई तथ्य नहीं मिलेगा।

आदिम युग के करोड़ों सालों बाद संसार का यह रूप बन पाया है, जो आज हम प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देख रहे हैं। आदिकाल में मानव ने आडम्बर एवं प्रदर्शन करना नहीं सीखा था। संसार भी इतना चमक-दमक वाला और इतना विस्तृत नहीं था। मानव जीवन को सुख पहुँचाने वाला आधुनिक कोई साधन भी नहीं था, परन्तु फिर भी आदि मानव आज के मानव से बहुत अधिक सुखशान्ति का अनुभव करता था। आज सर्वत्र फैली हुई अशान्ति का एक मात्र कारण यह है कि मानव जाति की सभी प्रथाएँ दोष-युक्त हैं, जो मानव ने प्रखर बुद्धि व चालाक किस्म के पुरुषों के बहकावे में आकर बना डालीं। जब तक मानव प्रथाओं के बन्धन में नहीं था अथवा प्रथाएँ हल्के रूप में प्रचलित हो पाई थीं, तब तक मानव सुखी था और जैसे जैसे यह बन्धनों में अपने आपको बांधता गया, वैसे वैसे परेशानी और मुसीबतों को भी आमन्त्रित करता गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि का उचित प्रयोग नहीं हुआ

उपर्युक्त तथ्यों से यह प्रमाणित होजाता है कि मानव ने पूर्ण विकसित होने के बाद भी, अपने जीवन-मार्ग को सरल बनाने के दिशा में कोई बुद्धिमानी का काम नहीं किया। आज भी संसार में प्राचीन प्रथाएँ थोड़े परिवर्तन व हेर-फेर से चल रही हैं। आज भी मानव अन्ध-विश्वास और कुरीतियों से भरा हुआ है। अगर मानव बुद्धि का उचित प्रयोग हुआ होता, प्रथाओं और मान्यताओं में सुधार हुआ होता, तो आज का मानव और अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए इतना उत्सुक नहीं होता, और प्राप्त की जा चुकी जानकारियों से मानव का जीवन-मार्ग उलझने के बजाय सुलझ गया होता।

आत्मा ही सर्वोपरि है

आदि काल से ही मानव को धर्म-पाप के जाल में फँसाकर भरमा दिया गया है। धर्म-पाप नाम की संसार में कोई वस्तु नहीं होती; मानव की भलाई व इच्छापूर्ति मानव के आत्मविश्वास पर निर्भर करती हैं। सब प्राणियों में आत्मा के रूप में परमात्मा का निवास होता है; आत्मा परमात्मा का ही अंश है; इस वजह से आत्मविश्वास ही मानव के लिए सब देवी-देवताओं से बढ़ चढ़ कर है। मानव को आत्मा की गवाही मिलने वाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम ही करने चाहिए, आत्मा की मनाही वाले काम नहीं करने चाहिए। किसी भी प्रकार के बुरे कर्म करते समय आत्मा हमेशा मनाही करती है; मानव मूर्खतावश आत्मा का कहना न माने तो आत्मा का क्या दोष ? अतः देवी-देवता, भगवान आदि सब कुछ मानव के लिए मानव की आत्मा है। शेष सब प्रथाएँ, मान्यताएँ मन-गढ़न्त और निराधार ही हैं। मानव ने स्वार्थ-पूर्ति के लिए ही अधिकांश परम्पराओं का प्रचलन किया है; अतः मानव को अपने आत्मचिन्तन से वास्तविकता और यथार्थ जान कर, प्रथाओं में नवीनीकरण करना चाहिए, जिससे मानव जाति का कल्याण होसके और करोड़ों सालों से भटका हुआ मानव भूलभुलैया के जाल से छुटकारा पा सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठों में–

आगे के पृष्ठों में यह प्रस्तुत किया गया है कि मानव तथा मानवेतर प्राणियों में कितनी समानता है तथा कितनी विभिन्नता है। 'आहार-निद्रा-भय-मैथुन' ये प्रक्रियाएँ मानव तथा अन्य प्राणियों में समान रूप से विद्यमान हैं ; पर मानव में मस्तिष्क की प्रक्रिया विशेष है, जो चिन्तन, मनन तथा बुद्धि के द्वारा ज्ञानार्जन कर मानव को अन्य प्राणियों से पृथक् कोटि में प्रतिष्ठित करता है। मानव ने अपने बुद्धिबल से सृष्टि के अन्य प्राणियों पर आधिपत्य स्थापित कर लिया है और उनका (प्राणियों का) शोषण कर अपने भौतिक सुख-साधनों की अभिवृद्धि कर ली है। मानव को चाहिए था कि वह अपनी बुद्धि का उपयोग समस्त प्राणियों तथा सर्वजीव-कल्याण के हेतु करता ; पर उसने ऐसा नहीं किया; उसने अपनी बुद्धि से संसार के सभी प्राणियों को वशीभूत कर उनका उपयोग अपनी इन्द्रियों के सुख-साधन बढ़ाने के रूप में किया है। मानवता के सामने इन पृष्ठों में यह एक विचारणीय प्रश्न प्रस्तुत किया गया है और यह इङ्गित किया गया है कि मानव की बुद्धि की पूर्णता तभी है, जब वह समस्त प्राणियों के हित-साधन में संलग्न हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ | प्राणियों से मानव की भिन्नता

सृष्टि के आदिकाल में मानव-जीवन सृष्टि के अन्य प्राणियों के अनुरूप था। खान-पान, रहनसहन, आचरण आदि सभी बातों में मानव और अन्य प्राणियों में समानता थी; मानव अन्य प्राणियों से हिलमिल कर, उन्हींके बीच में रहकर अपना जीवन व्यतीत करता था। परन्तु मानव में अन्य प्राणियों की अपेक्षा विचार शक्ति का प्रेरक मस्तिष्क अंग अधिक होने की वजह से मानव के अन्दर बुद्धि, ज्ञान और विवेक शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ। इसी बुद्धि और विचार शक्ति के बल पर मानव ने अपने आपको सृष्टि के समस्त प्राणियों पर शासन का अधिकारी माना और इन्हीं शक्तियों की वजह से मानव संसार के समस्त प्राणियों से श्रेष्ठ भी माना गया।

मानव का एकाधिकार

संसार के सम्पूर्ण जड़-चेतन, चल-अचल पदार्थों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं प्राणियों पर मानव शासन कर रहा है। वह समस्त पदार्थों का मनमाना उपयोग करता है ; समस्त पदार्थों से मनमाना खिलवाड़ भी करता है। मानव ऐसा क्यों करता है? इसलिए कि मानव के पास बुद्धि और विचार-शक्ति है। उस बुद्धि का मानव अपनी समझ से तो सदुपयोग ही कर रहा है, फिर अन्य प्राणियों को इस उपयोग से चाहे कितनी ही कष्टप्रद परेशानियाँ क्यों न भुगतनी पड़ें अथवा अन्य प्राणियों के लिए उनका कृत्य सदुपयोग न होकर दुरुपयोग ही हो। अगर अन्य प्राणियों में भी बुद्धि और विचार-शक्ति होती, और वे अपनी सम्मति प्रकट करने में समर्थ होते, तो वे स्पष्टतः यह बताते और घोषित करते कि 'मानव का जो यह विकास हुआ है और वह सभ्यता के युग से गुजरता हुआ वैज्ञानिक उन्नति के जिस शिखर पर पहुँचा है, उसमें उनका उन्मुक्त शोषण निरन्तर किया गया है।' ऐसी अवस्था में यह प्रश्न उठता है कि आया मानव सृष्टि के इन समस्त प्राणियों पर शासन करने का अधिकारी है ? वस्तुतः बुद्धि भी मानव को ही मिली है और फैसला भी उसने अपने हक में स्वयं ही किया है। यह तो 'जिसकी लाठी उसी की भैंस' वाली कहावत चरितार्थ होगई ; कोई नीति और न्याय की बात तो हुई नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसुधैव कुटुम्बकम्

अन्य प्राणियों में भी विचार-शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ होता तो कोई भी प्राणी मानव को निःस्वार्थ, बुद्धिमान और संसार पर शासन का अधिकारी नहीं मानता; क्योंकि मानव ने जो कुछ भी संसार में आकर उपलब्ध किया है, उसका उपयोग उसने, अपने लिए, अपने शारीरिक सुख के लिए ही किया है, अन्य किसी भी प्राणी के हित के लिए, उसे किसी भी प्रकार की सुविधा देने के लिए, उसने कभी सोचा भी नहीं। मानव ने अपने आहार-विहार-उपचार, आवागमन, सुरक्षा आदि के लिए प्राणियों के वध की प्रक्रिया को अपने जीवन का अङ्ग बना लिया है। एक स्वर में उसने यह भी प्रतिपादित किया है कि सभी प्राणियों में एक समान आत्मा होती है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को उसने ही मान्य किया है और यह स्वीकार किया है कि सारा संसार एक परिवार के तुल्य है। वास्तविकता भी यही है। सृष्टि-रचना के समय प्रकृति एवं विधाता ने सभी प्राणियों को समान स्थिति प्रदान की थी; सभी को जीवन का अधिकार दिया है; पर मानव ने स्वार्थ के वशीभूत होकर अपनी बुद्धि का प्रयोग केवल अपने लिए ही सीमित कर लिया और अपने कर्तव्य का क्षेत्र समस्त प्राणियों के हित-साधन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक व्यापक नहीं बनाया। उसका यह धर्म था कि अपनी विशिष्ट स्थिति एवं बुद्धिमत्ता का उपयोग अपने समान परिस्थिति वाले अन्य जीवों के लिए भी करता। पर उसने तो अन्य प्राणियों को कुछ देने की अपेक्षा, उनके विनाश को ही अपने जीवन का आधार बनाया और अपने स्वाद एवं शौक के लिए उनके मांस को अपना भोजन बनाया। इसके लिए उसने हर शहर, नगर एवं स्थान में पशुवध-स्थलों व कीलघरों का निर्माण किया।

स्वतन्त्रता सभी का जन्म-सिद्ध अधिकार है

संसार में हजारों चिड़ियाघर होंगे, जिनमें हर प्रकार के प्राणियों को गुलाम बनाकर कठघरों में बन्द करके रखा जाता है और उनका उपयोग सिर्फ इतना ही होता है कि इससे मानव जाति का मनोरंजन हो। प्रयोग में भी मानव ने कई प्राणियों को पालतू बना कर रख छोड़ा है, जिनसे मानव के जीवनयापन-सम्बन्धी कई आवश्कताएँ पूरी होती हैं। पर जिस प्रकार मानव अपनी स्वतन्त्रता को जन्म-सिद्ध अधिकार मानता है, उसी प्रकार संसार के अन्य सभी प्राणी स्वतंत्र विचर कर ही खुश रहते हैं। कोई भी प्राणी बन्धन में रहकर खुश नहीं रह सकता और प्राकृतिक जीवन, जो सब प्राणियों को प्रिय होता है, नहीं भोग सकता। इससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणियों की नैसर्गिक सहज भावना और स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। स्वतंत्र रह कर किसी भी प्राणी को अपना आहार खोजने के अलावा कोई काम नहीं करना पड़ता; परन्तु मानव-बन्धन में प्राणियों से बहुत कड़ा परिश्रम कराया जाता है; आहार भी पूरी मात्रा में और पशु की इच्छित वस्तु का नहीं दिया जाता; अतः पशुओं को इससे बहुत कष्ट पहुँचता है। मानव गाय, भैंस, बकरी का दूध अपने प्रयोग में लाता है, प्रकृति के नियम के अनुसार कोई प्राणी अपने बच्चे को दूध पिलाने के अलावा किसी अन्य प्राणी को अपना दूध देकर खुश नहीं होता। लेकिन पशु क्या करें? उनमें बोल कर अपना दुःख प्रकट करने की शक्ति नहीं है। मानव की बुद्धि के सामने सिर झुका कर उन्हें अपनी आहुति देनी पड़ती है और सारे अत्याचार सहन करने पड़ते हैं। परन्तु मन से कोई भी प्राणी खुशी-खुशी इसके लिए तैयार नहीं होता।

मानव-बुद्धि द्वारा अन्य प्राणियों की उपेक्षा

मानव में अन्य प्राणियों की अपेक्षा उसका बुद्धि बल ही विशेष है। मानव तथा इतर प्राणियों में इसके अतिरिक्त और कोई विशेष अन्तर नहीं है। जिस प्रकार मानव अन्य प्राणियों को दास बना कर उनका शोषण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

करता है, क्या मानव इसी प्रकार शोषण-युक्त किसी प्राणी की दासता स्वीकार कर लेगा ? वह ऐसा कभी नहीं करेगा । मानव एक दिन में ही बिलबिलाने लगेगा और चिल्ला चिल्ला कर आसमान सिर पर उठा लेगा । तब मानव अपने ही समान जीने के अधिकारी अन्य प्राणियों को क्यों नहीं मानता ? क्यों नहीं अन्य प्राणियों के लिए उसके दिल में दयाभाव उपजता ? प्रकृति ने मानव और अन्य प्राणियों में कोई अन्तर तो रखा नहीं। सभी प्राणियों में परमात्मा का अंश (आत्मा) एक समान होता है, फिर क्यों मानव परस्पर इतना भेदभाव करता है ? अन्य प्राणियों को क्या मानव-बुद्धि का यही उपहार मिलेगा कि वे आहार बन कर उसका पेट भरते रहें, उसका मनोरंजन करते रहें और उसके गुलाम बन कर उसकी सेवा करते रहें ? अगर मानव चाहता तो क्या अन्य प्राणियों को खाने-पीने-सम्बन्धी सुविधाएँ, जंगलों में पानी के तालाब व चरागाह बनाकर नहीं दे सकता था? लेकिन मानव ने अपने हित के अलावा किसी और के हित के लिए कभी सोचा ही नहीं । बुद्धि-कौशल मानव को मिला अवश्य है ; पर इसके साथ ही उसमें कपट छल-प्रपञ्च, धोखा-धड़ी तथा स्वार्थ-साधन की तीव्रतम प्रवृत्ति भी है, जिसका अन्य प्राणियों में अभाव है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्म शान्ति भी नहीं मिली

भले ही मानव ने अपने आपको बुद्धिमान होने का विशेषण दे डाला हो, पर संसार का अन्य कोई प्राणी मानव को बुद्धिमान मान ही नहीं सकता। स्वयं मानव भी गहराई से विचार करेगा तो उसे अपनी बुद्धिमत्ता पर सन्देह उत्पन्न होजायेगा। मानव ने जहाँ दूसरे प्राणियों की भलाई के लिए कुछ नहीं किया, वहाँ अपने लिए भी जो कुछ किया है, वह सब जीवन के अन्तिम लक्ष्य-सिद्धि के लिए कतई आवश्यक नहीं हैं; मानव-जीवन के लिए अपेक्षित सुख तथा शान्ति वह अभी तक अर्जित नहीं कर सका। उसने मानव-जीवन की वास्तविक प्रफुल्लता और आत्मशान्ति को विनष्ट ही किया है और जीवन में दुःख और मुसीबतों के काँटे ही बोए हैं। मानव ने अपनी सुख–शान्ति को बढ़ाने के लिए जैसे जैसे अधिक जानकारी प्राप्त कर उन्नति की, वैसे वैसे मानव–जीवन पर विपरीत प्रभाव ही पड़ता गया, अर्थात् मानव की सुख-शान्ति का लोप होकर दुःख और परेशानियों से मानव जीवन भरता चला गया। संसार में जीवित रहने के लिए हर प्राणी में शारीरिक व मानसिक शक्तियों की आवश्यकता होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है और इन्हीं शक्तियों का जीवन में सहारा होता है। परन्तु मानव ने नित नवीन उन्नति एवं वैज्ञानिक अभिवृद्धि के नाम पर अपनी समस्त शक्तियों का नाश कर डाला है, जिससे उसके वास्तविक जीवन में प्रकाश होने के बजाय, अन्धेरा ही बढ़ता चला गया है। इससे तो वह काल ही अच्छा था, जब मानव पूर्णतया विकसित नहीं हो पाया था।

बुद्धि ने मानव को निकम्मा बनाया

मानव ने जो उन्नति की है, वह ठीक है; पर उसके मुकाबले उसने कुरीतियों को ही विशेष रूप से जन्म दिया है। मानव ने प्राकृतिक जीवन त्याग कर कृत्रिमता का अधिक सहारा लिया है, जिसकी वजह से उसकी स्वाभाविक शक्तियों का नाश होता चला गया है। मानव को अपने वैज्ञानिक अनुसंधानों के परिणामस्वरूप जब शारीरिक सुख कुछ अधिक मात्रा में मिलने लगा, तो उसने इसीको उन्नति का मार्ग समझ लिया और अधिक से अधिक शारीरिक सुखों की बढ़ोतरी की खोज में वह संलग्न होगया। इसका नतीजा यह हुआ कि मानव सुखों की खोज में निकम्मा, बेईमान, कपटी और अत्याचारी बनता गया। इतने पर भी सुखों की कामना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटने के बजाए बढ़ती ही गई। पर इससे यथार्थ सुख-शान्ति एवं आनन्द की उपलब्धि तो हुई नहीं। जो प्राणी स्वयं अपने जीवन-मार्ग में काँटे बिछाए अथवा स्वयं अपने पैरों पर कुल्हाड़ी चलाए, उसे बुद्धिमान तो नहीं कहा जा सकता। अगर मानव-बुद्धि-प्रयोग के इसी प्रकार के नतीजे निकलने थे, अथवा इन्हींके बल पर मानव अपने आपको बुद्धिमान कहता है, तो इससे तो बिना बुद्धिवाले अन्य सभी प्राणी अच्छे हैं, जो प्राकृतिक जीवन का वास्तविक आनन्द उठा रहे हैं और अपनी शारीरिक शक्तियों या विशेषताओं को भी ज्यों का त्यों बनाए हुए हैं। इससे अधिक की न तो उन्हें कोई कामना होती है और न मानव की तरह वे अपनी विशेषताओं का गुणगान ही चाहते हैं, न कोई छलकपट ही करते हैं। तब बुद्धिमान मानव को कहा जाए अथवा उन आत्म-सन्तोषी प्राणियों को ?

जिस प्रकृति अथवा परमात्मा ने सृष्टि की रचना की है, उसने रचना के साथ साथ सब प्राणियों के जीवन-यापन के साधन भी बनाए हैं और सभी प्राणियों के लिए एक समान स्थिति बनाई है; प्रकृति ने किसी प्राणी विशेष के लिए कोई भेद-भाव नहीं रखा। सभी प्रकार के प्राणी इस प्रकृति की देन का पूर्णतया उपयोग करते हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े आराम से अपना जीवन बिता देते हैं। परन्तु मानव एक ऐसा प्राणी है, जो प्रकृति की देन की उपेक्षा करके अपने द्वारा बनाए गए कृत्रिम साधनों का उपयोग करना अधिक अच्छा समझता है। प्रकृति द्वारा बनाए गए वातावरण और स्थिति में जब सभी प्राणी जीवनयापन कर सकते हैं, तब मानव क्यों नहीं कर सकता? प्राकृतिक देन के सहारे मानव लाखों सालों तक जीवनयापन करता भी रहा है और प्रकृति के सहारे बिताए जाने वाले जीवन में मानव को कभी कोई अभाव भी नहीं हुआ, बल्कि उस स्वच्छन्द जीवन में मानव के शरीर की विशेषता का कभी ह्रास नहीं हुआ। फिर मानव को प्रकृति की उपेक्षा करके नए नए तथ्यहीन आडम्बर रचने की क्या आवश्यकता थी? मानव को ही क्यों अन्य प्राणियों की अपेक्षा जीवनयापन के लिए इतने आडम्बरों की आवश्यकता पड़ती है? मानव भी तो परमात्मा की अन्य प्राणियों जैसी ही एक रचना है, तब वह अन्य प्राणियों से अधिक सुख क्यों चाहता है?

संसार में आकर मानव ने अपने सुखों के लिए जितने आडम्बरों की रचना की, उनसे भी मानव तृप्त कहाँ हो पाता है? उसमें अधिकाधिक सुख पाने की कामना बढ़ती ही जा रही है, जिसके लिए उसके द्वारा अनेकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नए नए परीक्षण होते रहते हैं। मानव की इस अतृप्त सुखों की कामना या तृष्णा को बुद्धिमानी तो नहीं कहा जा सकता। अन्य किसी भी प्राणी को अपने निसर्ग-सुलभ साधनों के अलावा कभी किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं हुई। फिर मानव में ही क्या ऐसी विशेषता है कि जिसकी निष्प्रयोजन सुखों की तृष्णा कभी तृप्त ही नहीं हो पाती। इस प्रकार तृष्णा के पीछे दौड़ना, जिसकी जीवन-मार्ग में कोई आवश्यकता ही नहीं होती, मानव की बुद्धिमानी के बजाय बुद्धि का दुरुपयोग ही कहा जा सकता है।

संसार का कोई ऐसा जड़-चेतन पदार्थ अथवा प्राणी नहीं होगा, जिसका मानव ने अपने जीवन रूपी गाड़ी को चलाने के लिए उपयोग न किया हो। बहुत से पदार्थ व प्राणी मानव के खान-पान में स्वादिष्ट मांस के रूप में प्रयुक्त होते हैं; बहुत से पदार्थ व प्राणी मानव का मनोरंजन करने के काम आते हैं; बहुत से मानव की ऐय्याशी व भोगविलास की तृप्ति में काम आते हैं और बहुत से उसके श्रृंगार, प्रसाधन व सजावट में काम आते हैं। सारांश यह है कि प्रायः सभी पदार्थों अथवा प्राणियों (मानव-सहित, क्योंकि मानव ने अपनी जाति मानव को भी अछूता नहीं छोड़ा) को किसी न किसी रूप में मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में प्रयोग अवश्य होता है। फिर भी यह बात कितनी आश्चर्यजनक है कि पूरे संसार के जड़-चेतन-प्राणियों आदि का अपने हित में प्रयोग करके भी मानव संतुष्ट नहीं है ? सृष्टि के अन्य प्राणियों को अपनी प्राकृतिक आवश्यकताओं–भूख-प्यास–के शान्त करने के साधन मात्र की आवश्यकता होती है ; पर मानव तो पूरे संसार की वस्तुओं का उपयोग करके भी भूखा का भूखा ही रहता आरहा है। भगवान् जाने मानव की अभिलाषाओं और तृष्णाओं का कोई अन्त है भी या नहीं। मानव द्वारा अतृप्त तृष्णाओं को शान्त करने के प्रयत्न में किए गए कुकर्म देखकर, शायद मानव की रचना करने वाला भगवान् भी पछताता होगा कि 'तूने कैसा बेसब्र और असन्तोषी प्राणी पृथ्वी पर पैदा कर दिया, जो किसी तरह से सन्तुष्ट ही नहीं हो पा रहा है।'

ज्ञान का स्वार्थ-पूर्ण उपयोग

मानव तथा मानवेतर प्राणियों की समानता तथा विशेषता का वर्णन निम्नश्लोक में अत्यन्त यथार्थता-पूर्वक किया गया है :—

आहार-निद्रा-भय-मैथुनञ्च

सामान्यमेतद् पशुभिः नराणाम् ;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानञ्च तेषाम् अधिको विशेष:
ज्ञानेन हीना: पशुभि: समाना: ।

अर्थात् 'आहार-निद्रा-भय-मैथुन' की प्रवृत्तियाँ एवं क्रियाएँ मनुष्यों तथा पशुओं में समान रूप से विद्यमान हैं। पर अन्य पशुओं की अपेक्षा मनुष्यों में 'ज्ञान' शक्ति का विशेष रूप से समावेश है। पशुओं में 'ज्ञान' शक्ति का अभाव है। पर जो मनुष्य ज्ञान-शक्ति से वञ्चित है, वह यथार्थ रूप से पशुओं के समान ही है। इसका तात्पर्य यही है कि मनुष्य को विधाता ने जिस ज्ञान शक्ति का वरदान दिया है, उसका अगर वह समुचित प्रयोग करता, तो उससे विश्व के समस्त प्राणियों को लाभ पहुँचता ; पर उसने इस ज्ञान के लाभ को अपने ही 'आहार-निद्रा एवं मैथुन' की सुख-वृद्धि के लिए विशेष रूप से प्रयुक्त किया है, जैसा ज्ञान के अभाव में अन्य प्राणी नहीं करते। इस दृष्टि से तो मानव पशुओं से भी अधिक नीचे गिर गया है ; उनके (पशुओं के) समान स्तर पर भी वह नहीं टिक पाया। भाग्य की कैसी घोर विडम्बना है यह ! ! जिस ज्ञान शक्ति के कारण मानव को प्राणियों के बीच विशेष श्रेष्ठत्व प्राप्त हुआ, उसी 'ज्ञान' ने मानव को पशुओं के तुल्य भी नहीं रहने दिया। अपने इन्द्रिय-सुख-भोग के लिए उसने ज्ञान का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोषण किया और उससे जगत के समस्त प्राणियों का सम्यक् हित-साधन नहीं किया।

वस्तुत: सृष्टि के अन्य प्राणी भी जीवनयापन के लिए वही सब क्रियाएँ करते हैं, जो मानव अपने जीवन-काल में करता है। सभी प्राणी खाना–पीना करते हैं; सभी अपनी अपनी पद्धति के अनुसार रहने का ठिकाना भी बनाते हैं; सभी प्राणी किसी न किसी रूप में खेल-कूद, मनोरंजन आदि भी करते हैं; सहवास और यौन तृप्ति का भी सब प्राणियों का अपना अपना अलग अलग रिवाज होता है; अलग अलग ऋतुकाल होता है; उसीके अनुसार वे तृप्ति भी अनुभव करते हैं। सभी प्राणियों की आदतें मर्यादित होती हैं और उनमें वे प्राणी आनन्द व तृप्ति का भी अनुभव करते हैं। लेकिन मानव एक ऐसा प्राणी है, जिसकी किसी भी आदत की कोई सीमा नहीं होती। वह प्रत्येक कार्य एवं प्रयास में बेसब्र व असन्तुष्ट ही बना रहता है। मानव की एषणाएँ कभी घटती नहीं; उसकी वासनाओं का कभी अन्त नहीं होता; वह अपनी इन्द्रियों का दास बन जाता है और भोग–लिप्सा में आकण्ठ निमग्न होजाता है। उसकी आवश्यकताओं तथा रुचियों की कोई सीमा नहीं है। वह आनन्द की खोज भौतिक साधनों की उपलब्धियों में करता है और इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार भटकता जाता है। मानव की आवश्यकताएँ व अभिलाषाएँ आगे से आगे नया नया रूप लेकर जन्मती रहती हैं और उनका कभी अन्त नही होता। पर मानव की तरह सृष्टि के शेष प्राणी कभी अतृप्त नहीं होते, और नहीं उनके भीतर कृत्रिम आवश्कताएँ व अभिलाषाएँ ही उत्पन्न होती हैं, जिनकी पूर्ति के लिए वे बेचैन एवं व्यग्र हों।

मानव कृत्रिम जीवन जीता है

संसार के सभी प्रकार के प्राणियों में एक ही नस्ल, एक ही जाति के प्राणियों की आदतें, स्वभाव, खानपान, आचरण, रहन–सहन आदि सभी बातों में सामंजस्य होता है, कोई अन्तर अथवा भेदभाव नहीं होता। परन्तु मानव जाति के किन्ही दो व्यक्तियों की कोई भी बात एक समान नहीं मिलेगी। प्रत्येक मानव की आदत, स्वभाव, खानपान, रहन-सहन, आचरण व्यवहार आदि हर बात में कुछ न कुछ अन्तर मिलेगा। इसका कारण यह है कि मानव प्राकृतिक जीवन नहीं जीता, वह कृत्रिमता का चमकीला आवरण ओढ़ कर लक-दक होने का इच्छुक होउठता है। पर इस आडम्बर से मानव की सहज शान्ति विलुप्त हो जाती है। मानव के पालन-पोषण, रहन-सहन की स्थिति और ढंग, खानपान के पदार्थों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाद को अधिक महत्व देना, सुख-भोग की अधिक मात्रा व अधिक कामना आदि सब ऐसी कृत्रिम बातें हैं, जो मानव-जीवन में भेद उत्पन्न कर देती हैं। अगर मानव भी इन सब बातों में अन्य प्राणियों की तरह सामंजस्य रखता, इनके उपयोग में कृत्रिमता-रहित प्रकृति के वातावरण का उपयोग करता, तो मानव के सहज स्वभाव आदत, आचरण, आदि बातों में कोई अन्तर नहीं आता। प्रकृति की उपेक्षा करने और कृत्रिमता को अपनाने में मानव की बुद्धि का ही करिश्मा है। मानव में विचार-शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ ; मानव ने अपनी सुविधा और परिस्थिति के अनुसार अपना जीवन-मार्ग बना लिया। जीवन-मार्ग बनाने में मानव ने अपनी बुद्धि पर ही अधिक भरोसा किया, जिससे उसके जीवन में, हर काम, हर बात में कृत्रिमता आती गई और इस प्रकार मानव की हर बात में भेद व अन्तर पैदा होता गया।

पशुओं को कोसना बेकार है

किसी मानव द्वारा अनीति अथवा परम्परा के विरुद्ध अथवा परम्परा-पिष्ट काम करने से, मानव उसकी तुलना पशुओं से करता है ; जैसे कोई अधिक मात्रा में खाना खाता है तो कहा जाता है "कैसे गधे की तरह खाए जा रहा है"। परम्परा-विरुद्ध कोई काम करने से "पशु बन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है"– कहा जाता है अथवा 'पशु से भी गया गुजरा' बताया जाता है। लेकिन प्रश्न तो यह है कि पशुओं में कोई ऐसी भावनाएँ व आदतें होती ही नहीं, जिनको अनीति कहा जा सके। कोई पशु भूख से ज्यादा नहीं खाता; कोई पशु मानव की तरह बार-बार सुबह से शाम तक नहीं खाता; किसी भी पशु का आचरण सीमा से बाहर नहीं होता; पशुओं की हर आदत, आचरण संयमित होता है, तब फिर बेचारे पशुओं को ही क्यों कोसा जाता है? यह तो चोरी और ऊपर से सीनाजोरी वाली कहावत हुई। हर बात, हर आदत, हर आचरण में उच्छृङ्खल एवं असंयत होता है स्वयं मानव, और दोष देता है पशुओं को। मानव ही एक ऐसा जानवर है, जो अपने किसी कृत्य एवं आकांक्षा को सीमा-बद्ध रखना नहीं पसन्द करता और किसी आचरण में मर्यादा व बन्धन में बँधना पसन्द नहीं करता। जितनी कुरीतियाँ और अनियमितताएँ मानव अपने जीवन-काल में प्रयोग में लाता है, उतनी सृष्टि का और कोई भी प्राणी प्रयोग में नहीं लाता। यह तो मानव का असंस्कृत दुर्गुण है कि अपने दोषों को दूसरों के सिर पर थोप देता है। पशु जगत पर कम से कम यह आरोप नहीं लगाया जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार मानव प्राणी में जितने अवगुण भरे हुए हैं, उतने सृष्टि के अन्य किसी प्राणी में नहीं हैं। अतः मानव नाम का प्राणी अन्य प्राणियों से बुद्धिमान और श्रेष्ठ किसी भी स्थिति में नहीं कहा जा सकता, स्वयं मानव अपने मन में चाहे जो कुछ सोचले। अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनने से कोई श्रेष्ठ नहीं कहलाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठों में-

आगे के पृष्ठों में इस तथ्य का विशद विवेचन किया गया है कि पुरुष ने समाज में अपनी विशिष्ट स्थिति के कारण स्त्री का किन-किन रूपों में शोषण किया है। वैसे मानवीय दुर्बलताएँ स्त्री-पुरुष दोनों में समान रूप से पाई जाती हैं, फिर भी पुरुष ने अपनी शारीरिक शक्ति, सामाजिक महत्ता तथा आर्थिक क्षमता के कारण स्त्रियों का निर्लज्ज प्रयोग अपने लाभ तथा इन्द्रिय-सुख के लिए किया है। संसार की वर्तमान वैज्ञानिक, आध्यात्मिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक प्रगति के समक्ष पुरुष समाज को अपनी इस मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना होगा, अन्यथा समग्र समाज का सम्यक् विकास नहीं हो पायेगा और न वह आत्मिक शान्ति ही स्थापित हो पायेगी, जो सृष्टि का अन्तिम लक्ष्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४ | मानव द्वारा स्त्री का शोषण

सृष्टि-कर्ता ने पुरुष की मित्र और सहयोगी के रूप में स्त्री का निर्माण किया है। स्त्री और पुरुष एक ही जाति, एक ही आकृति और, एक विशिष्ट अन्तर के साथ, एक ही प्रकार की बनावट के दो प्राणी हैं, जो एक दूसरे के जीवन के पूरक हैं। स्त्री के बिना पुरुष का जीवन अधूरा और नीरस होजाता हैं; उसी प्रकार पुरुष के बिना स्त्री का जीवन शून्य और शुष्क रह जाता है। इनना ही नहीं, स्त्री का अकेले रह कर जीवन बिताना भी बहुत ही मुश्किल होजाता है। पुरुष फिर भी दुःख व बेचैनी एवं कठिनाइयों को झेल कर अकेला जीवन बिता सकता है; परन्तु स्त्री के लिए ऐसा सर्वदा सम्भव नहीं है। वस्तुतः प्रकृति ने स्त्री की अपेक्षा पुरुष को विशेष रूप से शारीरिक शक्ति प्रदान की है। संकल्प, साहस व विश्वास की भावना भी पुरुष में विशेष रूप से दृढ़ीभूत होती है। बुद्धि व विचारशक्ति भी प्रकृति ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुष को खास तौर पर प्रदान की है। स्त्री शारीरिक शक्ति में पुरुष से हीन है; पर बच्चे पैदा करने की क्षमता प्रकृति ने स्त्री को ही सौंपी है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव उसकी शारारिक शक्ति पर पड़ता है। स्त्री के अंग, विशेष कर उसकी त्वचा व शरीर की बनावट, इतने मुलायम और नाजुक होते हैं कि वह किसी दुर्घटना व परिस्थिति विशेष का मुकाबला पुरुष के समान आसानी और साहस से नहीं कर सकती, इसलिए स्त्री के लिए पुरुष का सहारा लेना अत्यन्त आवश्यक होजाता हैं। प्रकृति द्वारा प्रदत्त स्त्री-पुरुष में इन अन्तरों को देखते हुए, प्रकृति का ही यह स्पष्ट इशारा है कि हर प्राणी की मादा अपने नर का सहारा लेकर चले।

प्रकृति द्वारा निर्धारित विधान

स्त्री के कुछ विशिष्ट अंग पुरुष से सर्वथा भिन्न होते हैं और उसके सौंदर्य के प्रतीक बन कर उसे अभिनव आकर्षण प्रदान करते हैं। उसके स्वर-माधुर्य से भी पुरुष की तेज वाणी की अपेक्षा रस का झरना-सा झरता प्रतीत होता है। कहना चाहें तो कह सकते हैं कि संगीत और कविता के आलाप स्त्री के रूप में मूर्तिमन्त हुए हैं। पुरुष यदि वज्र का प्रतीक है, तो स्त्री उन्मादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरभि की अधिष्ठात्री है। स्त्री और पुरुष दोनों अपनी इन प्राकृतिक विभिन्नताओं के कारण ही एक दूसरे को आकर्षित करते हैं और एक दूसरे की कमियों की पूर्ति करके सृष्टि के उद्देश्य को सिद्ध करते हैं। इस तुलना के संदर्भ में यह स्पष्ट है कि सृष्टि के सभी प्राणियों की मादा अपने नरों से कमजोर होती है और सभी मादाएँ अपने नरों के साथ रह कर उनकी सुरक्षा में ही अपना जीवनयापन करती हैं; इसलिए प्रकृति के इसी नियम के अनुसार स्त्री भी पुरुष से कमजोर होती है। फलतः उसको भी पुरुष का सहारा लेना पड़ता है। आज की महिलाएँ भले ही पुरुष के समान अधिकार और स्वतंत्रता प्राप्त कर लें, फिर भी उन्हें पुरुष का सहारा अवश्य ही लेना पड़ेगा। यह प्रकृति का विधान है; पुरुष द्वारा निर्मित विधान नहीं; इसी लिए इस विधान की उपेक्षा नहीं की जा सकती। अगर कोई स्त्री दुराग्रह-वश इसके विपरीत मार्ग ग्रहण करना चाहेगी, तो भी वह इसमें कृतकार्य नहीं होसकती।

वैसे आधुनिक स्त्री अपने शोषण का पूर्ण जिम्मेदार पुरुष को ही मानती है। यह बात कुछ हद तक ही ठीक हो सकती है। पर प्रकृति ने स्त्री पुरुष की शारीरिक बनावट में जो अन्तर बनाया है, उसमें पुरुष का अपना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई कृतित्व नहीं है। वस्तुतः प्रकृति–जन्य शारीरिक विशेषताओं के कारण ही स्त्री को पुरुष के अधीन रह कर जीवन बिताना पड़ता है। इसमें पुरुष का कोई दोष नहीं है।

स्त्री के शोषण के सम्बन्ध में यह स्पष्ट है कि केवल पुरुष ही नहीं, स्त्री ने भी स्त्री के शोषण में सहायता की है; कहीं स्त्री ने स्वयं नवयौवनाओं का दुरुपयोग कर आर्थिक तथा अन्य प्रकार के भौतिक लाभ उठाये हैं और कहीं स्त्री ने नवयुवतियों के शोषण में पुरुष की सहायता की है। 'मानव' जाति में चूँकि स्त्री और पुरुष दोनों का समावेश होजाता है, इसीलिए प्रस्तुत विषय का वर्णन 'मानव द्वारा स्त्री का शोषण' शीर्षक से किया जारहा है। इस प्रकार पुरुष और स्त्री दोनों ने ही अलग अलग अथवा कहीं कहीं सहयोग-पूर्वक भोली भाली स्त्रियों को बहका कर तथा मिथ्या आकर्षण–लोभ–लालच–में फँसा कर उनका दुरुपयोग तथा शोषण किया है।

नारी की विशेषता

विधाता ने जहाँ स्त्री को शारीरिक कोमलता, मृदुता, लावण्य, स्वरमाधुरी, श्री-सुषमा, भावप्रवणता, गीतात्मकता एवं सरसता प्रदान की है, वहाँ बहुवर्णी अन्तरङ्ग भी प्रदान किया है। उसका हृदय पक्ष प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है, पर विचार-शक्ति क्षीण होती है। वह संवेदन-शील तो होती है, पर वैचारिक गाम्भीर्य से प्रायः शून्य होती है। वह भावना-सम्पन्न होने के कारण परम्परा तथा परिपाटी की पालक होती है; उसकी धार्मिक श्रद्धा बहुधा अन्धविश्वास के रूप में दृढ़ीभूत होती है। तर्क तथा विवेक-पूर्ण विवेचन करने का धैर्य, स्थैर्य एवं संयम उसमें सहज नहीं होता। वैसे सामान्य अवस्था में वह स्नेहिल, कष्टसहिष्णु, शीलवती, परिग्रह-प्रिय, शृङ्गार-पटु, दया-दाक्षिण्यमयी, त्याग एवं उत्सर्ग की मूर्ति होती है। शैशव से लेकर जीवन के अन्त समय तक वह परिवार, माता-पिता, भाई-बन्धु, पति-पुत्र के सेवा-सत्कार, पालन-पोषण, संरक्षण तथा संवर्धन में संलग्न रहती है। वह समय समय पर परिवार, समाज तथा देश के प्रति अपने कर्तव्यों का परिपालन निष्ठा-पूर्वक करती है। उसका संग्रह भी दान के लिए ही होता है। वह लक्ष्मी भी है, सरस्वती भी है और चण्डी भी है। लक्ष्मी के रूप में वह जननी तथा धात्री के कर्तव्यों का सहज भाव से वहन करती है; सरस्वती के रूप में वह अपनी कला-प्रियता, सौंदर्यबोध, सुरुचि-सम्पन्नता, भावमयता, नाटकीयता तथा रूप-सज्जा की गरिमा बिखेरती है, पर असंयमित जब कभी वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असामान्य अथवा असाधारण होउठती है, तब वह साक्षात् चण्डी का रूप भी धारण कर लेती है। ऐसी अवस्था में वह अत्यन्त विकराल होउठती है और तब वह अकाण्ड काण्ड करने में भी नहीं चूकती; उस समय वह समस्त संयम, मर्यादा, लोकाचार, लज्जा, शिष्टता, परम्परा तथा परिपाटी का अतिलंघन कर जाती है और वाञ्छनीय अथवा अवाञ्छनीय परिणामों की चिन्ता किये बिना दृप्त रूप धारण कर लेती है। पर ऐसा सर्वदा और सर्वत्र नहीं होता; पर जब होता है, तब सम्भवतः पुरुष की कठोरता तथा क्रूरता भी उसकी समता नहीं कर सकती।

वैसे मानवीय दुर्बलताओं से स्त्री भी मुक्त नहीं है। ईर्ष्या, आशंका, द्वेष, काम-क्रोध, मदमात्सर्य, छल-प्रपञ्च के भाव-अनुभाव उसमें भी होते हैं। पुरुष की अपेक्षा उसकी मनोवृत्ति संकीर्ण होती है। दूर दृष्टि का उसमें अभाव होता है; वाणी-संयम वह नहीं कर पाती; इससे बड़ी-बड़ी हानियाँ भी होजाती हैं; पर वह देख-सुन कर, समझ-बूझकर भी, अपनी वाचालता एवं मुखरता का संवरण नहीं कर पाती।

सृष्टि की यह विचित्रता है कि उसमें तरह तरह के चरित्रों के दर्शन हमें होते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में हमें सुर एवं असुर चरित्र मिलते हैं। पर सृष्टि का विकास सुर चरित्रों से ही होता है, असुर चरित्रों से नहीं। असुर चरित्रों से कलह, अशान्ति एवं विनाश के ही बीज प्रस्फुटित एवं प्रवर्धित होते हैं। स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक के रूप में जब सहयोगी, सहधर्मी, सहकर्मी तथा सहगामी बनकर काम करते हैं, तब सत्य युग का उद्भव होता है, पारिजात के पुष्प खिलते हैं और भूतल पर अभिनव स्वर्ग की अवतारणा होती है। पर जब इस परस्पर पूरक वृत्ति की समाप्ति होजाती है, तब परस्पर शोषण-दोहन एवं प्रवञ्चन की प्रक्रिया प्रारम्भ होजाती है, जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे।

परस्पर विरोध का कारण

पुरुष तथा स्त्री का कार्य-क्षेत्र जुदा जुदा होजाने से भी दोनों के स्वभाव, जीवन-पद्धति, विचारसरणी, अनुभूति तथा निर्णय-क्षमता में अन्तर उपस्थित होजाता है। स्त्री को गृहिणी कहा गया है; गृहिणी के रूप में उसका कार्य परिवार, घर तथा कुटुम्ब के संवर्धन, परिपालन एवं सम्पोषण तक प्रधान रूप से सीमित रहता है। ऐसी अवस्था में यह स्वाभाविक है कि वह कोमलता, सुकुमारता, भावमयता, स्निग्धता, अलङ्करण-प्रियता, तथा सौंदर्य-[illegible]युता की प्रतीक हो। अपने गृह के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रति उसका स्वामित्व-भाव अपने क्षेत्र में उसे प्रधानता प्रदान करता है और पुरुष की उपलब्धियों एवं अर्जित धन से गृहस्थी के भरण-पोषण की व्यवस्था सुचारु रूप से करने में वह दत्तचित्त होजाती है। ऐसी अवस्था में वह बहुधा उन कठिनाइयों, परेशानियों तथा समाज-व्यवस्था से उत्पन्न दुष्चक्रों की विकटता का अनुभव सम्यक् रूप से सहानुभूति-पूर्वक नहीं कर पाती, जिनका सामना बाह्य जगत में पुरुष को करना पड़ता है।

पुरुष दिनभर अपनी आजीविका के अर्जन के लिए समाज के विभिन्न तत्वों के बीच संघर्षरत तथा कार्य-लग्न रहता है। बाह्य जगत के प्रति व्यवहार करने में पुरुष को जुदा पैमाना अख्तियार करना पड़ता है। बाहर जिस प्रकार उठक-पटक, दौड़धूप, आपाधापी तथा होड़ होती है, स्त्री घर में रह कर उसकी जटिलता का अनुभव नहीं कर पाती; फलतः वह उसके प्रति अपेक्षित सहानुभूति नहीं प्रकट कर पाती। स्त्री-पुरुष के बीच विरोध की यह मूल पीठिका है।

इस विरोध में चूँकि पुरुष अर्जनशील व्यक्ति होता है, फलतः वह स्त्री पर हावी होजाता है। इस स्थिति में परस्पर शोषण तथा विरोध की प्रक्रिया प्रारम्भ होजाती है। यहीं से पारिवारिक तथा सामाजिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशृंखलता व्यापक अशान्ति का रूप ग्रहण करने लगती है।

प्रकृति ने स्त्री–पुरुष के बीच जो अन्तर रखे हैं उनका वर्णन हमने ऊपर किया है। यह भेद चूँकि नैसर्गिक है, अतः वे स्त्री-पुरुष की अपनी अपनी चरित्र-गत विशेषता बन गये और वह अपनी-अपनी जगह पर सृष्टि के परिपालन, संवर्धन एवं पूर्णत्व-प्राप्ति की दिशा में प्रेरक सूत्र बन गये। इस प्रकार जब तक स्त्री-पुरुष की इन विभिन्न विशेषताओं का उपयोग समन्वित एवं सामञ्जस्य-पूर्ण रूप में होता रहा, तब तक निश्चित रूप से पारिवारिक जीवन की शान्ति तथा आनन्द-पूर्ण अभि-वृद्धि होती रही। पर जब ये विशेषताएँ परस्पर पूरक होने के स्थान पर प्रतिरोधी अथवा प्रतिस्पर्धी बन गईं, तब उनका रूप परस्पर शोषण का बन गया और जीवन में आनन्द के स्थान पर अशान्ति उत्पन्न होगई। इस कशमकश में चूँकि पुरुष अधिक शक्तिशाली, चतुर तथा प्रवीण था, अतः उसके द्वारा स्त्री का अधिकाधिक शोषण होता चला गया। हम कहना चाहें तो कह सकते हैं, कि समग्र रूप से स्त्री के साथ पुरुष ने न्याय नहीं किया। पुरुष ने कभी स्त्री की भावना और आकांक्षाओं को महत्व नहीं दिया। पुरुष ने हमेशा स्त्री से मनमाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवहार किया और उसे अपनी भोग्य सामग्री से अधिक कभी महत्व नहीं दिया। पुरुष ने औरत को बेजान जड़ पदार्थ की तरह मान कर, औरत के साथ ऐसे ऐसे खिलवाड़ किए हैं, जिनको पढ़ एवं सुन कर रोंगटे खड़े होजाते हैं। उन घटनाओं से यह साबित भी होजाता है कि वास्तव में पुरुष ने स्त्री को मिट्टी के खिलौने से अधिक कभी महत्व नहीं दिया। पुरुष ने कभी नहीं सोचा कि प्रकृति की इस मेरे समान रचना का अधिकार भी मेरे बराबर ही होना चाहिए अथवा प्रकृति ने जब स्त्री की रचना पुरुष के मित्र और सहयोगी के रूप में की है, तब उसी आधार पर उसको जीवन का हक भी मिलना चाहिए।

स्त्रियों का वीभत्स उपभोग

मानव ने औरत का भोग किया; सृष्टि को चलाने अथवा अपना खानदान चलाने के लिए औरत से बच्चे पैदा किए; घर गृहस्थी का रखरखाव व साज-सज्जा का कार्य भी औरत को ही सौंपा; अपनी सेवा-सुश्रूषा का भार भी औरत को दिया। इतना कार्यभार स्त्री को सौंप देना तो पुरुष का एक तरह से उचित फैसला ही माना जाएगा, लेकिन जड़ पदार्थ की तरह औरतों को दक्षिणा के रूप में पुरोहितों को देना, राजा-महाराजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को शादियों में औरतों को दहेज में देना, अपने भोग-तृप्ति के लिए हजारों की संख्या में औरतों को एक मकान में एकत्रित करके रखना, औरत को बाजारों में खरीदना, बेंचना, नीलाम करना आदि सब ऐसे कुकर्म और वीभत्स दुष्कृत्य हैं, जो पुरुष के अत्याचार और एक पक्षीय फैसले का नीचतम रूप दिखलाते हैं।

प्राचीन समय में बड़े बड़े यज्ञों की पूर्णाहुति होने पर यज्ञ-कर्ता पुरुष, यज्ञ कराने वाले पुरोहितों और धर्माचार्यों को, अन्य धन-दौलत वस्त्रादि के साथ-साथ, युवतियों को भी दक्षिणा के रूप में दे देता था। धर्माचार्य इन युवतियों से अपनी विलासिता की तृप्ति भी करते थे और दासियों की तरह उनसे घरेलू काम भी लेते थे। प्राचीन समय की किसी राजा-महाराजा की शादी में, राजकुमारी के पिता द्वारा, राजकुमारी के अलावा सामर्थ्यानुसार दहेज के रूप में युवतियां भी दी जाती थीं, जिन्हें बाँदी अथवा 'गोली' कहा जाता था। राजा या महाराजा इन बाँदियों में से खूबसूरत बाँदियों का मनमाना उपभोग करता था; शेष सब दासियों की तरह महलों के अन्य कामों में नियुक्त कर दी जाती थीं। इन बाँदियों को खाना और पहनने का कपड़ा ही मिलता था, वेतन कुछ नहीं। इनको अपनी पूरी उमर राजा या महाराजा की सेवा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही बितानी पड़ती थी; इसके विरुद्ध जबान हिलाने पर उस बाँदी को मौत की सजा मिलती थी, इसलिए वह बेचारी चुपचाप मन मार कर, उचित-अनुचित जो भी करना पड़ता, उसे करते हुए जीवन के दिन गुजार देती। लेकिन इन बाँदियों की स्थिति किसी चहारदिवारी में घिरी हुई भेड़ बकरियों से अच्छी नहीं होती थी।

राजा या महाराजा द्वारा भोगी जाने वाली बाँदियों में अगर कोई बाँदी गर्भवती होजाती, तो उस बाँदी की शादी तत्काल किसी गुलाम अथवा दासी-पुत्र के साथ कर दी जाती, जो महाराजा द्वारा स्थापित अवैध गर्भ से उत्पन्न होने वाली संतान का पिता कहलाता था। इस तरह महाराजा बेदाग़ बच जाता और अवैध सन्तान को एक नकली पिता मिल जाता। पर यह नकली पिता सिर्फ नकली पिता ही रहता, क्योंकि जिस बाँदी से उसकी शादी की जाती थी, वह उसे भोगने के लिए कभी नहीं मिलती; वह तो फिर भी महाराजा की सेवा में ही रहती और उसकी अवैध सन्तानों का पिता कोई दूसरा ही होता।

इस काण्ड में सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि राजा-महाराजाओं द्वारा भोगी जाने वाली बाँदियों के विरुद्ध न तो इन्हें दहेज में लाने वाली राजकुमारी को ही कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एतराज अथवा सौतिया डाह होता था और न दहेज में बाँदी देने वाले राजा को ही अपनी बेटी की इतनी सौतें एकत्रित करके देने में कोई संकोच होता था, और न ही बाँदियों को भोगने वाले राजा-महाराजा के किसी पारिवारिक सदस्य को ही कोई एतराज होता था। इन बाँदियों की संख्या भी दस बीस से लेकर सैंकड़ों तक होती थी; यह संख्या दहेज में देने वाले राजा की सामर्थ्य पर घट बढ़ जाती थी। इन बाँदियों के लिए सबसे वीभत्स और करुणाजनक काण्ड होता था दहेज पाने वाले राजा की मृत्यु पर। एक प्रकार से ये बाँदियाँ राजा से विवाहित ही समझी जाती थीं, इसलिए राजा की मृत्यु पर इन सबको राजा की चिता के साथ ही सती के रूप में भस्म होना पड़ता था। किसी औरत का प्यार के वशीभूत होकर अपने प्रियतम के साथ स्वेच्छा से सती होना तो उसके प्यार का प्रतीक माना जा सकता है, परन्तु जबर्दस्ती गुलामी में रहने वाली सैंकड़ों औरतों को इस प्रकार जिन्दा जलने के लिए मजबूर करने से अधिक नीच और वीभत्स प्रथा शायद ही दूसरी कोई मिले। पुरुष द्वारा औरत के शोषण का कितना घृणित कर्म है यह!!

भारत में जितने राजा महाराजा, नवाब जागीरदार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होचुके हैं, तथा मुस्लिम देशों में भी जितने बादशाह, अमीर, उमराव, जागीरदार आदि होचुके हैं, उन सबके महलों में एक से एक सुन्दर युवतियों की पूरी सेना रहती थी और इस पूरी सेना से मनोरंजन अथवा यौन-तृप्ति होती थी सिर्फ एक पुरुष की। कई कई युवतियों की तो सालों तक पति के रूप में स्वामी राजा या नवाब से मिलने की बारी ही नहीं आती थी और उन्हें पुरुष के दर्शन भी दुर्लभ होजाते थे। क्या कभी इस प्रकार भेड़-बकरियों की तरह राजप्रासाद में बन्द कामनियों को तृप्ति, सन्तोष व आत्मशान्ति मिली होगी? क्या एक पुरुष शतशः औरतों की शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति कर सकता है? यह शत-प्रतिशत असत्य है कि एक पुरुष सैंकड़ों युवतियों को आनन्द, सन्तोष व तृप्ति दे सकता है। ऐसी स्त्रियाँ बेचारी लाचार होती थीं। कड़ी पाबन्दियों और सशस्त्र पहरे में उन्हें रहने के लिए मजबूर होना पड़ता था और गन्दी नाली में बिलबिलाते हुए कीड़ों की तरह उन्हें नारकीय जीवन बिताना पड़ता था। अपने जीवन की अभिलाषाएँ और आकांक्षाएँ कुचल देनी पड़ती थीं और रोते, बिलखते, किस्मत को कोसते हुए उन्हें जीते जी नरक भुगतने के लिए बाध्य होना पड़ता था। पुरुष ने तो कभी यह नहीं सोचा कि जब उसे मन बहलाने और यौन-तृप्ति के लिए लौंडियों की संख्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए, तब उसीके समान स्तर पर एक सुन्दर युवती यह क्यों न चाहे कि उसे भी शारीरिक तृप्ति के लिए पूर्ण सामाजिक प्रतिष्ठा के साथ अधीनस्थ पुरुषों का दल चाहिए। अगर यह न हो, तब भी एक स्त्री को एक पुरुष तो मिलना ही चाहिए। सामाजिक न्याय तो यही है कि स्त्री भी पतिव्रता हो और पुरुष भी एक पत्नीव्रत-धारी हो। पर ऐसा तो हुआ नहीं। स्त्री के लिए पाति-व्रत धर्म का खूब गुण-गान किया गया है; पर पुरुष के लिए एकपत्नी-व्रत-धारण की महिमा की कोई विशेष सुदृढ़ अनुल्लंघनीय स्थापना नहीं की गई।

पत्नी तक की अनैतिक भेंट

मानव ने मानव की यौन दुर्बलताओं का भरपूर लाभ उठाया है। इस सिलसिले में नवयुवतियों का खुल कर प्रयोग किया गया है। अर्थ-लोभ ने पुरुष को बहुत नीचे गिरा दिया है। उसके कारण 'स्त्रीत्व' का अत्यन्त निन्द्य प्रयोग हुआ है। पुरुष ने अपने व्यवसाय को चमकाने अथवा व्यवसाय की बढ़ोतरी के लिए सुन्दर स्त्री के प्रयोग में भी हिचकिचाहट महसूस नहीं की। बहुत से व्यवसायी और नौकरी पेशा वाले पुरुष अपने व्यवसाय व नौकरी में अधिक उन्नति पाने के लिए, सरकारी अधिकारी अथवा अपने से पद में बड़े अधिकारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सेवा में अपनी पत्नी या बाजारू औरत इसलिए प्रस्तुत कर देते हैं, ताकि अधिकारी खुश होकर उसकी मनोवाञ्छा पूरी कर दे। स्त्री चाहे अपनी पत्नी अथवा बाजारू ही हो, होती तो वह 'स्त्री' ही है, जो अनैतिक-अर्थ-लाभ के प्रलोभन में पुरुष द्वारा किसीकी भेंट चढ़ाई जाती है। यह दुष्कर्म उस समय और भी अधिक घृणित होजाता है, जब पति स्वयं अपनी पत्नी का इस प्रकार प्रयोग करता है और सत्ताधारी पर-पुरुष से सहवास के लिये प्रस्तुत करता है। अगर कोई स्त्री अपनी शारीरिक आवश्यकता अथवा अन्य किसी मजबूरी-वश किसी पर-पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध कायम कर लेती है, तो पुरुष का भद्र समाज उस स्त्री का जीवित रहना मुश्किल कर देता है और उसे कुलटा, नीच, बेशर्म, वेश्या आदि हजारों गालियों से विभूषित कर देता है। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि इस प्रकार की लाञ्छित एवं प्रताड़ित सुन्दरियाँ वेश्या के कोठे पर जाकर वेश्या-वृत्ति करने पर मजबूर होजाती हैं। समाज में प्रवर्तित यह दुहरा मापदण्ड समाज को ही खाये जारहा है। स्त्री के शोषण और स्त्री के द्वारा पुरुष की स्वार्थ-सिद्धि का यह एक जीता-जागता उदाहरण है। जहाँ पुरुष का मतलब सिद्ध होता हो, वहाँ तो वह स्त्री को पर-पुरुष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के संसर्ग में जाने के लिए मजबूर कर देता है, फिर भले ही वह स्त्री इस दुष्कृत्य के जाल में फँसने की विरोधिनी हो। पर जहाँ स्त्री अपनी मजबूरी में अपनी विशुद्ध आवश्यकता वश पर-पुरुष से सम्बन्ध बना लेती है, वहां पुरुष वर्ग उस स्त्री की मिट्टी पलीद किए बिना नहीं छोड़ता। यह स्वयं प्रतिष्ठित एवं नैतिकता के अहम् से मण्डित पुरुष का अन्याय–पूर्ण एकपक्षीय फैसला नहीं तो क्या है ?

सारे प्रतिबन्ध स्त्री के लिए !

पुरुष ने स्त्री-समाज के लिए जितने भी प्रतिबन्ध, बन्धन व नियम बनाए हैं, वे सबके सब एकपक्षीय हैं और सभी से सिर्फ पुरुष का स्वार्थ ही सिद्ध होता है। पुरुष ने नारी को कहीं किसी भी बात में थोड़ी भी स्वतंत्रता व बराबर का अधिकार देने की चेष्टा नहीं की। स्त्री अगर दुर्भाग्य से विधवा होजाती है, तो उसे दूसरी शादी का अधिकार नहीं दिया जाता, जबकि पुरुष अपनी पत्नी के मरने पर दूसरा विवाह कर लेने का प्रतिष्ठित अधिकारी माना जाता है ; पुरुष की चाहे जितनी पत्नियाँ मर जायें, वह हर बार दूसरा विवाह कर सकता है ; इसमें कोई प्रतिबन्ध नहीं होता। स्त्री घर की सफाई, बच्चों की देखभाल, रसोंई बनाना, चौका-बर्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साफ करना आदि कई काम सँभालती है। इसमें उसे पुरुष से अधिक ही परिश्रम करना पड़ता है ; परन्तु पुरुष अगर कारण–वश घर में रह जाता है, तो वह न पत्नी के काम में ही सहायता करेगा, न बच्चों की ही देखभाल करेगा। इतना ही नहीं, अपने छोटे मोटे काम व शारीरिक सेवा की पूर्ति की अपेक्षा भी वह अपनी पत्नी से ही करेगा। एक तरफ स्त्री को पुरुष कोमलांगी और अपने से कमजोर मानता है; दूसरी तरफ उसी कमजोर व कोमलांगी से वह अधिक से अधिक परिश्रम कराना चाहता है, ऐसा परिश्रम–जैसा वह स्वयं करना पसन्द नहीं करेगा।

पत्नी जुएँ में हारी जा सकती है !

जैसा हमने ऊपर बताया है, पुरुष समाज ने अपनी सामाज़िक प्रतिष्ठा, आर्थिक प्रधानता एवं बुद्धि बल से दुहरी मान्यताएँ बनाई हैं; अपने लिए कुछ और तथा अन्यों के लिए कुछ और। उसने स्त्री के लिए यह आदर्श प्रतिष्ठापित किया कि वह अपने पति को अपना 'देवता' माने और उसे अपना सर्वस्व समर्पित कर आजीवन उसकी पूजा करती रहे; यही नहीं पति के मरने पर उसके शव के साथ स्त्री के 'सती' होने का भी विधान क्रियान्वित किया गया ; विधवा होने पर उसका दुबारा विवाह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना वर्जित माना गया। स्त्री को केवल 'सम्पत्ति' के रूप में व्यवहृत किया गया ; पत्नी को पति जुएँ के दाँव पर भी रख सकता था। महाराजा युधिष्ठिर ने द्यूत-क्रीड़ा में 'द्रोपदी' को दाँव पर लगाया था और हारने पर उसे अपने प्रतिपक्षी दुर्योधन को सौंप दिया था। इतना ही नहीं, तीर्थराज प्रयाग में अधिक श्रद्धालु लोग अपनी पत्नी का दान पण्डा को कर देते हैं। पण्डा बाद में कुछ रुपये लेकर पति को पुनः उसकी पत्नी वापस कर देता है।

पुरुष समाज ने इतना कठोर तथा अनिवार्य आदर्श स्त्री के लिए निर्धारित किया है। पर उसने स्त्री के प्रति पुरुष के लिए वैसा ही अनुल्लंघनीय आदर्श कायम नहीं किया। सामाजिक जीवन में पुरुष अपनी पत्नी के अलावा, चाहे जितनी स्त्रियों से सम्पर्क रख कर भी समाज में प्रतिष्ठित बना रह सकता है ; पुरुष वेश्या-गामी होकर भी पवित्र माना जा सकता है ; पातिव्रत धर्म का पालन स्त्री के लिए अनिवार्य है, पर एक पत्नीव्रत का परिपालन पुरुष के लिए कतई आवश्यक नहीं है। कैसा अश्रेयस्कर विधान है यह !!

स्त्री पर यदि थोड़ा भी झूठा शक होजाय, तो वह अपवित्र और कलंकित होजाती है। पर पुरुष अकेला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महीनों तक कहीं भी घूमता रहे, तो भी उस पर कोई अंगुलि-निर्देश नहीं कर सकता ; इसके विपरीत स्त्री अकेली घर से बाहर दो चार घण्टे भी रहे, तो उसकी पवित्रता पर दाग लग जाता है। पुरुष जब चाहे औरत से मनमाना व अनुचित व्यवहार कर सकता है, गाली-गलौज कर सकता है, मारपीट भी कर सकता है, लेकिन औरत को ऐसा करने का पुरुष ने कोई अधिकार नहीं दिया। इस प्रकार पुरुष ने सभी बन्धन, प्रतिबन्ध, अपने पक्ष में, स्वार्थ–पूर्ति की दृष्टि से ही बनाए हैं। इसे पुरुष द्वारा स्त्री के अन्याय पूर्ण शोषण के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है।

यह कुत्सित दहेज प्रथा !

पुरुष द्वारा बनाई गई दहेज प्रथा ने तो स्त्री का शोषण और अधिक किया है। दहेज प्रथा बिना परिश्रम किये धन-दौलत प्राप्त करने की पुरुष की वृत्ति का द्योतक है। लेकिन इसके कारण अविवाहित युवतियों और उनके माँ-बाप को कितना कष्ट व क्लेश होता है, इसकी अनुभूति वे ही लोग कर पाते हैं, जिनके सिर पर यह विपत्ति आती है। आश्चर्य की बात है कि पुरुष वर्ग की इस प्रथा से पुरुष वर्ग को ही बड़ी बड़ी मुसीबतों का सामना करता है, तब भी यह मीठा लालच, पुरुष वर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याग नहीं करपा रहा। धनीवर्ग व मध्यम श्रेणी वाले परिवार तो इस प्रथा को निभा लेते हैं,परन्तु निम्नवर्ग के लिए यह प्रथा अभिशाप बन गई है। भारत में इस प्रथा की वजह से कितनी ही युवतियाँ अविवाहित रह जाती हैं, कितनी ही युवतियाँ आत्महत्या करने को बाध्य होजाती हैं और कितनी ही युवतियों को बुड्ढे अथवा अनमेल पुरुषों के मत्थे मढ़ दिया जाता है, जिसकी वजह से उनकी चिर दग्ध आत्मा उमर भर तड़पती रहती है और उनके जीवन की आकांक्षाएँ मिट्टी में मिल जाती हैं। कई युवतियाँ यौवन का भार न सँभाल पाने के कारण अथवा उत्तेजना-पूर्ण स्थिति में उलझकर जब कोई गलत कदम (पुरुष की नजरों में गलत) रख देती हैं, तब उन्हें वेश्याओं के कोठों पर बैठने के लिए पुरुष वर्ग मजबूर कर देता है। बहुत सी युवतियों को पुरुष वर्ग कम दहेज लाने के कारण जिन्दा जलाकर, जहर देकर, गला घोंटकर मार डालता है, ताकि लड़के की दूसरी बार शादी की जासके, जिसमें उसे भारी दहेज प्राप्त हो। इस प्रकार यह अस्वस्थ एवं कुत्सित दहेज प्रथा स्त्री के शोषण में किसी बात में पीछे नहीं है।

देवदासी-प्रथा

कुछ समय पहले भारतवर्ष के मन्दिरों में देवदासी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथा प्रचलित थी। देवदासी देवता को समर्पित होती थी। होता यह था कि माता-पिता देवता की मान्यता के लिए जन्म से ही अपनी कन्या को देवार्पित कर देते थे और बड़ी होने पर उसे मन्दिर के पुजारियों के पास नृत्य द्वारा देवाराधना के हेतु छोड़ आते थे। विधिवत देवार्पित होने पर वह नृत्य कला में पारङ्गत की जाती थी और नृत्यांगना के रूप में देव-पूजन के समय अपने सुन्दर नृत्य तथा भावभङ्गिमा द्वारा देवता को रिझाना तथा प्रसन्न करना उसका नित्य का धर्म होजाता था। देवदासियों के लिए नियम यह था कि वे आजीवन अविवाहित रहकर देव-सेवा करती रहें। उनके लिए ब्रह्मचर्य व्रत की व्यवस्था की गई थी। चूँकि देवदासी का विवाह देवता के साथ होजाता था, फलतः वह पुरुष-संग से वर्जित कर दी जाती थी। पर पुरुष की कामुक दृष्टि से वह कैसे बच पाती? सौंदर्य, यौवन के उभार तथा वासना के ज्वार के आनन्द से पुरुष अपने को कैसे वञ्चित कर लेता। ऐसी अवस्था में देवता को प्रसन्न करने के साथ, उसे पुजारियों तथा धर्माचार्यों की पर्यङ्क-शायिनी भी बनना पड़ता था। इस प्रकार से देवदासी का रूप वही होगया, जो वेश्या का होता है। देवताओं को अर्पण की हुई देवदासियों को भी पुरुष ने अपनी भोग्य सामग्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाने में हिचकिचाहट महसूस नहीं की, इससे अधिक देवता के अपमान और पुरुष की नीचता का दूसरा क्या उदाहरण मिलेगा ?

युवतियों के क्रय-विक्रय का रोजगार

पुरुषों के बहुत से ऐसे गिरोह भी हैं, जो युवतियों के क्रय-विक्रय का लाभकारी व्यवसाय करते हैं और अपनी जीवन-गाड़ी को, इसी व्यवसाय के सहारे बड़े आराम व ऐश से चलाते हैं। इस व्यवसाय में लगे पुरुषों की नजर में भेड़ बकरी अथवा किसी जड़ पदार्थ से अधिक महत्व औरत का नहीं होता। पुरुष अगर स्त्री का महत्व अपने समान ही समझता तो उसे बाजार में क्रय-विक्रय की वस्तु न बनाता। इस व्यवसाय में लगे पुरुष जगह जगह घूमते रहते हैं। भोली-भाली युवतियों को किसी प्रलोभन या जीवन के सुनहरे सपने दिखाकर, वे अपने चंगुल में फंसा लेते हैं और किसी मनचले पुरुष अथवा वेश्या-वृत्ति चलाने वाली घाघ औरत के हाथ उन्हें बेंच देते है अथवा बाहरी मुल्कों के दलालों की सेवा में अच्छी खासी रकम लेकर उन्हें सुपुर्द कर देते हैं। ये दलाल युवतियों को दूसरे मुल्कों में ले जाकर फिर वहाँ के किसी मनचले रईस के हाथ बेंच देते हैं। वहाँ इन युवतियों को अपने खरीदार स्वामी की यौन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिपासा शान्त करने के साथ-साथ कमरतोड़ परिश्रम भी करना पड़ता है और वहाँ त्रास-पूर्ण नारकीय जीवन जीना पड़ता है। आजकल भी भारतीय युवतियाँ मुस्लिम एवं ईसाई देशों के दलालों को बेची जारही हैं, जिनकी वहाँ हर प्रकार से मिट्टी पलीद की जाती है। बाहर भेजी गई ऐसी कुछ युवतियाँ अपने चातुर्य तथा साहस के बल वापस भारत आने में सफल होगई हैं। लौटी हुई इन स्त्रियों की दारुण व्यथा—कथा सुनने से रोंगटे खड़े होजाते हैं।

इस प्रकार के अनेक काण्ड होते रहते हैं, जिनसे पता चलता है कि पुरुष ने किस प्रकार औरत का मन-माने ढंग के प्रयोग किया है तथा औरत के साथ उसने कितने अत्याचार व अन्याय किए हैं निस्सन्देह पुरुष ने स्त्री को बेजान कूड़ा कर्कट समझ कर उसके साथ मन-माना खिलवाड़ किया है। उसने इस सत्य की उपेक्षा की है कि स्त्री के पास भी दिल होता है और उसकी भी कुछ अभिलाषाएँ एवं आकाक्षाएँ होती हैं। पुरुष की भाँति स्त्री भी अपने जीवन में सुनहले स्वप्न सँजोती है। परन्तु विलासी पुरुष अपनी कामुकता की तृप्ति के लिए इन कोमल सुकुमार स्वप्नों को चकनाचूर कर देता है और स्त्री का सारा रस निचोड़ कर चूसे हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नींबू की भाँति उसे शेष जीवन में ठोकरें खाने के लिए छोड़ देता है। पुरुष कितना स्वार्थी, क्रूर तथा कठोर होता है—स्त्रियों के प्रति किये जाने वाले ये दुर्व्यवहार इसके प्रमाण हैं। वास्तव में पुरुष ने सिर्फ अपने पुरुषत्व और भौतिक इन्द्रिय-सुखों का ही महत्व समझा और उन्हींकी पूर्ति के लिए उसने औरत का जैसा चाहा, उपयोग किया।

पुरुष के जीवन की स्त्री प्रेरक शक्ति है तथा स्त्री के जीवन को पुरुष साहस, आश्रय तथा विश्वास प्रदान करता है। संसार में बहुत ही कम ऐसे पुरुष हुए होंगे, जिन्होंने अपने जीवन-काल में स्त्री के कोमल एवं आकर्षक साहचर्य की आवश्यकता न महसूस की हो। स्त्री के बिना पुरुष का जीवन व्यवस्थित ढंग से नहीं चल पाता और पुरुष के बिना स्त्री का जीवन आश्वस्त, सुरक्षित तथा निर्द्वन्द्व नहीं रह पाता। पुरुष की शारीरिक भूख की तृप्ति तो (पत्नी) के बिना पूरी हो ही नहीं पाती; पुरुष की जीवन-रूपी गाड़ी भी 'पत्नी' के सहयोग के बिना, बहुत कठिनाई से ही चल पाती है। पुरुष के लिए स्त्री का इतना अधिक महत्व होते हुए भी, पुरुष ने उसकी न तो कभी कीमत समझी और न कभी उसके अनुरूप उसे आदर-मान ही दिया। चूँकि स्त्री पुरुष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अधीन रहकर ही निश्चिन्त जीवन बिता सकती है, इसीलिए वह अनेक कष्टों को सह कर तथा अपने मन की इच्छाओं को मार कर भी पुरुष की छाया छोड़ नहीं पाती। स्त्री के लिए जिस सामाजिक मर्यादा तथा पारिवारिक दायित्व का विधान किया गया है, उसके अन्तर्गत आचरण करने में ही स्त्री की शोभा मानी गई है। अपने लिए अंगीकृत इस आदर्श पर समारूढ़ रहने की दृढ़ मान्यता के कारण ही स्त्री को विविध रूपों में चतुर पुरुष ने प्रवञ्चित तथा लाञ्छित किया है।

असूर्यम्पश्या

पुरुषों ने स्त्रियों के चरित्र पर कभी विश्वास नहीं किया ; इसीलिए उन्हें निरन्तर परदे में रखने तथा चहारदिवारी में बन्द रखने की निर्मम व्यवस्था की गई। बहुधा स्त्रियों को ऐसे कठोर नियन्त्रण में रखा जाता था कि वे यावज्जीवन सूर्य के दर्शन न कर सकें। उन्हें इसीलिए 'असूर्यम्पश्या' कहा जाता था। ऐसा समझा जाता था कि स्त्रियों के सौंदर्य पर अन्य पुरुष भी कामासक्त होकर उन्हें पथ-भ्रष्ट कर सकते हैं। इससे बचने के लिए यह कठोर व्यवस्था की गई थी कि वे भवनों में इस प्रकार घिरी रहें कि उन्हें अन्य पुरुषों का तो क्या, सूर्य की किरणों का भी दर्शन न होने पाये। यह भी एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारणा थी कि स्त्री में काम-भावना पुरुषों की अपेक्षा कई गुनी अधिक होती है, फलतः अवसर मिलते ही स्त्री आसक्त होकर अन्य पुरुषों के प्रेम में बँध जा सकती है, जिससे सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन विश्रृङ्खल होसकता था। ऐसी अवस्था में समाज के शक्तिधारी पुरुष-नियन्ताओं ने यह विधान बनाया कि नवयुवतियों को घरों के अन्दर इस प्रकार बन्द रखा जाये कि वे किसी पर-पुरुष के सम्पर्क में जा ही न सकें। ऐसी स्त्रियाँ जब गंगा-स्नान करने जाती थीं, तो उनके मार्ग भर में दोनों तरफ से परदे टाँग दिये जाते थे और इस प्रकार वे बाह्य जगत से अलग रह कर गंगा-स्नान का पुण्य अर्जित करती थीं।

अमानवीय सती प्रथा

पति के मरने पर स्त्री अन्य पुरुष से सम्पर्क कर चरित्र-भ्रष्ट होसकती थी। इससे बचने के लिए समाज में सती प्रथा का क्रूरता-पूर्वक प्रचलन किया गया। मृत पति के शव के साथ चिता पर जल कर मर जाने से स्त्री का सतीत्व अक्षुण्ण बना रहता था और इसे स्त्री के पति-परायणा होने तथा पातिव्रत–धर्म के परिपालन का नैष्ठिक प्रमाण माना जाता था। स्त्री के सती होजाने पर उसके चरित्र-भ्रष्ट हो सकने की सम्भावना का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवाल ही नहीं उठता था। जब बाँस ही नहीं होगा, तब न बाँसुरी बनेगी, न बजेगी ही।

स्त्रियाँ-शिक्षाधिकार से वंचित

पुरुषों ने यह भी व्यवस्था की कि स्त्रियों के अन्दर आत्मशक्ति, आत्मविवेचन, तर्कशक्ति तथा विचार करने की क्षमता का विकास ही न हो। पुरुषों एवं पतियों के प्रति उनकी अन्धश्रद्धा रूढ़िगत होकर बनी रहे—ऐसा सर्वमान्य विधान उन्होंने बनाया। इसके लिए उन्होंने शिक्षा एवं ज्ञान के क्षेत्र का दरवाजा स्त्रियों के लिए बन्द कर दिया। स्त्री और शूद्र को शिक्षा देने का निषेध कर दिया गया और इसके लिए शास्त्रीय व्यवस्था कर दी गई। इस व्यवस्था के पक्ष में चाहे जो कहा जाय, पर असलियत पुरुष समाज में व्याप्त यह भय था कि अगर स्त्री भी शिक्षित एवं ज्ञान-सम्पन्न होजायेगी तो पुरुषों के समक्ष समान स्तर पर आत्मस्वातन्त्र का दावा वह भी करेगी। इससे पुरुषों का समाज पर एकच्छत्र प्रभुत्व खण्डित होजायेगा। इस प्रकार शिक्षा प्राप्त कर जब स्त्री-शक्ति जाग्रत एवं उद्‌बुद्ध हो जायेगी तो फिर वह पुरुषों द्वारा अपने विरुद्ध निर्मित क्रूर विधानों को मानने से इन्कार कर देगी; न वह पुरुषों की आजीवन दासता एवं गुलामी करने की व्यवस्था को ही मानेगी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और न घर के अन्दर बन्द रह कर पुरुषों की भोग-सामग्री बनना ही पसन्द करेगी और न मृत पति के शव के साथ जीवित जल जाने के निर्मम विधान को ही स्वीकार करेगी। इसके विपरीत होगा यह कि वह हर क्षेत्र में पुरुषों से समानाधिकार-प्राप्ति के लिए संघर्ष करेगी, जिसे अन्ततः स्वीकार करना ही पड़ेगा।

यह स्पष्ट है कि पुरुष समाज ने कभी नहीं चाहा कि स्त्रियों को उनके समान अधिकार प्राप्त हों और वे उनसे हर क्षेत्र में बराबरी का दावा करें ; क्योंकि इससे पुरुषों के सर्वश्रेष्ठ होने के अहंकार पर आघात होता था और उनका वर्चस्व समाप्त होजाता था। इसीलिए विधवा होने पर भी स्त्री को पुनर्विवाह का अधिकार तथा सुविधा न देकर उसे सती होने के लिए विवश किया गया, जबकि पुरुष के विधुर होजाने पर उसे कुमारी कन्याओं से मनमाने विवाह करते रहने की सर्वमान्य व्यवस्था कर दी गई। विवाहित पत्नी के अतिरिक्त अन्य स्त्रियों से अथवा वेश्याओं से अनैतिक सम्बन्ध कायम करने की भी पुरुष को हमेशा छूट दी गई है और इससे उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा में कभी कोई आँच नहीं आने पाई।

इससे स्पष्ट है कि पुरुष ने नारी समाज पर अन्याय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं छोड़ी। इस प्रकार थोपी गई सामाजिक व्यवस्था में स्त्री लाचार होकर बेजुबान पशु की तरह पुरुष द्वारा किये गये अत्याचारों को सहन करती रही।

नगरवधू तथा विषकन्या

प्राचीन समय में नगर की सबसे चंचल और सबसे सुन्दर षोडशी बाला को पुरुष वर्ग द्वारा 'नगर वधू' के रूप में चुना जाता था। यह षोडशी पूरे नगर के पुरुष वर्ग को 'वधू' के रूप में सम्मान्य होती थी। फलतः समस्त नागरिक—अमीर-गरीब, छोटे-बड़े, युवा-वृद्ध—इस 'वधू' के साथ मनोरञ्जन, हास-परिहास, एवं विलास-उल्लास की सुविधा प्राप्त कर सकते थे; उसे किसी एक पुरुष की 'वधू' बनने की आज्ञा नहीं होती थी, फलतः उसे मन मार कर, अपनी आकांक्षाओं को त्याग कर, नगर के पुरुषों का मनोरंजन का साधन बन कर सारी आयु बितानी पड़ती थी। इसी प्रकार किसी अनुपम सौंदर्यवती युवती को 'विषकन्या' बनाया जाता था। जिस सुन्दरी को विषकन्या के रूप में परिणत करना होता था, उसे प्रारम्भ से ही मादक तथा नशीले द्रव्यों का सेवन कराया जाता था। धीरे धीरे उसे अफीम तथा धतूरे जैसे विषैले पदार्थों के सेवन का आदी बना कर तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक तीव्र एवं उग्र विषों का पान करा कर उसके सारे शरीर को जहरीला वना दिया जाता था। इस विष-कन्या का प्रयोग शत्रुओं के विरुद्ध किया जाता था। विषकन्या अपने अनुपम सौंदर्य के बल पर शत्रुओं को मुग्ध कर उन्हें अपने प्रति आकृष्ट कर लेती थी। इस प्रकार सौंदर्य–लुब्ध होकर जब शत्रु उस विषकन्या के शरीर से सम्पर्क एवं सम्भोग करता था, तब वह तत्क्षण मृत्यु को प्राप्त होता था। इसलिए इस कन्या को दुश्मन के अलावा अन्य किसी भी पुरुष से मिलने नहीं दिया जाता था। इस प्रकार यह सुन्दर विषकन्या आजीवन प्रेम-विहीन नीरस जीवन बिताने के लिये बाध्य होती थी और वह पूरी उमर बिलखती, तड़पती, अरमानों को कुचलती हुई, अभिशप्त अप्सरा की भाँति उच्छ्वसित तथा विगलित होती रहती थी। इस प्रकार पुरुष ने अनेक प्रकार से औरत का दुष्प्रयोग किया, जिससे औरत की सारी जिन्दगी घुटन और तड़पन के बीच रोती कलपती बीतती रही।

प्राचीन समय में होटल व क्लब नहीं होते थे। एक दूसरे नगर की यात्रा घोड़ों, बैलगाड़ियों पर या पैदल करनी पड़ती थी। इन यात्रियों के विश्राम के लिए चार छह मील के अन्तर से एक प्रकार के होटलनुमा सराय-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा विश्रामालय बने होते थे। इन सरायों में खाने-पीने, विश्राम आदि प्रबन्ध के अलावा, पुरुषों के हर छोटे बड़े वर्गों के अनुसार सुन्दरियों का प्रबन्ध भी रहता था, जो हर वर्ग के पुरुष का, हर तरह से मनोरंजन व यौन-तृप्ति करती थीं। इस प्रकार पुरुष ने औरत को कदम कदम पर मनोरंजन और यौन-तृप्ति का साधन बना रखा था। पुरुष ने हमेशा हर जगह औरत को मनमाने ढंग से कठपुतली की तरह अँगुली के इशारे से नचाया। पुरुष ने आरम्भ से ही औरत के दिल में ऐसे बन्धन और प्रतिबन्ध भर दिए, जिन्हें भोली भाली औरत विवश पक्षी की तरह चुपचाप मानती रही। पुरुष का सहारा छोड़ देने पर, जिन्दगी का गुजारा सम्भव नहीं था और पुरुष की समानता करने लायक अक्ल व शिक्षा उसे प्राप्त होती नहीं थी, इसलिए जिधर पुरुष का इशारा मिला, बिना उचित अनुचित का अनुमान किए, उधर ही उसने चलना आरम्भ कर दिया। अगर पुरुष किसी प्रतिबन्ध या बन्धन बनाने के समय औरत की सलाह लेता अथवा पुराकालीन स्त्री-समुदाय में इतनी जागृति हुई होती कि वह इन अन्याय पूर्ण और मनमाने प्रतिबन्धों का विरोध कर पाती, तो न तो स्त्रियों को इतने बर्बर अत्याचार सहने पड़ते और न ही पुरुष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ग की इतनी हिम्मत बढ़ती कि वह हर बात में सिर्फ एकतरफा स्वार्थ ही साधे।

संसार में जितनी भी औरतें वेश्याओं के कोठों पर बैठ चुकी हैं या बैठी हुई हैं, संसार में जितनी भी औरतों अथवा युवतियों द्वारा आत्महत्याएँ की गई हैं—इन सबका एक मात्र कारण है पुरुष समाज का महिलाओं पर अत्याचार। पुरुष समाज ही ऐसी स्थिति पैदा करता है, जिसकी वजह से औरत को आत्महत्या अथवा कोठों पर बैठने के लिए विवश होना पड़ता है। ऐसी स्थितियां पैदा करने के दण्ड के रूप में परेशानी भी पुरुष वर्ग को ही भुगतनी पड़ती है। संसार में जितनी वेश्याएँ हैं उनको वेश्या बनाने में पुरुष का ही हाथ है और ये वेश्याएँ अब पुरुष समाज के लिए ही समस्या बन गई हैं। इस प्रकार पुरुष औरत के साथ अपनी मनमानी करके औरत का शोषण तो करता ही है, स्वयं भी सुख नहीं पाता।

यह अतृप्त काम-पिपासा

प्राचीन समय के राजा-महाराजा, बादशाह, नवाब, जागीरदार जैसे सत्ताधीशों में कामवासना तथा यौन-पिपासा इतनी तीव्र, प्रखर तथा सीमाहीन होती थी—कि उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। इस प्रकार के पुरुष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनेकों शादियां करते और अनेक सुन्दरियाँ उनकी दासी अथवा बाँदी बन कर रहतीं एवं उनकी यौनतृप्ति में साधक बनतीं। शादियों में दहेज के रूप में बाँदियाँ मिलतीं सो अलग। इस प्रकार एक एक पुरुष के पास सैंकड़ों सुन्दरियाँ एकत्रित हो जातीं, तब भी शासक लोग अपने शासित क्षेत्र की सुन्दर बहू-बेटियों को भी अछूता नहीं छोड़ते। चलते फिरते कोई सुन्दर बहू-बेटी नजर आगई, अथवा उसके एजेण्टों ने कोई सुन्दर बहू-बेटी को खोज निकाला, तो उसको साम दाम दण्ड भेद रीतियों से किसी न किसी प्रकार पकड़ कर रंगमहल में डाल लिया जाता था और उसका शील भंग कर दिया जाता था अथवा उसके साथ बलात्कार किया जाता था और इस प्रकार बेइज्जत युवती अक्सर आत्महत्या करके अपनी इहलीला समाप्त कर देती थी, या कोई बहुत ढीठ होती तो वेश्या बन जाती थी। इन्हीं राजा महा-राजाओं की, बहू-बेटियों पर, जोर जबर्दस्ती के कारण ही बहू-बेटियों ने अपने तन व चेहरे को छिपा कर रखना शुरू किया, जिससे वे इन लोगों की लोलुप दृष्टि से बच सकें। धीरे धीरे यही व्यवस्था पर्दा प्रथा बन गई, जो भारत के कई प्रदेशों में आज भी प्रचलित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज की जाग्रत स्त्री

पुरुष आदि काल से ही स्त्री का शोषण और उसका मनमाना प्रयोग करके एवं उसकी कोमल आकांक्षाओं पर कुठाराघात करके उस पर अत्याचार करता आया है। जब तक स्त्री ने चुपचाप बिना विरोध के पुरुष के ये अत्याचार सहे, तब तक पुरुष के अहं को कोई ठेस नहीं पहुँची ! परन्तु अब समय बदल गया है; नारी शिक्षित होकर अपना भला बुरा स्वयं सोचने लगी है और दुनिया-दारी की बातों की जानकार भी होती जा रही है। आज की स्त्री पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर चलने की चेष्टा कर रही है और बहुत कुछ इसमें वह सफल भी होगई है। इसका प्रमाण आज के सरकारी व गैर-सरकारी कार्यालयों में स्त्रियों द्वारा विविध पदों पर दायित्वपूर्ण काम करने में मिलता है। इसके अलावा पुरुष के हर जटिल काम में भी स्त्री सहयोग कर रही है, जैसे सेना व पुलिस में, डाक्टरी व शिक्षा विभागों में तथा वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में हर प्रकार के अन्य कामों में पुरुष को स्त्री का सहयोग मिल रहा है। आज की स्त्री प्राचीन काल की स्त्री से बहुत चतुर, चालाक व स्वतंत्र प्रवृत्ति वाली भी होगई है। चूँकि स्त्री हर क्षेत्र में पुरुष की बराबरी कर रही है, अतः पुरुष के 'अहं'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ठेस लग रही हो तो क्या आश्चर्य ! इसीलिए पुरुष इस बराबरी को सहन नहीं कर पा रहा है। आज हर पुरुष की जबान पर स्त्री की स्वतंत्रता की निन्दा की चर्चा रहती है, क्योंकि पुरुष वर्ग अब भी स्त्री का वही प्राचीन दासता का रूप देखना चाहता है। आधुनिक युवा वर्ग ने फिर भी स्त्री की स्वतंत्रता स्वीकार कर ली है, पर बुजुर्ग और प्राचीन भावना वाले पुरुष इस स्वतंत्रता को किसी भी तरह स्वीकार नहीं कर पा रहे।

आज भी स्त्री-अंगों का प्रदर्शन !

यह एक आश्चर्यजनक बात है कि पुरुष हमेशा स्त्री को मनोरंजन का साधन बनाता आया है। आज भी स्त्री का प्रयोग पुरुष के मनोरंजन के कार्यों में कदम कदम पर होता है। आज की नारी इतनी प्रगतिशील होकर भी पुरुष को अपने मनोरंजन का साधन न बनाकर, उल्टा स्वयं को ही उसके मनोरंजन का साधन बनाए हुए है। होटलों एवं क्लबों में भद्र कुल की महिलाएँ लास नृत्य करती हैं, बाल डान्स और कैबरे नृत्य करती हैं और अपनी देह को विवस्त्र कर दर्शकों का नग्न रूप में मनोरंजन करती हैं। इस प्रकार कामुकता का वातावरण उत्पन्न कर वे उपस्थित जन-समूह को उन्मत्त बनाने की साधन बनती हैं। चलचित्रों में भी अभिनेत्रियों की अदाएँ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नजाकत, भाव-भङ्गिमा तथा अभद्र प्रदर्शन दर्शकों को विलासोन्मुख बनाते हैं। चलचित्रों और व्यावसायिक विज्ञापनों में भी सुन्दरी महिला को ही नग्न अथवा अर्द्ध नग्न स्थिति में दिखाया जाता है, जो पुरुष वर्ग के लिए उन्मादक आकर्षण की माध्यम बन जाती है। बाजार में जितने आधुनिक उपन्यास एवं कहानी की पुस्तकें दिखाई देती हैं, उन पर भी औरत के शरीर के उत्तेजक अंगों का खुला प्रदर्शन होता है। हमारी समझ में यह नहीं आता कि आज के स्त्री-समुदाय में इतनी जागृति होने के बाद भी कैसे नारियाँ इस अपमान को बर्दाश्त कर लेती हैं। हो सकता है कि लाखों वर्षों से स्त्री जिस आकर्षक रूप में अपने को प्रस्तुत करती रही है, उससे मुक्त हो पाने का साहस वह अपने में न बटोर पा रही हो।

पुरुष ऐसा स्वार्थी और सन्दिग्ध अस्थिर मनोवृत्ति का प्राणी है कि किसी चीज की कमी भी बर्दाश्त नहीं कर सकता और मनोवाञ्छित वस्तु मिलने पर बहुत जल्दी उसका महत्व भी भूल जाता है। पुरुष का स्त्री के बिना एक दिन भी काम चलना मुश्किल है। स्त्री को तो सिर्फ पुरुष का सहारा ही चाहिए; परन्तु पुरुष को अपने जीवन-काल में प्रत्यक्ष रूप से विभिन्न प्रकार के कई कामों में स्त्री की आवश्यकता पड़ती है। तब भी पुरुष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने स्त्री को, उसकी अपने जीवन की आवश्यकता के अनुसार, कभी आदर-मान नहीं दिया। दूसरी तरफ भारत में आल्हा-ऊदल के समय में सुन्दरियों को प्राप्त करने के लिए समराङ्गण में युद्ध कर उन्हें विजित करना आवश्यक था। उस समय संघर्ष एवं छल-छद्म द्वारा स्त्रियों का अपहरण भी किया जाता था। इस प्रकार की लड़ाइयों में कितने निर्दोष सैनिकों का वध होजाता था, कितने पशु हाथी घोड़े आदि मारे जाते थे, कितना धन बर्बाद होता था—इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। यह सब होता था अपने ऐश्वर्य-विलास के हेतु राजकुमारियों को जीत कर अपहृत करने के लिए!! राजस्थान के चितौड़गढ़ के राजकुमार रत्नसिंह की रानी पद्मिनी को पाने के लिए अलाउद्दीन खिलजी ने तीन चार बार चितौड़गढ़ पर चढ़ाई की थी, जिसमें दोनों तरफ के हजारों आदमी, हजारों घोड़े—हाथी मारे गए, कई गाँवों को लूट कर नष्ट कर दिया गया। ये सब काण्ड हुए सिर्फ एक परम सुन्दरी स्त्री को पाने के लिए। पुरुष की यह स्वार्थी दुर्नीति नहीं है तो क्या है? एक तरफ सम्प्राप्त नारी पर मनमाने अत्याचार एवं मनमाने अनुचित प्रयोग किये जाते रहे और दूसरी तरफ सुन्दरियों को प्राप्त करने के लिए बड़ी बड़ी लड़ाइयाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा बड़े बड़े युद्धों की रचना की जाती रही।

आधुनिक प्रगतिशील देशों ने तो स्त्री की स्थिति और भी अधिक दुखदायी बना दी है। एक ताज. समाचार के अनुसार ब्रिटेन में दस से तेरह साल की आयु वाली चालीस हजार लड़कियाँ १९७२–७३ में गर्भवती पाई गईं। इतनी छोटी उम्र की लड़कियों की यौन-क्रिया में दिलचस्पी नहीं हो सकती, जब तक कामुक पुरुषों की जमात उन्हें इस दिशा की ओर आकर्षित न करे। इसमें शक नहीं कि अपरिपक्वावस्था में यौवन-सन्धि के अवसर पर अज्ञातयौवना नारियों के भीतर जो एक प्रकार की उत्कण्ठा, कसमसाहट तथा जिज्ञासा-वृत्ति जाग्रत होती है, उसमें वे पुरुषों के चातुर्य-पूर्ण बहकावे में आसानी से फँस कर पुरुषों के वशीभूत हो जाती हैं। ऐसी अवस्था में वे कच्ची उम्र में यदि गर्भवती होकर अपना जीवन बिगाड़ लेती हैं, तो इसका परिणाम अनिष्टकर तो होगा ही। इस उम्र में लड़कियों का माँ बन जाना उनके जीवन के लिए विघातक तो होगा ही। यह तो एक प्रकार से उनके जीवन से खिलवाड़ कर उनका विनाश करना ही हुआ। पता नहीं पुरुष की काम-पिपासा इतनी क्यों बढ़ गई है, कि वे नाबालिग लड़कियों का जीवन भ्रष्ट करने में भी किञ्चित् नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकुचाते। भारत में तो पांच छह साल की लड़की के साथ भी बलात्कार के समाचार अक्सर समाचार पत्रों में देखने को मिलते हैं, जिसे पुरुष की नीचता की पराकाष्ठा ही समझना चाहिए।

भारत में स्त्री को 'अबला' कहा गया है। वस्तुतः अबला नारी आदि काल से ही पुरुष के मनमाने अत्याचार और मनमाने प्रयोगों को सहन करती आई है और इस प्रगतिशील वैज्ञानिक युग में भी, उसकी स्थिति में कोई सन्तोषजनक सुधार नहीं दिखाई पड़ता। आज भी वह पुरुष के हाथ की कठपुतली मात्र बनी हुई है। जैसा हमने ऊपर बताया है, मानव जाति स्त्री और पुरुष दोनों को लेकर बनी है। ईश्वर ने स्त्री को पुरुष की सहयोगिनी, सहकर्मिणी तथा सहचारिणी के रूप में निर्मित किया है। पर पुरुष ने उसके साथ जो अमानवीय अनाचार एवं अत्याचार किये हैं, जिनमें से कुछ का वर्णन हमने ऊपर किया है, वे असन्दिग्ध रूप से पुरुष समाज पर घनघोर कलंक के समान हैं। इन्हें मानव की बुद्धिमानी एवं उसकी श्रेष्ठता का प्रमाण कतई नहीं माना जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठों में-

आज के मानव का सम्पूर्ण व्यक्तित्व दूषित एवं क्षणिकइन्द्रिय-सुखों से अभिभूत होगया है। फलतः वह शरीर-सुखों की प्राप्ति के लिए इतना आतुर होगया है कि प्रत्येक प्रकार की बेईमानी, विश्वासघात, छल-कपट, विद्वेष तथा अनैतिक आचरण बेहिचक करने के लिए वह प्रति क्षण उद्यत रहता है। साधारण जन समुदाय से लेकर शासन के कर्णधार सभी इस प्रकार की विलासोन्मुख भावना से उद्भ्रान्त हैं। इस वातावरण में सत्य, ईमानदारी, त्याग तथा सद्वृत्तियों की नित्य-प्रति हत्या होती रहती है। आत्मा को भुला-कर शरीर को ही सर्वस्व मान लेने का यह दुष्परिणाम है। आगे के पृष्ठों में इसी पर मार्मिक विचार प्रस्तुत किये गये हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ | असन्तोषी कपटाचारी मानव

संसार के पर्दे पर मानव ही एक ऐसा प्राणी है, जिसे अपने जीवन-काल में बहुत से आडम्बर और निरर्थक वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है, फिर भी सांसारिक सुखों व भोग से 'मानव' की पूर्ण तृप्ति नहीं हो पाती। इसलिए मानव की लालसाओं का सम्मोहक इन्द्रजाल फैलता ही जाता है और उसकी मृगतृष्णा अहर्निश बढ़ती ही जाती है। प्रगल्भ इन्द्रियों का ज्वार जब उफनने लगता है, तब मानव उनको परितृप्त करने के लिए हर प्रकार के उचित अनुचित कार्य करने के लिए उद्यत होजाता है। ऐसे समय वह अच्छे-बुरे का कोई लिहाज नहीं करता ; अपनी भोगेषणा की सन्तुष्टि के लिए वह अपने को न जाने कितने छल-छन्दों तथा कपट-कार्यों में उलझा लेता है। वह अपने ईमान तथा सच्चाई को तिलाञ्जलि देकर भी दैहिक वासना को सन्तुष्ट करना चाहता है। पर वह तृप्त कभी हो नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाता। एक लालसा पूरी होने को आई, तो दूसरी उससे पहले ही जागृत हो जाती है। जैसे किसी मानव के पास पचास रुपये की पूंजी हो तो पहले उसकी लालसा एक सैकड़ा पूरा करने की होगी, और एक सैकड़ा पूरा होते होते दूसरे सैकड़े की लालसा जग जाएगी; और फिर दूसरे से तीसरा, तीसरे से चौथा, इस तरह से आगे से आगे लालसा बढ़ती ही जायेगी। इस प्रकार जमा की गई पूँजी सिर्फ लालसा की पूर्ति ही करती है, किसी प्रयोग में नहीं आती, क्योंकि प्रयोग करने से तो पूँजी घटने लगेगी, तब लालसा को ठेस लगेगी और मानव का हृदय विचलित होने लगेगा।

लालसा-जो बेईमान बनाती हैं

मानव की लालसा ही मानव को बेईमान तथा कपटी बनाती है, परन्तु इस प्रकार मृगमरीचिका से न तो मानव की कभी प्यास बुझी है और न मानव-जीवन की किसी आवश्यकता की ही पूर्ति हुई है। यह मानव मन का एक वहम मात्र है, जो मानव को निश्चिन्त होकर नहीं बैठने देता। मानव को पेट भरने तथा तन ढकने के साधन एवं बैठने सोने के लिए झोपड़ी—बस इससे अधिक किसी वस्तु को आवश्यकता नहीं होती, परन्तु मानव-मन इतना लोभी है कि संसार के हजारों प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के आडम्बरों का उपभोग करके भी उसको सन्तोष नहीं होता। आडम्बर अथवा अनावश्यक चमक-दमक व विलासिता की प्राप्ति के लिए समस्त संसार के मनुष्य एक दूसरे को पछाड़ कर आगे बढ़ना चाहते हैं। इससे पूरी मानव जाति परेशान है। इतना ही नहीं, मानव अपनी जाति के साथ, स्वार्थ-साधन के लिए, कपट व बेईमानी भी करता है। इस कपट व बेईमानी का असर कर्त्ता पर भी पड़ता है, क्योंकि उसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप अन्य लोग भी उसके प्रति इसी प्रकार के कपटाचरण करते हैं। इस प्रकार मानव एक भूलभुलैया के चक्कर में फँसे हुए प्राणी की तरह सुखों की प्राप्ति के लिए स्वयं ही दुःखों को आमन्त्रित करता है और दुःख आने पर फिर उसके निवारण के लिए नए दुःखों को निमन्त्रण दे बैठता है। लेकिन फिर भी मानव की समझ में यह तथ्य नहीं आरहा है कि कपट व बेईमानी को छोड़ कर जो कुछ सत्यमार्ग पर समारूढ़ रहने से प्राप्त होसके, उसी पर उसे सन्तुष्ट होजाना चाहिए। इससे मानव जिस सुख-शान्ति की खोज में भटक रहा है अथवा परेशान होरहा है, वह सब सर्वजन-कल्याण की भावना पर चलने से अपने आप प्राप्त हो जायेगी और कपटी व बेईमानी का कलंक भी उस पर नहीं लग पाएगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलावटी नकली व्यवसाय

मानव को कितनी अनावश्यक वस्तुएँ चाहिए, हर बात में कितना विस्तार चाहिए, इसकी कोई सीमा ही नहीं दिखाई देती। एक छोटा सा व्यवसाय है, उसमें एक मानव-परिवार का गुजर आराम से होरहा है, परन्तु मानव इससे सन्तुष्ट नहीं होगा। मानव उस व्यवसाय का अधिक से अधिक विस्तार करने की चेष्टा करेगा, जिससे उसकी वाञ्छित अनावश्यक वस्तुओं की पूर्ति होसके। व्यवसाय के विस्तार के लिए कपट व बेईमानी आवश्यक है, नहीं तो विस्तार सम्भव नहीं होगा। इस तरह से मानव जानबूझ कर, बिना प्रयोजन, कपट और बेईमानी करता है, जिसका स्वयं उसको और उसकी जाति को उससे उत्पन्न कुफल भी चखने पड़ते हैं। आज-कल के व्यवसायों में नकली और मिलावटी वस्तुओं का पाया जाना व्यवसाय-विस्तार का एक साधन मानव ने बना रखा है, जो कपट व बेईमानी का स्पष्ट उदाहरण है। यह मानव जाति द्वारा अनेक बीमारियों से ग्रस्त होने तथा उसकी शारीरिक शक्तियों के ह्रास का भी प्रत्यक्ष प्रमाण है।

दूसरे के हक पर कब्जा

मानव के रहन-सहन का तरीका भी छल-छद्म तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रपञ्च से भरा हुआ है। मजबूरी की बात और है, अन्यथा एक मानव-परिवार अपने लिए विविध कमरों वाला, खूब लम्बा-चौड़ा, विस्तृत मकान स्वभावतः चाहता है। मकान के चारों तरफ फल-फूलों से जगमगाता हुआ बगीचा भी उसे चाहिए। मकान की सजावट के लिए भी एक से एक कीमती हजारों प्रकार की चीजें चाहिए। इस सजावटी सामान से मानव की शान-शौकत तो बढ़ती ही है, साथ ही इनसे दिल-बहलाव भी होजाता है, क्योंकि इतने लम्बे-चौड़े विस्तृत मकान में अकेले मानव का मन ऊब जाना अनिवार्य है। पहले तो मानव बेसब्र बन कर विस्तृत मकान बना लेता है, फिर उसके विस्तार की वजह से ऊब्र जाने वाले मन के बहलावे के लिए अन्य साधन जुटाता है। इस प्रकार मानव पहली बेईमानी यह करता है कि वह दूसरों के हिस्से की जमीन अपने लिए घेर लेता है; और दूसरी बेईमानी यह करता है कि उस भव्य मकान के बनाने व सजाने में खुल कर धन लुटाता है। यह धन वह गन्दे एवं दूषित साधनों से प्राप्त करता है। इस प्रकार वह दोहरी बेईमानी करता है; फिर भी भव्य मकान में रहने वाले के जीवन में कोई विशेषता नहीं पैदा होती।

खुले वातावरण में छोटे मकान व झोंपड़े बना कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहने से धन का अपव्यय नहीं होता और मानव प्राकृतिक सुविधाएँ हवा, धूप, प्रकाश आदि आसानी से पा सकता है, जो मानव के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इस प्रकार के छोटे मकानों में मन-बहलाव के आडम्बरों के लिए जगह भी नहीं होती और उनकी आवश्यकता भी नहीं होती। वहाँ तो प्राकृतिक सौंदर्य के दृश्य ही देखने को बहुत मिल जाते हैं। इसके अलावा मानव अगर अपने कर्तव्य से मुख न मोड़े तो उसे दिल बहलाव के दूसरे किसी साधन की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। छोटे मकानों की सफाई, पुताई व मरम्मत आदि करने में भी बहुत सुविधा रहती है। बड़े मकानों के बजाय, छोटे मकानों को चोर आदि से सुरक्षित रखना भी आसान होता है। इस प्रकार छोटे मकानों में रहने से बहुत फायदे हो सकते हैं, परन्तु मानव अपनी लोभ-भावना के कारण अधिक विस्तार पर अपना अधिकार रखना चाहता है, चाहे अधिक विस्तार से उसे कितनी ही असुविधा क्यों न मिले।

मनुष्य हमेशा खाता ही रहता है

खानपान के मामले में भी मानव सीमा पार कर गया है। प्रातः काल से लेकर, रात में सोने के समय तक, मानव को कुछ न कुछ पेट में भरने के लिए अवश्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए, चाहे ठंडे-गर्म पेय के रूप में, चाहे फल-सब्जी के रूप में, चाहे भोजन के रूप में, किसी भी रूप में कुछ न कुछ पेट में पड़ते ही रहना चाहिए। पेट में पड़ने वाले व्यंजनों के स्वादों में भी मानव ने सैंकड़ों प्रकार के जायकों की रचना कर डाली है, जो पेट में पहुँचने के बाद स्वास्थ्य का किसी न किसीं रूप में बिगाड़ ही करते हैं। मानव के भोजन और पेय पदार्थों की किस्मों का तो कोई अन्त ही नहीं दिखाई देता। एक बार के भोजन में, मानव को कई प्रकार के कई स्वादों वाले पदार्थ न मिलने पर, उसे पूरी तृप्ति अनुभव नहीं होती। भोजन करने की प्रणाली में भी मानव ने बहुत से आडम्बरों की रचना की है, जैसे कई धातुओं के कई प्रकार के बर्तन, मेज-कुर्सी पर बैठकर भोजन करना, भोजन मुँह तक ले जाने के लिए चम्मच, कांटा, छुरी का प्रयोग आदि।

आज के मानव का पहनावा भी आडम्बर-युक्त और बहुत महँगा होगया है, जो उसके मन के केवल अहम् की पूर्ति करता है, तथा दूसरों से अपने को असाधारण रूप में प्रस्तुत करने की मिथ्या भावना प्रदर्शित करता है। इससे धन के अपव्यय के अलावा, मानव का किसी रूप में कोई अन्य भला नहीं होता। आदिम मानव के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव के पास तो तन ढकने का कोइ साधन ही नहीं था, फिर भी वह आज के मानव की अपेक्षा कही अधिक शक्तिशाली तथा स्वस्थ था। आज का मनुष्य शारीरिक शक्ति से बहुत क्षीण होगया है, अतः सुरक्षा के लिए तन ढकना तो आवश्यक होगया है, परन्तु इस हेतु आडम्बर-युक्त बहुमूल्य वस्त्र पहनना कतई आवश्यक नहीं है। तन को सर्दी, गर्मी, धूप आदि से बचाने के लिए सस्ता, मोटा वस्त्र ही उपयुक्त होता है, जिसमें स्वास्थ्य के लिए आवश्यक प्राकृतिक विशेषताएँ ग्रहण करने की क्षमता होती है। कीमती और चुस्त वस्त्र, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक ही सिद्ध होते हैं। इनसे धन का अपव्यय होता है सो अलग। इस प्रकार मानव का पहनावा भी उसके सीधे-सादे सच्चे जीवन का द्योतक नहीं है।

शरीर को चाहे जिस रूप में ढाल लें

मानव अगर चाहे तो अपने तन को बहुत कम वस्त्रों के पहनने का अभ्यस्त भी बना सकता है। मानव शरीर में यह विशेषता है कि उसको रहन-सहन, खान-पान, पहनावा, परिश्रम आदि किसी भी दिशा में पूर्णतया अभ्यस्त बनाया जा सकता है। इसलिए आदमी अपने शरीर को एक मामूली सूती वस्त्र से सर्दी, गर्मी, लू आदि से बचाव का अभ्यस्त बना सकता है। शरीर पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जितने कम वस्त्र रहेंगे, ढीले वस्त्र रहेंगे और मोटे सूत की मोटी बुनावट के वस्त्र रहेंगे, स्वास्थ्य के लिए उतने ही अधिक वे लाभदायक भी रहेंगे। रंग-बिरंगे सैंकड़ों प्रकार के बहुमूल्य वस्त्रों से भरे सन्दूकों को रखना, मानव-मन का मिथ्या दम्भ, धन का अपव्यय और स्वास्थ्य का अहित मात्र है। वस्त्रों से मानव और उसकी मानवता में कोई अन्तर अथवा विशेषता पैदा नहीं होती। संसार में आज भी बहुत मानव मिल जाएँगे जो आदिवासी कहे जाते हैं। ये लोग आज भी कम से कम वस्त्रों का उपयोग करते हैं और अधिक व कीमती वस्त्र उपयोग करने वालों से अधिक स्वस्थ भी रहते हैं।

मानव के रहन सहन, खानपान, पहनावे की ही बात नहीं, मानव के हर कार्य में उसकी कपट-चातुरी तथा छल-प्रपञ्च का आभास मिलता है। वस्तुतः मानव की भावनाएँ ही कपट और बेईमानी पर आधारित होगई हैं। मानव चाहे किसी व्यवसाय में संलग्न हो, चाहे नौकरी पेशे वाला हो, अथवा मजदूर वर्ग का हो, सभीमें किसी न किसी रूप में, बेईमानी और कपट का पुट अवश्य मिलेगा। व्यापारी वर्ग मानव-जीवन के लिए आवश्यक असली तथा शुद्ध वस्तुओं में मिलावट करके एवं नकली माल बेचकर अधिकाधिक मुनाफा प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने की कोशिश करता है। नौकरी पेशे वाले रिश्वत लेने, काम न कर कर्तव्य की उपेक्षा करने तथा वेतन अधिक से अधिक पाने की चेष्टा में लगे रहते हैं। यही स्थिति मजदूर वर्ग की भी है, जो नेताओं के बहकावे में आकर हड़ताल, आन्दोलन आदि देशद्रोही कामों में लगे रहते हैं, जिससे उत्पादन-क्षमता घटती है और राष्ट्रीय सम्पत्ति की क्षति होती है। इस प्रकार सम्पूर्ण मानव-जाति की भावनाएँ ही कपट व बेईमानी के मार्ग पर अग्रसर हैं। सभी एक दूसरे का शोषण कर बिना परिश्रम किये स्वयं अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना चाहते हैं। अगर यही स्थिति रही, तो वह दिन दूर नहीं जब प्रत्येक मनुष्य एक दूसरे को नोच नोच कर खा जायेगा।

मानवता के भयंकर शत्रु

इस स्थिति का प्रथम कारण यह है कि आज मानव जीवन की आवश्यकताएँ बहुत अधिक बढ़ गई हैं। ये आवश्यकताएँ भी ऐसी नहीं हैं जो जीवन धारण के लिए आवश्यक हों, बल्कि वे निष्प्रयोजन, निरर्थक तथा प्रदर्शनात्मक मात्र हैं। इन्हीं प्रयोजन-हीन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मानव को तरह तरह से बेईमानी और कपट कार्य करने पड़ते हैं। दूसरा कारण यह है कि मानव सुख तो अधिक चाहता है, परन्तु सुख प्राप्त करने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधनों को पाने के लिए श्रम बिल्कुल नहीं करना चाहता। इससे यही प्रतीत होता है कि मानव की कार्य-क्षमता पूर्णतया गिर गई है, इसलिए अब मानव के पास इच्छा-पूर्ति का साधन कपट और बेईमानी का ही रह गया है। मानव-मानव से ही कपट बेईमानी करता है; कपट बेईमानी मानव जाति के ऐसे भयंकर शत्रु हैं, जो स्वयं मानव द्वारा ही संचालित हैं। मानव अधिक सुखों की लालसा और प्रयोजन-हीन आवश्यकताओं का त्याग करे—तभी इन शत्रुओं से छुटकारा मिलना सम्भव हो सकता है। नहीं तो मानव जितना अधिक कपट व बेईमानी करेगा, श्रम से मुख मोड़ेगा, जिम्मेदारियों से दूर भागेगा, उतनी ही अधिक उसकी परेशानी बढ़ती जाएगी। श्रम से बचने तथा जिम्मेदारी न सम्भालने से उत्पादन घटेगा तो मंहगाई भी बढ़ेगी; तब मानव को और अधिक कपटी व बेईमान बनना पड़ेगा। इस तरह से यह सिलसिला आगे से आगे बढता ही जायेगा और मानव जाति का इस लोक से सर्वथा विलोप होजायेगा। आश्चर्य की बात है कि इतनी मोटी बात भी बुद्धिमान कहलाने वाले मानव के दिमाग में नहीं बैठ पाती। वह यह नहीं समझ पाता कि बिना जिम्मेदारी सँभाले, उसकी आवश्यकताओं और उसकी माँगों की पूर्ति आखिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी कैसे ?

छल-छद्म पर आधारित शासकीय ढाँचा

आजकल का शासनाधिकारी वर्ग तो कपट और बेईमानी की चरम सीमा का उल्लंघन ही कर गया है। आज का पूरा शासकीय ढाँचा छल-कपट व बेईमानी पर निर्भर करता है। वस्तुतः शासनाधिकारियों की नियुक्ति ही गुणों तथा योग्यता के आधार पर नहीं होती। भ्रष्टाचरण ही उनकी नियुक्ति का आधार होता है। फलतः वे भी इसी प्रकार के भ्रष्टाचारों में प्रवृत्त होजाते हैं। इसके अतिरिक्त हमारे संसद सदस्यों तथा विधायकों के चुनाव भी निष्पक्ष और ईमानदारी से नहीं होते। चुनावों में खुली रिश्वत चलती है, अपार धन-राशि खर्च करके वोट खरीदे जाते हैं, बहुत से वोट किसी प्रसिद्ध गुंडे द्वारा जनता को डरा-धमका कर प्राप्त किए जाते हैं, जो गुंडे को खरीदने वाले के हक में जाते हैं। बहुत से वोट राज्य-कर्मचारियों द्वारा अपने पद का रोब तथा डर भोली-भाली जनता को दिखा कर प्राप्त किए जाते हैं। इसके अलावा भी चुनाव में अनेक प्रकार की ठगी, बेईमानी, छल-कपट होते हैं। इस प्रकार छल-कपट व बेईमानी के बल पर शासन-सत्ता सम्भालने वाले मानव के त्यागी और निःस्वार्थ होने का तो प्रश्न ही पैदा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता, क्योंकि सर्वप्रथम तो वह अपनी उस आर्थिक हानि को पूरा करेगा, जो चुनाव-कार्य के प्रचार तथा प्रसार एवं वोट प्राप्त करने के कारण हुई है। इसके उपरान्त भी उससे निःस्वार्थ भाव से जन-सेवा की आशा करना जनता की भूल ही है। ऐसी परिस्थिति में भला होता है थोड़े से पुरुषों का और डूब जाती है पूरी जनता, जो दूसरे चुनाव तक पछताती रहती है। परन्तु दूसरे चुनाव में फिर वही स्थिति बन जाती है। इस प्रकार अकेला यह शासक-मण्डल ही दोषी नहीं है, दोषी जनता भी है, जो तत्काल क्षणिक लाभ प्राप्त होने के लोभ से स्वार्थ-वश अयोग्य व्यक्तियों को चुन कर भेजती है।

राजा—जो जीविका के लिए खेती करता था

शासन-सत्ता में ऐसे व्यक्तियों को चुन कर भेजना चाहिए, जो विचारशील, निःस्वार्थ, त्यागी, परोपकारी, सुशील, विद्वान् और न्यायप्रिय हों। जनता जब तक अपना लालच, स्वार्थ छोड़ कर निर्भय होकर ऐसे आदमियों का चुनाव नहीं करेगी, तब तक उसे सुख-शान्ति की कोई आशा भी नहीं रखनी चाहिए। प्राचीन समय के एक मुखिया अथवा शासक की कहानी बुजुर्गों से हमने सुनी थी। इसमें शासक के वास्तविक धर्म तथा चरित्र का निरूपण होता है। आदि काल में जिस ढंग में मुखिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा शासक-प्रणाली का प्रचलन हुआ था, उसीके अनुरूप इस कहानी के शासक का जीवन-धर्म तथा कर्तव्य बन गया था। वस्तुत: शासक का यही रूप होना भी चाहिए। उक्त कहानी इस प्रकार है :—

प्राचीन समय में मोलु नाम का राजा दक्षिणी भारत का शासक था। राजा के पास अपार सोना, चाँदी, हीरा मोती, मणि-माणिक आदि का कोषागार था। अच्छी फसलें होती थीं और प्रजा बहुत सुख-चैन का जीवन व्यतीत करती थी। इसके साथ ही विशेष बात यह थी कि राजा-रानी का रहन-सहन, खानपान, पहनावा आदि सब कुछ अन्य साधारण पुरुषों की भाँति ही था। खेती बाड़ी का काम भी राजा-रानी प्रजा के अन्य आदमियों के समान ही करते थे। इसी खेती-बाड़ी से जो कुछ प्राप्त होता था, उसी पर राजा-रानी के जीवन की आवश्यकताएँ पूरी होती थीं। राजा खजाने से अपने या अपने परिवार के लिए एक पैसा लेना भी हराम समझता था। खजाने की धन-दौलत का मालिक वह प्रजा को ही समझता था और प्रजा की भलाई के कामों में ही उसका प्रयोग करता था। राजा अपने आपको प्रजा के न्याय, शान्ति एवं सुरक्षा-व्यवस्था का अधिकारी मात्र मानता था। वह राज-दरबार में बैठने के समय ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाही पोशाक व शाही ताज धारण करता था।

एक बार रानी ने राजा से एक जोड़ी सोने के कंगन बनवा देने का आग्रह किया। राजा ने धनाभाव के कारण असमर्थता प्रकट की तो रानी ने थोड़ा सोना राजकोष से उधार लेने की सलाह दी। राजा ने उधार लिए गए सोने की राजकोष में पूर्ति करने के समय तक जीवित रहने का प्रमाण-पत्र भगवान से लिखवाने की बात रानी से कही। पर चूँकि ऐसा सम्भव नहीं था, अतः राज-कोष से ऋण के रूप में स्वर्ण प्राप्त करने का विचार छोड़ देना ही श्रेयस्कर माना गया। रानी ने भी अन्ततः अपने पति राजा की सलाह का अनुमोदन किया।

ऐसे निःस्वार्थ और स्वयं अपनी मेहनत से अपना जीवन निर्वाह करने वाले शासक की तो आज के समय कल्पना ही नहीं की जा सकती। परन्तु फिर भी जिस तरह आज जनता का धन पानी की तरह बहा कर नष्ट किया जा रहा है, जिस तरह शासक-वर्ग जनता के धन से स्वर्गोपम विलासिता का उपभोग कर रहा है, नेताओं के देश-विदेश के दौरे और रोज-रोज होने वाले अधिवे-शनों में जिस तरह धन की सरिता बह रही है, वह सब अत्यन्त चिन्ता का विषय है। इन सब घर फूँक तमाशों को तत्काल बन्द कर देना चाहिए। शासन के कर्णधारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व मन्त्रियों के अत्यन्त सुविस्तृत भवन उनके ऐश्वर्य-विलास को प्रकट करते हैं। इन भवनों की सुरक्षा और सजावट पर अरबों रुपये सालाना व्यय होते हैं। इनके रहन सहन, खान-पान, आवागमन की व्यवस्था में भी कम धन का व्यय नहीं होता। इस अपव्यय को सर्व-साधारण जनता की हित-रक्षा की दृष्टि से रोका जाना चाहिए, जिससे राष्ट्र के कोष का अरबों रुपया बच जाएगा। देश के विकास-कार्यों में इस बची हुई प्रचुर धन-राशि से काफी सहायता मिल जाएगी।

जनधन का भीषण दुरुपयोग

आज का शासक-वर्ग जनता के साथ बहुत ही कपट और बेईमानी का व्यवहार कर रहा है। एक तरफ तो जनता के धन को जनता के लिए उपयोगी विकास-कार्यों में नहीं लगाया जाता; दूसरी तरफ अनाप-शनाप तरीकों से उसे नष्ट किया जा रहा है; तीसरी तरफ नित्य नए नए कर लगा कर जनता के पसीने की कमाई, विकास कार्यों के नाम से खींची जा रही है। हमारे देश की आमदनी कम नहीं है। अगर करों द्वारा लिए गए पूरे धन की उचित रूप से व्यवस्था एवं ईमानदारी के साथ उपयोग किया जाए तो न तो विकास कार्यों के लिए धन की कमी होगी और न ही विदेशों से ऋण लेना पड़ेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन अधिकांश धन शासकीय ढांचे की विलासिता तथा शासक-मण्डल के भाई-भतीजों और रिश्तेदारों की सहायतार्थ दी गई सुविधाओं में ही व्यय होजाता है। ऐसी अवस्था में देश का विकास कहाँ से हो पाएगा। इस प्रकार जनता के धन के साथ खिलवाड़ करना स्पष्ट रूप से कपट और बेईमानी है।

भ्रष्ट शासन जनता को पीस रहा है

सधारण जनता के धन के साथ तो खिलवाड़ होता ही है; न्याय, कानून और शासकीय व्यवस्था का भी उचित व पूर्ण लाभ जनता को नहीं मिल पाता। पुलिस विभाग जनता की रक्षा व व्यवस्था बनाए रखने के लिए होता है; परन्तु अधिकतर चोरियाँ, डकैतियाँ, बलात्कार, छीनाझपटी आदि मामलों में स्वयं पुलिस विभाग के आदमियों का ही हाथ रहता है। जब रक्षक ही भक्षक बन जाएँगे तो कैसे मानव-जीवन व्यवस्थित रह पाएगा और कैसे जनता अपने आपको सुरक्षित समझेगी ? पुलिस विभाग के पास सरकारी कानून रूपी शक्ति होती है, इसी शक्ति के बल पर पुलिस मनमाने ढंग का अभद्र और अनुचित व्यवहार जनता से कर डालती है। निरपराध और सीधे सच्चे पुरुष को भी जबर्दस्ती दबा कर स्वपक्षीय स्वार्थ निकाल लेना पुलिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाएँ हाथ का खेल है। इस प्रकार पुलिस विभाग कानून रूपी शक्ति का दुरुपयोग कर रहा है।

इसके अलावा एक बात और है। हमारे कानूनों का निर्माण बहुत पहले विभिन्न सामाजिक वातावरण में हुआ था। फलतः वे आज की परिस्थितियों से मेल नहीं खाते। इसके अलावा सरकारी ढाँचे में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण, इन कानूनों का भी लाभ साधारण मानव को नहीं मिल पाता। अधिकारियों में रिश्वत की लत और सरकारी अधिकार की गर्मी की वजह से छोटे से छोटे सरकारी काम को भी कार्य रूप में परिणत करना लोहे के चने चबाने के समान है। अधिकारियों की खुशामद, रिश्वत, सालों अथवा कई महीनों तक भागदौड़ अथवा अधिकारियों को हाजिरी देना, मानव को व्यथित कर उबा देता है, जिससे सर्वत्र क्षोभ, अशान्ति एवं रोष उत्पन्न हो जाता है। फलतः मानव हिम्मत हार कर चुपचाप बैठ जाता है।

आखिर शिकायत भी किससे की जाय

कानून बना देने से ही तो मानव का भला नहीं होजाता। इस बात की कोई व्यवस्था नहीं है कि कानून का लाभ कानून के अनुरूप ही मनुष्यों को मिल जाये। अगर मानव को कानून का लाभ नहीं मिल पा रहा है, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकारीगण उसके कारणों का पता क्यों नहीं लगाते ? जिनके लिए कानून बनाया गया है, उन्हें उस कानून से यदि कोई लाभ नहीं मिल पाता तो फिर कानून बनाने से ही क्या फायदा ? जनता अगर विवशता या किसी कारण-वश सरकारी कानूनों की पूर्ति में थोड़ा विलम्ब कर दे या कर देती है, अथवा कोई भूल-चूक हो जाती है, तो जनता के लिए दण्डस्वरूप कई प्रकार से कड़ाई करने की व्यवस्था की जाती है, परन्तु सरकारी व्यवस्था और सरकारी कानूनों से जनता को कोई लाभ मिल पाता है या नहीं, इसकी जाँच–पड़ताल–सम्बन्धी कोई कार्यवाही नहीं की जाती। आखिर जनता शिकायत भी करे तो किससे करे ? सरकारी ढाँचे की अव्यवस्था की शिकायत कोई सरकारी अधिकारी सुनने को तैयार नहीं होता।

इस प्रकार शासकीय वर्ग जनता से करों के रूप में धन लेकर उसके सदुपयोग की व्यवस्था नहीं कर पाता, जनता को उचित न्याय और कानूनों का लाभ नहीं दे पाता, जनता के जीवन-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाता। इसके विपरीत जो लाभ और सुख-शान्ति के असली मालिक हैं, वे तो कष्ट और परेशानी झेल रहे हैं और जो सेवक होने चाहिए, वे ऐश-आराम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर रहे हैं। ऐसी शासन-व्यवस्था और शासन-प्रणाली स्पष्ट रूप से स्वार्थ, दुराचार, अत्याचार एवं बेईमानी का द्योतक है।

चाहे शासकीय वर्ग हो अथवा जनता, सभी मानव हैं और एक ही मानव जाति से सभी सम्बन्धित हैं। जनता का आदमी ही शासक बनता है और शासक न रहने पर फिर जनता में ही शामिल होजाता है। इसलिए इस कुव्यवस्था का दोषी किसी एक वर्ग को ही नहीं माना जाना चाहिए। दोषी तो पूरी मानव जाति ही है; वस्तुतः समस्त मानवता का ही व्यक्तित्व दूषित तथा छल-छद्म-पूर्ण होगया है। आज के मानव ने अपना ध्येय ही येन-केन-प्रकारेण कपटाचरण-पूर्वक जीवित रहने का बना लिया है। जिस प्रकार से मानव अनैतिकता और अनाचार के काम कर रहा है, उससे यही प्रतीत होता है कि वह सम्यक् बुद्धि-सम्पन्न तो है नहीं, उद्भ्रान्त तथा पथ-भ्रष्ट अवश्य है। बेईमानी, छल-कपट और अनैतिकता के अलावा, रोजरोज आगजनी, तोड़फोड़, हड़तालबाजी, आन्दोलन, छीनाझपटी, बलात्कार आदि सब मानव के कुकर्म बन गये हैं। इनसे मानव में पागलपन के लक्षण स्पष्टतया दृष्टिगोचर होरहे हैं। इन सब कुकर्मों के करने के बाद भी मानव अपने आपको बुद्धिमान समझता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, यही आश्चर्य की बात है।

सुख की तृष्णा बढ़ती ही जाती है

संसार में चारों ओर जो कुछ भी हमें अपनी आँखों से देखने को मिलता है, जैसे बड़े बड़े, ऊँचे ऊँचे आलीशान भवन, रेल, मोटर, जहाज, हवाई जहाज, हजारों प्रकार के बिजली के आविष्कार, हजारों किस्म की मशीनें, कारखानें, मीलें, सड़क, पार्क, बगीचे, किस्म किस्म के व्यापार आदि इन सबका उपयोग केवल मानव के हित तथा स्वार्थ-साधन के लिए ही होता है। संसार के इतने सब आडम्बर सिर्फ मानव को अपने जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चाहिए। ये करोड़ों किस्म के पदार्थ मानव-सुख की पूर्ति के लिए ही हैं। पर आश्चर्य की बात यह है कि इतने पदार्थों का प्रयोग करके भी मानव सन्तुष्ट नहीं है। अब भी मानव और अधिक सुख-प्राप्ति के लिए नित्य नए नए आडम्बरों का परीक्षण करता ही रहता है।

मानव सुख की कितनी अभिलाषाएँ हैं? मानव किस किस काम में कितना सुख चाहता है? मानव सुखों में डूबकर अपने आपमें क्या विशेषता पैदा करना चाहता है? इन प्रश्नों का उत्तर शायद किसी भी मानव से मिलना सम्भव नहीं है, क्योंकि मानव ऐसे दुष्ट चक्कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में फंस गया है, जिसका कभी कोई अन्त ही नहीं है। आज का मानव प्राचीन मानव और उसके जीवन को शायद भूल गया है, जिसे आज के मानव के प्रयोग में आने वाले करोड़ों आडम्बरों में से किसी एक की भी आवश्यकता नहीं थी और तब भी वह बड़े सुख-चैन से जीवन व्यतीत कर लेता था। वह कपट व बेईमानी का नाम भी नहीं जानता था। क्या आज के मानव में उस मानव से कुछ अधिक विशेषताएँ पैदा होगई हैं, जिनसे उसे इतने आडम्बरों की आवश्यकता महसूस हुई ?

मानव ही एक ऐसा अविश्वासी और शंकालु प्राणी है, जो कल की चिन्ता करके कल के लिए सामान एकत्रित करके रखता है ; कल के लिए ही नहीं वर्ना वर्षों के लिए सामान जमा करके रखता है। इसका मतलब यह हुआ कि मानव को स्वयं अपने पर और विधाता पर भी विश्वास नहीं है। जो आज दे सकता है, जो आज पैदा कर सकता है, वह कल भी दे सकता है, कल भी पैदा कर सकता है। परन्तु मानव का सन्दिग्ध मन इस बात पर विश्वास नहीं करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठों में-

मानवेतर प्राणी 'भोगयोनि' में गिने जाते हैं, क्योंकि उनमें बुद्धि, विचार, विवेक तथा ज्ञान का अभाव है और इसलिए वे अपने भीतर निर्दिष्ट प्रवृत्ति के अतिरिक्त अन्य कार्य नहीं कर सकते—मांसाहारी जीव शाकाहारी नहीं होसकते और इसी प्रकार शाकाहारी जीव मांसाहार करने के लिए प्रवृत्त नहीं हो सकते। पर मानव की यह स्थिति नहीं है ; अपनी बुद्धि, विवेक, संकल्प-विकल्प एवं ज्ञान का उपयोग करके वह अपना कर्तव्य तथा कर्म निर्धारित कर उसे ग्रहण करने के लिए स्वतन्त्र है। इसीलिए उसे 'कर्मयोनि' में प्रतिष्ठित किया गया है। इतने पर भी वह स्वार्थ, मोह-मद-मत्सर आदि विचारों से ऊपर नहीं उठ पाता और उसमें ईर्ष्या, द्वेष, डाह, जलन की कुभावना विद्यमान तथा जाग्रत रहती है। ईर्ष्या तथा द्वेषवश मानव अपने बन्धुओं, मित्रों, पड़ोसियों एवं सहकर्मियों को कुचल कर–गिरा कर–स्वयं आगे बढ़ने के लिए सदैव उद्यत रहता है। आगे के पृष्ठों में मानव की इस ईर्ष्यालु वृत्ति पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६ | ईर्ष्यालु मानव

विधाता ने मानव का स्वभाव सभी प्राणियों से अलग अलग और विचित्र प्रकार का बनाया है। संसार का प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपने उपयोग के लिए हर प्रकार की सुख-सामग्री, अच्छा विस्तृत खुला निवास, अच्छा खानपान, कीमती और लुभावने वस्त्र, हर प्रकार का ऐश्वर्य और विलासिता-युक्त जीवन जीना चाहता है। परन्तु इसके साथ ही उसके भीतर एक दूषित भावना होती है; वह यह कि वह अपनी अपेक्षा दूसरे की तरक्की बर्दाश्त नहीं कर पाता। दूसरे की थोड़ी भी बढ़ती देख कर उसे जलन और ईर्ष्या होने लगती है। अक्सर ऐसा होता है कि मानव के पास अपनी आवश्यकता से अधिक ऐसी वस्तुएँ एकत्र होजाती हैं, जिनका कोई उपयोग नहीं होपाता और वे उसके पास निष्प्रयोजन बेकार पड़ी रहती हैं और पड़े पड़े बरबाद भी होजाती हैं। अगर ये वस्तुएँ अगर किसी जरूरतमन्द व्यक्ति के पास होतीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उनका उचित उपयोग होता और वे बेकार बरबाद भी नहीं होतीं। इस प्रकार अनावश्यक रूप से चीजों का संग्रह करके उनको बरबाद होने देना राष्ट्रीय सम्पति को क्षति पहुँचाना है और यह राष्ट्रीय अपराध है। फिर भी हम यह अमानवीय अपराध करते रहते हैं—और ऐसा करते समय मन में किञ्चित ग्लानि का अनुभव नहीं करते। ग्लानि के स्थान पर उसे उस समय ईर्ष्या होने लगती है, जब वह देखता है कि समाज का कोई अन्य व्यक्ति उसीके समकक्ष है अथवा उससे अधिक सम्पन्न है। समाज में जो सचमुच अभाव-ग्रस्त हैं, यह स्वाभाविक है कि सम्पन्न व्यक्तियों से वे ईर्ष्या करें। पर जब एक सम्पन्न व्यक्ति दूसरे सम्पन्न व्यक्ति से ईर्ष्या एवं द्वेष करता है, तो यह उचित नहीं प्रतीत होता।

वैसे सामाजिक न्याय की बात यही है कि समाज के हर व्यक्ति की बुनियादी तथा मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए। उसे खाने, कपड़े, रहने, शिक्षा तथा समुचित चिकित्सा की सुविधा समान स्तर पर सुलभ होनी चाहिए। इसके साथ ही सबको समान रूप से अपनी सामर्थ्य के अनुसार परिश्रम भी करना चाहिए और राष्ट्रीय समृद्धि के बढ़ाने तथा उसे सुरक्षित रखने में योग भी देना चाहिए। पर जो व्यक्ति परिश्रम से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचते हैं और बिना श्रम के ही समस्त सुविधाएँ प्राप्त करना चाहते हैं, वह यह निश्चित है कि समाज-धर्म अथवा राष्ट्र-धर्म का पालन नहीं करते। कुछ व्यक्तियों का मानसिक स्तर अत्यन्त निम्न एवं कुण्ठित होता है। उनमें पर्याप्त सूझ-बूझ नहीं होती। उनमें आत्मप्रेरणा भी नहीं होती। वस्तुत: वे अपने मन से कोई कार्य नहीं कर सकते। ऐसी अवस्था में वे 'श्रम' से भी बचना चाहते हैं, अत: जब तक उन्हें कोई प्रेरित न करे और आदेश न दे, तब तक वे कोई काम नहीं करते। ऐसे व्यक्ति यदि अभाव-ग्रस्त रहें—तो यह स्वाभाविक है और इसमें उन्हें किसी वर्ग के प्रति शिकायत नहीं होनी चाहिए। पर ऐसा भी नहीं होता। उन्हें समाज के सम्पन्न वर्ग के प्रति ईर्ष्या हो ही जाती है और वे उसीसे मन ही मन कुढ़ने तथा जलने लगता है, जो उसे काम में नियोजित करता है और निर्दिष्ट कर्तव्य करने का आदेश देता है। इससे प्रमाणित होता है कि मानव के स्वभाव में ही ईर्ष्या, द्वेष तथा जलन की कुभावना निहित होती है।

मानव स्वभाव की विचित्रता

समाज का जो वर्ग सम्पन्नता की स्थिति में पहुँचता है, वह हर प्रकार के अपेक्षित परिश्रम में रुचि लेता है;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसमें बौद्धिक क्षमता भी होती है और सामयिक सूझ-बूझ भी । अपने इन्हीं गुणों के कारण वह अधिक समृद्धि अर्जित कर लेता है । फलतः इसके प्रति किसी प्रकार की ईर्ष्या की भावना रखना समीचीन नहीं है । फिर भी जैसा हमने ऊपर बताया है, जो परिश्रम न करने, आलसी होने तथा बौद्धिक दक्षता प्राप्त न कर सकने के कारण अपनी आवश्यकताओं की अपेक्षित पूर्ति नहीं कर पाता, वह भी अपने दैन्य एवं अभाव के वास्तविक कारणों को न देखकर और उनका निवारण न करके, सीधे सम्पन्न वर्गों के प्रति ईर्ष्यालु हो उठता है । वस्तुतः वह अपने अभाव के बुनियादी कारणों को तो दूर नहीं कर पाता । हाँ, ईर्ष्या वह आसानी से कर सकता है । कैसी विचित्र स्थिति है यह मानव स्वभाव की ?

मानव चाहे झोपड़ी में रहे अथवा महलों में, मानव चाहे सादा मोटा किस्म का खाना खाए अथवा कई प्रकार के पकवानों वाला गरिष्ठ भोजन करे, मानव चाहे सादे मोटे सूत के बने वस्त्र पहने अथवा महीन मुलायम कीमती वस्त्र पहने, वस्तुतः हर स्थिति के मानव 'मानव' ही कहे जाएँगे और उनके जीवन व मानवता में कोई अन्तर पैदा नहीं होगा । फिर भी झोपड़ी में रहने वाला मानव, सम्पन्न मानव से ईर्ष्या अवश्य करेगा, फिर भले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही उसको आवश्यकतानुसार मोटे सादे वस्त्र तथा साधारण भोजन उपलब्ध हों। वैसे यह ठीक है कि इस प्रकार ईर्ष्या करने से उसकी सम्पन्नता भी नहीं बढ़ेगी ; पर मनुष्य अपने स्वभाव से लाचार होता है और वह ईर्ष्या अवश्य करता है। महलों में रहने वाला सम्पन्न व्यक्ति भी झोपड़ी में रहने वाले को अपने से हर बात में छोटा और हीन समझेगा, जबकि मानवता झोपड़ी वाले के पास ही किसी अंश से अधिक मिलेगी। वस्तुतः इन दोनों स्थितियों के व्यक्तियों को एक दूसरे के सहयोग की आवश्यकता होती है। झोपड़ी वाले को जीवन-यापन के लिए महल वाले से काम मिल सकता है, तो महल वाले को अपने कामों के लिए झोपड़ी में रहने वाले व्यक्ति मिल सकते हैं, इसलिए ईर्ष्या-द्वेष का कोई तर्कपूर्ण उचित कारण नहीं होना चाहिए।

मान लीजिए एक सम्पन्न व्यक्ति अपनी लड़की की शादी में पचास हजार रुपये खर्च करता है और एक कम सामर्थ्य वाला व्यक्ति पांच हजार में ही अपनी बेटी की शादी सम्पन्न कर देता है। पांच हजार वाला पचास हजार वाले के वैभव व चमक-दमक को देखकर ईर्ष्या तो अवश्य करेगा, परन्तु मानव की सुख-शान्ति का सम्बन्ध सिर्फ वैभव और चमक-दमक पर ही निर्भर नहीं करता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होसकता है पाँच हजार खर्चने वाले की बेटी अपने शील, स्वभाव व अन्य गुणों के कारण उमर भर सुख-शान्ति से रहे और पचास हजार वाले की वेटी अपने अवगुणों के कारण पूरी जिन्दगी दुःख ही भुगतती रहे; इसलिए वैभव और चमक-दमक कोई ईर्ष्या के कारण तो नहीं हैं, परन्तु मानव दूसरों को अपने से किसी भी बात में ईर्ष्या-वश, बढ़-चढ़ कर देखना सहन नही कर पाता।

ईर्ष्या के दुष्परिणाम

ईर्ष्या के कारण किसान लोगों में भी कई दुर्घटनाएँ होजाती हैं। जैसे किसी एक की फसल बहुत अच्छी हुई और दूसरे की बहुत कमजोर हुई, तो कमजोर फसल वाला ईर्ष्या-वश, अच्छी फसल वाले की फसल में आग लगा देता है। किसी किसान के पास अच्छे, स्वस्थ व अच्छी नस्ल के पशु हों, तो उनसे ईर्ष्या करने वाले पशुओं को जहर खिला देते हैं। ऐसी ईर्ष्या करने वालों के हाथ लगता कुछ नहीं, परन्तु दूसरों का अपकार वे बहुत कुछ कर देते हैं।

आज का मानव अपनी परिस्थिति के अनुसार जीवन जीकर सन्तुष्ट रहना नहीं चाहता; अपनी योग्यता, क्षमता तथा परिश्रम का विना लिहाज किये, वे दूसरे अधिक योग्य, क्षमताशाली, परिश्रमी तथा बुद्धिमान व्यक्ति को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राप्त सम्पन्नता के समकक्ष होने की महत्वाकांक्षा करने लगता है, जिसकी सधारणतया पूर्ति न होने से वह परम ईर्ष्यालु क्षुब्ध तथा असन्तुष्ट हो उठता है। वह सोचता है कि उसके पड़ोस वालों के पास सोफा सेट है, तो हमारे पास क्यों न हो; अमुक रिश्तेदार के पास ट्रांजिस्टर है तो हमारे पास भी एक होना चाहिए। इस प्रकार मानव दूसरों की जिन्दगी से ईर्ष्या करके, दूसरों की हर बात में समानता करना चाहता है। यही मानव-दुःखों की जड़ है। यह मानव-स्वभाव है कि वह किसी दूसरे को अपने से बढ़-चढ़ कर अथवा अपने बराबर नहीं देख सकता। मानव को उससे जलन व ईर्ष्या होने लगती है। हर मानव दूसरों से अपने आपको विद्या, बुद्धि, विचार, वैभव आदि हर पहलू में श्रेष्ठ दिखलाना चाहता है। यह मानव का विशुद्ध रूप से अहंकार है और यही अहंकार ईर्ष्या-द्वेष की भावना पैदा करता है।

किसीको व्यापार में अधिक मुनाफा होगया अथवा किसीको पदोन्नति होगई, तो उससे उसके पड़ोसी और परिचित व्यक्ति ईर्ष्या करेंगे; परन्तु मानव सिर्फ ईर्ष्या करना व दूसरों को देखकर जलना ही जानता है, दूसरों के समान बनने की हिम्मत व चेष्टा नहीं करता। अगर कोई सच्ची लगन व दृढ संकल्प से कुछ करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहे तो उसे सफलता अवश्य ही मिलेगी, परन्तु मानव तो जलभुनकर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेता है। यही मानव की सबसे बड़ी कमजोरी है। उसमें आगे बढ़ने तथा साहस के साथ कर्तव्य-पथ पर आरूढ़ होने की बलवती इच्छा ही नहीं जाग्रत होती। हाँ, जलना एवं विद्वेष करना अवश्य वह आसानी से जान जाता है।

मानव की विशेषताओं में अन्तर

प्रकृति ने मानव की रचना ही कुछ इस प्रकार की है कि सभी मानवों की शारीरिक व मानसिक विशेषताओं में थोड़ा बहुत अन्तर होगया है। उनके गुण, स्वभाव, आदतों में भी फर्क होता है। इसलिए सभी मानवों को सांसारिक पदार्थ एक समान प्राप्त नहीं होसकते। सांसारिक पदार्थों को प्राप्त करने में मानव की अपनी क्षमता, शक्ति तथा विशेषताओं का ही उपयोग होता है। मानव में इन विशेषताओं के न्यूनाधिक्य होने के अनुसार ही उसे सांसारिक वस्तुएँ भी न्यूनाधिक मात्रा में प्राप्त होती हैं। अतः मानव का दूसरों का सुख-वैभव देखकर जलना निराधार और मूर्खता ही है। फिर दूसरों को देखकर जलने से कोई फायदा भी तो नहीं होता। मानव का अपना जो जीवन-मार्ग है, वह तो वही बना रहेगा। उसके [illegible] में तो कोई परिवर्तन होगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। ऐसी अवस्था में क्यों किसीकी कोई विशेषता देखकर उसके विरुद्ध अपने मन में दुर्भावनाएँ पैदा की जाएँ।

मान लीजिए एक दम्पति में प्रकृति ने एक सन्तान भी पैदा करने की विशेषता पैदा नहीं की, अथवा एक दम्पति एक या दो संतान ही पैदा कर सका है। ऐसी अवस्था में यदि इनमें से कोई या दोनों दम्पति, दूसरे गृहस्थों की छह-सात सन्तानों के देखकर ईर्ष्यालु हो जायें, तो यह कितनी अनुचित एवं निन्द्य भावना है। पदार्थों को प्राप्त करने व भोगने के लिए भी प्रकृति ने मानव को न्यूनाधिक क्षमताएँ प्रदान की हैं और मानव अपनी इन्हीं क्षमताओं के अनुसार फल भी प्राप्त करता है। इसलिए मानव को अपनी ही शक्ति और गुणों से उपलब्ध जिन्दगी जीने का प्रयत्न करना चाहिए और उसे अपने प्राप्त साधनों से ही सन्तोष करना चाहिए।

इस तरह दूसरों के सुख-वैभव को देखकर जलना, ईर्ष्या-द्वेष करना, मानव के बुद्धिमान होने में शक पैदा करता है, क्योंकि अन्य प्राणियों में ऐसी ईर्ष्या-जलन की भावनाएँ नहीं होतीं, तब हम किसे श्रेष्ठ समझे—मानव को अथवा मानवेतर प्राणियों को ?

वस्तुतः बुद्धिमान मानवों को अपने बुद्धिबल, ज्ञान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा अनुभव का लाभ उठा कर इतना सुसंस्कृत होना चाहिए कि वे अपने अन्तर के ईर्ष्या-द्वेष के विकार को मिटाकर समत्व भावना प्राप्त कर लें और सबके हित-साधन में परस्पर योग प्रदान करें। वह ऐसा नहीं कर पाते। इसका अर्थ यही निकलता है कि मानव प्रकृति द्वारा प्रदत्त बुद्धि तत्व का उत्कर्ष-पूर्ण प्रयोग नहीं कर पाता और वह शरीर के मिथ्या भोगों के चक्कर में स्वयं ही अधिकाधिक सुख प्राप्त करने के लिए सबसे आगे बढ़ जाना चाहता है, फिर भले ही उसके इन कारनामों से उसके अन्य सहवर्गियों का अहित हो और न्यायतः प्राप्य अधिकार से वे वञ्चित होजायें। ऐसे ईर्ष्यालु मनुष्यों को आगाह कर उन्हें सद्पथ पर लाने के लिए ही कहा गया है:—

"देखि पराई चूपड़ी, मत ललचावे जीव;
रूखी-सूखी खाय कर ठंडा पानी पीव।"

सच्ची शान्ति मानव को इसी प्रकार मिल सकती है। वस्तुतः मानव को अपने भाग्य और श्रम द्वारा प्राप्त साधनों से ही सुख, सन्तोष तथा आत्मानन्द सुलभ हो सकता है, अन्यथा नहीं। इस ऊर्ध्व-पथ पर आरूढ़ होने से ही मानव की बुद्धि की सार्थकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठों में–

बुद्धि ने मानव को कितना दुर्दान्त, प्राणिहन्ता, नृशंस एवं क्रूर आक्रान्ता बना दिया है कि उसकी चर्चा हो से प्रकम्पन एवं विक्षोभ होने लगता है। बुद्धि के कारण उसे इन्द्रिय-निग्रह कर संस्कारवान ऊर्ध्व गतिशील ईश्वर का पुत्र बनना चाहिए था। पर इसके प्रतिकूल वह बन गया है शैतान का दूत, जो प्रतिक्षण अपने शरीर की क्षुधा-तृषा के लिए निकृष्टतम स्वार्थ साधनार्थ हिंसक कृत्यों में संलग्न रहता है। सारी सृष्टि उसका खाद्य एवं भोग्य है। अन्य प्राणियों को भोजन के रूप में तो वह प्रयुक्त करता ही है, मानव-मांस भी उसका भोज्य बनने से नहीं बच पाया। मानव-शिशुओं तथा पुरुष-स्त्रियों की बलि देकर वह उनका रक्त पी जाता है और कलेजा फाड़कर खाजाता है। ऐसे भयंकर मानव का एक वीभत्स चित्र आगे के पृष्ठों में खींचा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७ | भयंकर मानव

विधाता ने मानव को विशेष रूप से बुद्धि प्रदान कर भूल की या अच्छा किया, यह कहना कठिन है; परन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि मानव की बुद्धि अन्य प्राणियों के लिए तो अभिशाप ही सिद्ध हुई है। मानव की बुद्धि का ऐसा भयंकर रूप बन गया है कि उसमें दुनिया भर की शरारतों, कुटिलताओं, छल-कपट, धोखा आदि दुर्वृत्तियों का पूरा भण्डार भरा हुआ है; बुद्धि के कारण ही मानव को सृष्टि के सब प्राणियों से श्रेष्ठ और विचारवान कहलाने का अधिकार प्राप्त हुआ है; परन्तु मानव ने शायद ही कभी अपने कार्यों से अपनी श्रेष्ठता सिद्ध की हो। मानव ने स्वार्थ-पूर्ति हेतु भौतिक सुखों के अर्जन में ही अपनी बुद्धि का प्रयोग किया है। उसने तरह-तरह के आकर्षक आडम्बरों से पृथ्वी को पाट दिया है, परन्तु इस प्रयास में अन्य प्राणियों के प्रति उसने जो अन्याय, अत्याचार एवं क्रूर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताएँ की हैं, उनके भार से तो सर्वसहा पृथ्वी भी काँप उठी है। यह सब करिश्मा मानव की बुद्धि का ही परिणाम है।

जितने अवगुण, जितनी वक्रताएँ, जितनी महत्वाकांक्षाएँ, जितनी तृष्णा, अहंकार, क्रोध, मद-मत्सर-काम-क्रोध-मोहादिक कुवृत्तियाँ मानव में होती हैं, उतनी संसार के अन्य किसी भी प्राणी में नहीं होतीं। इतने पर भी आश्चर्य की यही बात है ऐसे उच्छृंखल, उद्दण्ड, तष्णातुर प्राणी को ही बुद्धिमान होने की उपाधि मिली है। स्वार्थ के लिए मानव ने यदि पृथ्वी पर कुछ अजीबोगरीब कार्य किये हैं और भाँति-भाँति के आविष्कारों तथा वैज्ञानिक उपलब्धियों से कीर्ति अर्जित की है, तो इसमें कोई बड़ी बात तो हुई नहीं। मानवेतर प्राणियों ने भी अपने आवास, आहार, क्रीड़ा, मनोरञ्जन आदि का अपनी प्रवृत्तियों के अनुसार व्यवस्था तो की ही है। यही सब कार्य कुछ विशेष आडम्बरों तथा आकर्षणों के साथ मानव भी करता है और अन्य प्राणियों की तरह वह भी अपना जीवन-काल पूरा करता है। पृथ्वी के समग्र प्राणियों के हित में उसने ऐसी कोई उद्भावना तो की नहीं कि जिसके कारण उसे पृथ्वी का सर्वश्रेष्ठ प्राणी माना जाये। मानव यदि अद्वितीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक शक्ति प्राप्त कर लेता, अमरता प्राप्त कर लेता, बुढ़ापे को रोक लेता, मृत्यु को पराजित कर देता, तो मानव को सर्वश्रेष्ठ बुद्धिमान माना जासकता था, लेकिन हजारों आडम्बर रच कर भी अन्य प्राणियों की तरह का ही जीवन बिताने वाले मानव को यह विशिष्टता कैसे प्रदान की जाये ?

सृष्टि के अन्य प्राणी आपस में झगड़ा करते हैं, बलवान प्राणी कमजोर प्राणी की हत्या कर डालता है और आपस में शत्रुता का भाव भी प्राणियों में पाया जाता है। इसका कारण यह है कि उन प्राणियों में बुद्धि, विवेक एवं विचारक शक्ति का अभाव है। वे एक दूसरे के विचारों और मनोभावों को नहीं जान पाते। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि मानव के पास मस्तिष्क, बुद्धि, विचार-शक्ति सभी कुछ होते हुए भी वह सभी प्राणियों की अपेक्षा अधिक लड़ाकू, निर्दय और शत्रुता एवं परस्पर वैमनस्यता पैदा करने वाला प्राणी साबित होरहा है। मानव अपने मित्र की हार्दिक निष्ठा तथा प्रेम से भली भाँति परिचित होकर भी मौका पड़ने पर उसे भी धोखा देने से बाज नहीं आता। मानव बातचीत द्वारा दूसरों के भाव जान कर भी, निष्प्रयोजन विवाद पैदा करके, चलते चलते शत्रुता मोल ले लेता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। मानव कदम-कदम पर अपने ही सजातीय मानव से कपट, बेईमानी और अन्याय करने में हिचक महसूस नहीं करता, यहाँ तक कि अपने माँ-बाप, भाई-बहन, चाचा-ताऊ आदि रक्त-सम्बन्धियों को भी धोखा देने अथवा उनकी हत्या कर देने में कोई लिहाज नहीं करता। क्या संसार का अन्य कोई भी प्राणी इतना गिरा हुआ और निर्दय आचरण करता है ? होना तो यह चाहिए था कि बुद्धिमान होने के नाते मानव का आचरण व व्यवहार अन्य सभी प्राणियों से श्रेष्ठतर, शान्त, प्रेममय और आपस में हिलमिल कर, एक होकर रहने वाला होता ; परन्तु इसके विपरीत मानव का आचरण तथा व्यवहार तो अन्य नासमझ प्राणियों से भी अधिक निर्दयता और कटुता से भरा हुआ है। ऐसे प्राणी को पृथ्वी का श्रेष्ठ प्राणी न कहकर, पृथ्वी का खूंख्वार और निर्दय प्राणी कहना ही अधिक उपयुक्त होगा।

मानव-बुद्धि का सर्व-नाशक प्रयोग

पृथ्वी के मानवेतर सभी प्राणियों को अपनी सुरक्षा के लिए प्रकृति ने तेज दाँत, मजबूत खुर, नुकीले सींग आदि अवयव प्रदान किये हैं। परन्तु मानव के मस्तिष्क ने ऐसी जहरीली गैसें बनाई हैं, जिनसे किसी भी प्राणी का सेकेण्डों में काम तमाम हो सकता है। मानव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुद्धि ने ऐसे घातक तथा संक्रामक कृमियों का निर्माण किया है, जिनको मुक्त कर देने से सहस्रों सम्पर्क में आये प्राणियों का क्षण मात्र में प्राणान्त होसकता है। परम्परागत अस्त्र-शस्त्रों की बात छोड़ मानव-विज्ञान ने ऐसे क्षेप्यास्त्र तथा राकेटों का निर्माण किया है, जो हजारों मील दूर पहुँच कर प्राणियों की तो बात ही क्या, पृथ्वी तक को जला कर भस्मीभूत कर सकते हैं। अणुबमों, उदजन बमों तथा अणु अस्त्रों के प्रहार से पृथ्वी पर स्थित समस्त जड़-चेतन तो जल कर खाक हो ही जायेंगे, पृथ्वी भी अपनी असली हालत में नहीं रह पायेगी। इनके अलावा भी मानव-मस्तिष्क में अनेकों कपट-जाल और धूर्तता-पूर्ण योजनाएँ बनती रहती हैं, जिनसे वह किसी भी समय, किसी भी प्राणी अथवा प्राणियों का विनाश कर सकता है। क्या विधाता ने मानव को यही विनाशकारी खेल खेलने के लिए ही बुद्धि प्रदान की है? क्या मानव स्वयं अपना नाश करने और अपनी श्रेष्ठता पर कलंक लगाने वाले अकाण्ड काण्ड ही करता रहेगा?

पृथ्वी के अन्य सभी प्राणी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सन्तोष तथा धीरज के साथ प्रयत्न करते हैं। उन्हें उतना ही चाहिए, जिससे उनकी नैसर्गिक भूख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा प्यास मिट जाये। संग्रह वे करते नहीं। आज के अलावा कल की चिन्ता उन्हें होती नहीं। प्रवृत्ति-मूलक प्रयत्न से प्राप्त आहार से ही वे सन्तोष करते हैं। मानव के वशवर्ती पालतू जानवर तो मनुष्य का दिया हुआ ही खा पाते हैं। यदि उन्हें पूरा चारा न मिला, तो उन्हें आधा पेट भूखा रह कर ही सन्तोष करना पड़ता है। परन्तु मानव ऐसा सन्तोषी और सब्र करने वाला प्राणी नहीं है। मानव अपनी क्षुधा शान्त करने व अन्य इच्छाओं की पूर्ति के लिए निकृष्ट कोटि का अन्याय अथवा भयंकर जघन्य दुष्कृत्य करने में संकोच नहीं करेगा। इसके अलावा मानव की आवश्यकताओं की कोई सीमा भी नहीं होती। मानव को खानपान का सामान चौबीस घण्टों में कई बार चाहिए, जबकि अन्य प्राणियों को चौबीस घण्टों में एक बार पूरी मात्रा में मिला आहार ही काफी होता है। मानव सोने और आराम करने में सब प्राणियों से आगे रहता है। मानव के समान आराम की प्रवृत्ति वाला और कोई प्राणी नहीं होता। मानव ही एक ऐसा प्राणी है, जिसे आवश्यकता के किसी पदार्थ की, किसी भी अनुपात की मात्रा से, सन्तोष नहीं होता; अधिक पाने की उसकी इच्छा बनी ही रहती है। सभी प्राणी यौन-क्रिया-तृप्ति मौसम, ऋतु और समय के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसार करते हैं, परन्तु मानव के लिए यौन-क्रिया-पूर्ति करने में मौसम और समय का कोई प्रतिबन्ध नहीं है, मानव नित्य ही यौन-क्रिया-पूर्ति का इच्छुक बना रहता है। इस प्रकार मानव हर बात में सभी प्राणियों की अपेक्षा असीम असन्तोषी और बेसब्र है; जब कि बुद्धिमान होने के नाते उसे संयमित, सुसंस्कृत, आत्मत्यागपूर्ण सन्तुष्ट जीवन-पद्धति ग्रहण करनी चाहिए थी और सबके साथ जीने एवं जिलाने के सिद्धान्त को क्रियान्वित करना चाहिए था।

मानव—सबसे अधिक खतरनाक

मानव की भयंकरता से इतिहास की पुस्तकें भरी हुई हैं। मानव ने अपने क्षेत्र के विस्तार के लिए, काम वासना-तृप्ति के लिए, किसी औरत को पाने के लिए, किसी खजाने या धन दौलत के भण्डार को पाने के लिए अनेकों बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़ी हैं, जिनमें संसार के पदार्थों और प्राणियों का बेहद्द विनाश हुआ है। मानव ने चोर, डकैत, लुटेरा बन कर अपनी ही जाति को लूटा है; मानव निर्दय हत्यारा बन कर अपने ही बन्धुओं तथा सृष्टि के अन्य प्राणियों का विनाश करता आया है। इस प्रकार की अनेक विनाशकारी प्रक्रियाओं को मानव ने अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए जन्म दिया है, जो उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यायी, अत्याचारी, क्रूर और स्वार्थी सिद्ध करती हैं। अगर मानव मस्तिष्क ने अपनी बुद्धि का प्रयोग इस प्रकार की विनाशकारी घटनाओं के लिए ही किया है, तो इससे तो बिना बुद्धि वाले प्राणी ही लाखों गुना अच्छे हैं, जिनकी न कोई अप्राकृतिक चाहत होती है और न जो योजना-पूर्वक शारीरिक उपभोग के लिए दुष्कृत्य ही करने की अभिसन्धि करते हैं।

उपर्युक्त तथ्यों से यह प्रमाणित होजाता है कि विधाता कि सृष्टि में मानव ही एक ऐसा प्राणी है, जो उसकी सृष्टि के लिए खतरनाक है, और जब चाहे तब इस सृष्टि को तहस-नहस कर सकता है। अन्य किसी भी प्राणी से सृष्टि को कोई खतरा उत्पन्न नहीं होसकता; मानव ही अपने मस्तिष्क से सोच कर ऐसे ऐसे कुकर्म और पाप करता है, जिनकी अति होजाने पर विधाता को भी महाप्रलय उपस्थित करके सृष्टि का विनाश करना पड़ता है। अतः मानव ही संसार के प्राणियों में सबसे अधिक भयंकर और खतरनाक है ; श्रेष्ठ अथवा सत्-बुद्धि-सम्पन्न तो उसे मानना ही नहीं चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठों-

ईश्वर ने मनुष्य को स्वतन्त्र उत्पन्न किया है और यह अन्तः प्रेरणा प्रदान की है, कि वह अपनी बुद्धि का प्रयोग, परिस्थितियों के अनुसार स्वतन्त्रता-पूर्वक करे। मानव अन्य प्राणियों की अपेक्षा स्नेहिल तथा संवेदनशील भी है। वह अपने भावों को वाणी दे सकता है और अपने को अपने अन्य व्यक्तियों के सम्मुख स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त भी कर सकता है। इस विशेषता के बावजूद, वह सामाजिक परम्पराओं, रूढ़ियों एवं बन्धनों से अपने को मुक्त नहीं कर पाता। उसकी स्वतन्त्र आत्म-चेतना समाज के विधि-निषेधों के व्यूह में इस कदर उलझ जाती है कि वह परम्पराओं का केवल दास बनकर रह जाता है और अपनी शक्तियों के स्वतन्त्र विकास में असमर्थ होजाता है। प्रस्तुत प्रकरण में मनुष्य की इसी बाध्यता पर विचार प्रकट किये गये हैं। आशा है कि पाठकगण इसे पढ़ कर अपने कार्यों को, विवेक-सम्मत स्वतन्त्र आत्मचेतना के अनुसार, आकार देने की क्षमता प्राप्त कर सकेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ | मानव परंपराओं के बंधन

संसार के सभी क्षेत्रों में अपने अपने पुरखों तथा बुजुर्गों द्वारा बनाई हुई परम्पराओं और मान्यताओं के अनुसार जीवन-यात्रा तय की जाती है। किसी क्षेत्र की परम्पराएँ अधिक बन्धन-मूलक प्रतीत होती हैं, तो कई एक क्षेत्रों की परम्पराएँ मानव-जीवन को स्वतंत्रता भी देती हैं। भारत में कई प्रकार की प्रथाएँ और परम्पराएँ, अलग अलग जातियों के अनुसार प्रचलित हैं; परन्तु भारत की अधिकांश परम्पराएँ मानव जीवन को स्वतंत्रता देने के बजाय, बन्धन में अधिक जकड़ती हैं। अधिकतर लोग इन मान्यताओं के बंधनों को अपने जीवन के अनुरूप नहीं पाते, इसलिए इनके प्रति वे उदासीन ही वने रहते हैं और कुण्ठित मन से ही जीवन नैया पार करते हैं। परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि इतने पर भी मानव पुरानी लकीर को पीटना ही अधिक श्रेयस्कर समझता है, वह परम्पराओं अथवा मान्यताओं में परिवर्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने का साहस नहीं जुटा पाता। अधिकांश मानव यह भी जानते हैं कि हमारी प्रथाओं में यथार्थ और वास्तविकता का अभाव है, परन्तु फिर भी लोक-निन्दा के भय से कोई आगे कदम बढ़ाने की हिम्मत नहीं कर पाता। अगर कोई व्यक्ति सामाजिक व धार्मिक प्रथाओं के विरुद्ध कुछ कर भी डालता है, तो मानव-समाज उसे फौरन उच्छृङ्खल, दुश्चरित्र एवं अधर्मी की उपाधि दे डालता है; इसलिए मानव चाहते हुए भी प्रथाओं के विरुद्ध जाने की हिम्मत नहीं बटोर पाता।

भारतीय परम्पराओं और प्रथाओं में सबसे बड़ी कमजोरी अथवा सबसे बड़ा बन्धन यह है कि इन प्रथाओं ने मानव-शरीर, मन और मस्तिष्क को पूर्णतया जकड़ लिया है, स्वतंत्रता की कहीं कोई गुंजाइश ही नहीं छोड़ी। मानव स्वतंत्र तन-मन और मस्तिष्क से ही कुछ प्रगतिशील विचार प्रकट कर सकता है तथा उन्नतिशील कार्य कर सकता है, परन्तु भारत-वासियों के मन-मस्तिष्क, परम्पराओं एवं रूढ़ियों के बन्धनों में जकड़े होने की वजह से, इतनी अधिक प्रगति नहीं कर पाए, जितनी प्रगति की स्वतंत्र भारत को आवश्यकता थी। फलस्वरूप भारत पिछड़े हुए देशों की श्रेणी में ही अब तक परिगणित होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूढ़ियों का जटिल जाल

यह बात तो सर्वविदित है कि परतन्त्र मानव स्वतंत्र मानव से हर स्थिति में पिछड़ा हुआ रहेगा। भारत की सामाजिक एवं धार्मिक प्रथाओं में इतनी अधिक कुरीतियाँ और अन्ध-विश्वास-मूलक रूढ़ियाँ भरी हुई हैं कि भारत का मानव आत्मविवेक-पूर्ण स्वतंत्र कार्य-पद्धति की कल्पना ही नहीं कर सकता। वस्तुतः शताब्दियों से स्थापित रूढ़ रीतियों एवं रस्मों ने भारतीय मन-मस्तिष्क को इतनी दृढ़ता से जकड़ रखा है कि मानव इनके उल्लंघन के विचार से ही अनिष्ट की आशंका से काँप उठता है। यह अन्धविश्वास ही भारत की प्रगति में सबसे बड़ा बाधक है। कोई भारतीय किसी प्रगतिशील काम का संकल्प भी करता है, तो उसके रास्ते में प्राचीन मान्यताएँ बाधा बन कर रुकावट पैदा कर देती हैं और मनुष्य का चित्त अपने पक्ष से विचलित होउठता है। उदाहरणस्वरूप यदि किसी उद्योग की स्थापना के लिए चुने गये भूमि-खण्ड में पीपल का वृक्ष अथवा कोई छोटा मोटा देवालय पहले से मौजूद हो, तो उन्हें वहाँ से हटाने का साहस समाज की रूढ़ धारणा के कारण सामान्यतः नहीं होपाता। घर से चलते समय छींक की आवाज सुनने से, बिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के रास्ते में आजाने से अथवा पानी का खाली घड़ा मिल जाने से अशुभ घटना की आशंका होजाती है और मनुष्य आगे कदम बढ़ाने से रुक जाता है। शुभ शकुन और अपशकुन के सम्बन्ध में जो अन्धविश्वास प्रचलित है, उस पर विचार करने से कोई तथ्य नहीं प्रतीत होता। विवाह, तिलक, व्यवसाय, यात्रा आदि अनेक कार्यों में भारतीय शकुन-अपशकुन, मुहुर्त आदि देखकर कार्य सम्पन्न करते हैं, परन्तु अन्ततः सभी शादियाँ, व्यवसाय, यात्राएँ सफल नहीं होतीं, तब शकुन अपशकुन और मुहूर्त जैसे अन्धविश्वासों का क्या महत्व रह गया? अगर इनका महत्व होता तो सभी कार्य पूर्णतया सफल होने चाहिए थे।

तात्पर्य यह है कि शकुन एवं अपशकुन ने अन्ध-विश्वास-बद्ध विचार के रूप में भारतीय मानस को पूरी तरह से जकड़ रखा है। बहुत से भारतीय रेलगाड़ी के स्नान-घरों में स्नान करना अपवित्र कार्य समझते हैं और रेलगाड़ी में खाना खाने में भी हिचक महसूस करते हैं। छुआछूत की दुर्भावना से ग्रस्त बहुत से आदमी निम्न-वर्ग के पुरुष से छू भर जाने से स्नान करना आवश्यक समझते हैं। भारतीय मानव विधवा औरत को अपशकुन का प्रतीक मानते हैं। इस प्रकार के कुण्ठित विचारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले पुरुष किसी उद्योग या कारखाने में कैसे काम कर सकते हैं, क्योंकि वहाँ तो हर वर्ग, हर जाति के मानव काम करते हैं। इन सबके बीच में रह कर संकुचित विचारों वाले पुरुष निःसंकोच भाव से काम नहीं कर सकते। इसी प्रकार की अनेक धार्मिक व सामाजिक रूढ़ प्रथाएँ भारतीयों के दिल-दिमाग को जकड़े हुए हैं, जो भारत और भारतवासियों की प्रगति में अभिशाप बनी हुई हैं।

भारत को छोड़ कर संसार में जितने भी प्रगतिशील देश हैं, वे सभी मानव के विवेक-स्वातंत्र्य को पूरा महत्व देते हैं। ये राष्ट्र इस तथ्य से परिचित होचुके हैं कि मानव की विचार-स्वतंत्रता ही प्रगति और उन्नति का मार्ग है और मानव की आत्मा का बन्धन देश के लिए घातक सिद्ध हो सकता है। अतः प्रगतिशील देशों की प्रगति का कारण मानव की यह स्वतंत्रता ही है। सामाजिक व धार्मिक मान्यताएँ और प्रथाएँ प्रगतिशील देशों में भी होती हैं, परन्तु वे भारत की तरह मानव को बन्धन में डालने वाली नहीं होतीं। हर प्रगतिशील मुल्क में मानव को स्वतंत्रता से सोचने की, स्वतंत्रता से कार्य करने की, स्वतंत्रता से आमोद-प्रमोद, मनोरंजन करने की और स्वतंत्रता से धार्मिक प्रथाएँ निभाने की,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्णतया छूट रहती है, जिससे वहाँ के लोग उन्मुक्त भाव से प्रगति के पथ पर अग्रसर रहते हैं। यही कारण है कि प्रगतिशील देशों के स्त्री-पुरुष प्रफुल्लित, स्वस्थ और निर्भय नजर आते हैं। यही विशेषताएँ प्रगति-पूर्ण स्वस्थ जीवन-मार्ग में आगे बढ़ने के लिए प्रेरणादायक व उत्साह-वर्धक सिद्ध होती हैं। भारतीयों की आत्मा रूढ़ियों, कुरीतियों और अन्धविश्वासों से जकड़ी होने के कारण, उनके सूखे मुरझाये शरीर और चेहरे तेजोहीन व रोते हुए-से दिखलाई पड़ते हैं। इस मानसिक दौर्बल्य के कारण ही भारतीयों में अपेक्षित ईमानदारी, सत्यनिष्ठा तथा साहसिकता का अभाव पैदा होजाता है। मानसिक साहस तथा स्वतन्त्र निर्भीक चित्त-वृत्ति के बिना मानव हँसमुख व स्वस्थ नहीं रह सकता, क्योंकि उसकी अन्तरात्मा उसको धिक्कारती रहती है।

युवा वर्ग की सस्मया

मानव की युवा अवस्था ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण और पुरुषार्थ-योग्य मानी जाती है। इसी अवस्था में मानव प्रगति और उन्नति के मार्ग की ओर अग्रसर होना शुरू करता है। लेकिन भारत का युवावर्ग इस अवस्था में आते ही अपने जीवन-साथी के चुनाव की समस्या में फँस जाता है। भारतीय [illegible] और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्धनों के अनुसार युवक-युवतियाँ परस्पर स्वतंत्रता-पूर्वक मिल नहीं सकते और एक दूसरे के मनोभाव भी नहीं जान सकते। अतः किसी प्रगतिशील कार्य के करने या विचार को कार्यान्वित करने के स्थान पर जीवन-साथी के चुनाव की समस्या ही युवावर्ग के मन-मस्तिष्क पर छा जाती है। माँ-बाप या अन्य रिश्तेदारों द्वारा यदि जीवन-साथी खोजकर वैवाहिक सम्बन्ध कर भी दिये जाते हैं, तो अक्सर इस प्रकार के सम्बन्धों में युवक युवती के मन नहीं मिल पाते, जिससे दूसरी एक समस्या पहली समस्या से भी भयंकर और टेढ़ी खड़ी होजाती है, जो जीवन भर मन-मस्तिष्क को मथती रहती है। इस तरह भारतीय युवावर्ग अपने महत्वपूर्ण जिन्दगी के हिस्से को निरर्थक परेशानियों के कारण अनुपयोगी बना देता है।

अन्य प्रगतिशील देशों के युवक-युवतियों के मिलन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता। युवक-युवतियाँ स्वतंत्रता से आपस में मिलते हैं, बातचीत करते हैं, हँसते-गाते हैं, आमोद-प्रमोद करते हैं, और इन्हीं बातों से एक दूसरे की मनोभावनाएँ भी जान लेते हैं। मनोभावनाओं को अपने अनुकूल पाकर ही वे शादी की रस्म पूरी करते हैं। इस तरह की शादियों में प्रदर्शन व अपव्यय भी नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता और ऐसी शादियाँ स्थायी भी रहती हैं। अगर दम्पति का किसी बात से मनमुटाव होगया, तो वे शादी के बन्धन को तोड़ने में भी स्वतंत्र हैं। भारत की तरह शादी का बन्धन तोड़ना लोकनिन्दा अथवा बदनामी का कारण नहीं बनता। उपर्युक्त तथ्य से जीवन-साथी का चुनाव मन-मस्तिष्क पर बोझ बनने के बजाय, एक दिलचस्प और आमोद-प्रमोद का आधार बन जाता है और युवक-युवतियाँ अपने आपको पूर्णतया स्वतंत्र भी महसूस करते हैं।

माँ-बाप या अन्य रिश्तेदारों द्वारा तय की गई शादी तो भारतीय युवावर्ग के लिए एक जान-लेवा समस्या ही बन जाती है। इस प्रकार की शादी में युवक युवती शादी के बन्धन में बँधने के बाद ही एक दूसरे से परिचित होपाते हैं, अतः विवाह के पूर्व उन्हें एक दूसरे के गुण, कर्म, स्वभाव के बारे में अनभिज्ञता ही होती है। रंगरूप भी एक दूसरे की मनोभावना के विरुद्ध होसकता है। इसलिए इस तरह की शादी आमतौर पर असफल हो रहती है, भले ही दम्पति लोक-लज्जा-वश, संकोच एवं कुण्ठित मन से कुढ़ते हुए जीवन बिता दें, पर उनके जीवन में कभी प्रेरणा, उत्साह और प्रफुल्लता नहीं आ सकती। भारत में ऐसे दम्पतियों की संख्या लाखों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी। ये लाखों दम्पति देश के विकास कार्यों में कोई सहयोग अथवा महत्वपूर्ण मदद नहीं कर सकते, क्योंकि उनके पास पहले से ही उनकी जीवन-रूपी समस्या है, जिसने उनके तन-मन-मस्तिष्क आदि को हीन और कुण्ठित कर डाला है। विदेशों में इस प्रकार की समस्या का प्रश्न ही नहीं पैदा होता। वहाँ स्वयं युवक-युवती एक दूसरे को महीनों अथवा सालों तक जाँच कर ही शादी के बन्धन में बँधते हैं।

भारत में आज भी स्त्री के साथ भेद-भाव वाला व्यवहार किया जाता है। आज भी उस पर इतना विश्वास नहीं किया जाता कि वह पुरुष की हर व्यवसाय, हर क्षेत्र, हर कार्यालय में सहयोगी बन सके। मध्यम और निम्न वर्ग की कुछ औरतें अवश्य अपनी आवश्यकताओं से मजबूर होकर व्यावसायिक क्षेत्र में घुस गई हैं; परन्तु ऐसी परिपाटी नहीं बन पाई है, जिससे सभी वर्ग की औरतें व्यावसायिक क्षेत्रों में प्रवेश कर सकें। इससे भारतीय मानव को आर्थिक संकट भी झेलना पड़ता है और देश की प्रगति में भी बाधा आती है। अन्य प्रगतिशील देशों में औरत, मर्द, बच्चे बुड्ढे सभी अपने देश के विकास कार्यों में संलग्न रहते हैं, जिससे कार्य बहुत जल्द और आसानी से समाप्त होजाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में भी अगर महिलाओं को हर प्रकार की उच्च शिक्षा दिला कर, हर क्षेत्र में उनका सहयोग लिया जाए, तो प्रगति में बहुत अधिक सुधार होसकता है।

इस प्रकार भारत में अनेक सामाजिक व धार्मिक प्रथाओं के बन्धन हैं, जो भारतवासियों के बुजुर्गों द्वारा ही बनाए हुए हैं। परन्तु यही बन्धन देश और मानव के लिए वरदान न बन कर अभिशाप बन गए हैं। इससे तो आदि मानव ही अच्छा था, जो पूर्ण स्वतंत्र जीवन बिताता था ; प्रसन्नचित्त रह कर अपनी शक्तियों का पूरी तरह उपयोग करता था। अतः इन परम्परागत बन्धनों को बुद्धिमानी का काम नहीं कहा जा सकता। ऐसी अवस्था में यह अत्यन्त आवश्यक होगया है कि इन रूढ़ प्रथाओं में समयोचित हितकारी परिवर्तन किया जाये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे के पृष्ठ–

यह बताते हैं कि जन्मत: स्वतन्त्र मानवात्मा संसार में प्रविष्ट होते ही अनेक कुरीतियों तथा अस्वस्थ परम्पराओं के जाल में बुरी तरह ग्रस्त होजाती है। आदिकाल से प्रचलित रीति-रस्मों को सभ्य युग के दिखाऊ ऊपरी आडम्बरों ने और भी अधिक अमानवीय एवं दुष्कर बना दिया है। शासन के कानूनी बन्धन ने मानव के स्वाभाविक सत्य, नैष्ठिक जीवन तथा सरल व्यवहार को बंकिम, कुटिल एवं अरुचिपूर्ण स्वरूप प्रदान कर दिया है। जन्म से मृत्यु तक मानव इसी प्रकार दलदल में धँसता, काँखता चलता रहता है। काश वह साहस एवं आत्म-विश्वास-पूर्वक इन दूषित बन्धनों के जाल को तोड़ पाता !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६ | मानव कुरीतियाँ

आज के युग में प्रचलित रीति-रिवाजों में से अनेक की स्थापना हमारे प्राक् इतिहास-युगीन आदि मानव ने ही की थी। आदि मानव सृष्टि के उस अन्धकार-युग में पृथ्वी-तल पर आविर्भूत हुआ था, जब उसकी बुद्धि सर्वथा अविकसित थी। अपने वृहदाकार शरीर के अलावा उसके पास उस समय और कोई साधन नहीं था। उसकी विचार-शक्ति भी क्षीण थी। चतुर्दिक धरती और आकाश को देख कर सर्वप्रथम उसमें जिज्ञासा वृत्ति का उदय हुआ होगा। धीरे धीरे परिव्याप्त वातावरण तथा प्रकृति के रहस्यों को जानने समझने के लिए उसमें तीव्र इच्छा बलवती हुई होगी। इसलिए आदि मानव को परिस्थिति के अनुसार जब जो बात उचित व उपयुक्त महसूस हुई, उसीको वह प्रथा मानता चला गया। उसके पास पूर्ण विकसित बुद्धि और गहराई से सोचने लायक विचारों की श्रृंखला थी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, जिससे वह प्रथाओं के औचित्य अथवा अनौचित्य का ध्यान रख सके। तब भी आदि मानव की दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता की तारीफ ही करनी पड़ेगी कि विना किसी साधन के उसने जो प्रथाएँ बनाईं, वे कुछ परिवर्तनों के बाद आज भी प्रचलित हैं। आज की प्रचलित प्रथाओं से आदि मानव द्वारा निर्मित प्रथाएँ अधिक दोषरहित थीं। प्रथाओं में जो दोष व कुरीतियां आई हैं, वे सब आदि मानव के बाद के युगों के मानव की देन हैं। इस सम्बन्ध में इस पुस्तक के प्रारम्भ के दूसरे प्रकरण में विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है।

मानव जैसे जैसे अधिक सभ्य अथवा संसार का ज्ञाता होता जाता है, वैसे वैसे उसमें अधिक सुखों की चाहत भी पैदा होती जारही है और सुखों की चाहत की पूर्ति के लिए मानव प्रथाओं में हेर-फेर भी करता जारहा है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि सभ्य मानव द्वारा प्रथाओं में किए गए हेर-फेर से ही उनमें दोषों, कुरीतियों, पाखण्डों व आडम्बरों का अधिक संचार होरहा है। मानव ने जहाँ अधिक सुख-प्राप्ति के लिए प्रथाओं में तब्दीलियां कीं, वहाँ उसे सुख तो मिला नहीं, परेशानी अवश्य अधिक मिली। मानव ने प्रथाओं की वास्तविकता और यथार्थ की ओर ध्यान न देकर उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध आकर्षणों व लुभावने लगने वाले आडम्बरों से अवश्य मढ़ दिया। यही आडम्बर अब बढ़ते बढ़ते अति की सीमा तक पहुँच गए हैं और वे बहुत खर्चीले तथा जीवन के लिए निरर्थक बन गये हैं।

साहसी व्यक्ति समाज को बदल सकता है !

आश्चर्य की बात यह है कि इन कुरीतियों से परेशान होकर मानव समाज को ही दोषी ठहराता है। वह यदि परिपाटी-मुक्त कोई काम करना चाहता है तो कहने लगता है कि 'क्या इस समाज में ऐसा काम कर सकना सम्भव है ? रूढ़िवादी समाज के कारण किसी का स्वतंत्र जीना क्या सम्भव है ?' कुछ इसी प्रकार के शब्दों से वह समाज पर आक्षेप करता है। पर वह यह भूल जाता है कि वह स्वयं समाज का एक अंग है और उसीके समान व्यक्तियों से समाज बना है। वह अगर चाहे तो समानधर्मा सहयोगियों को लेकर समाज को ही बदल सकता है और निरन्तर परेशान करने वाली कुरीतियों से मुक्त होसकता है। प्रथाएँ, मान्यताएँ, मानव की सुख-शान्ति और भलाई के लिए होती हैं, परेशानी बढ़ाने के लिए नहीं ? पर खेद की बात यही है कि बावजूद परेशानी एवं कठिनाइयों के, कोई भी प्रचलित प्रथाओं में सामयिक नवीनीकरण करने का साहस नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जुटा पाता ।

कुरीति–ग्रस्त विवाह

भारत में शादियों की कुरीतियों की ओर ही ध्यान दीजिए । भारतीय शादियों में एक से एक बढ़ कर प्रदर्शन किए जाते हैं, जिनमें प्रचुर धन-राशि का अप-व्यय होता है । वर-कन्या को विवाह के पूर्व और बाद में सैकड़ों निष्प्रयोजन रीति-रस्मों का पालन करना पड़ता है । कई प्रकार से शकुन, अपशकुन, मुहूर्त आदि देखे जाते हैं; हफ्ते, दस दिन तक वर-कन्या के दोनों पक्षों के सदस्य थकावट व परेशानी से चूर-चूर होजाते हैं; ढंग से खाना तक नहीं खा पाते । शादी वाले दिन लड़की को ऐसे प्रतिबन्धों में रहना पड़ता है कि बेचारी को थकावट व परेशानी के मारे चक्कर आने लगते हैं । एक युवक-एक युवती को प्रणय-सूत्र में बांधने के लिए इतने आडम्बरों की क्या आवश्यकता ? क्या युवक-युवती के दाम्पत्य जीवन में इन आडम्बरों से कोई अच्छाई अथवा विशेषता आ पाती है ? अगर नहीं, तो क्यों दोनों पक्षों से सैकड़ों आदमी परेशानी मोल लेते हैं और क्यों युवक-युवती को भी परेशान किया जाता है ? यह बात भी नहीं है कि इस प्रकार आयोजित दाम्पत्य-सूत्र वैवाहिक जीवन को सुखी बना देते हों ! तब फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकतर वैवाहिक सम्बन्ध यदि असफल ही रहते हैं तो व्यर्थ के इतने आडम्बरों से क्या लाभ ?

इसके विपरीत आदि काल में युवक-युवती स्वेच्छा से एक दूसरे का वरण करते थे। दोनों एक दूसरे के मनोभावों व रंग-रूप से परिचित होते थे और बिना किसी आडम्बर व बिना किसी अपव्यय के समाज के प्रमुख द्वारा शादी सम्पन्न करायी जाती थी। युवक युवती व अन्य रिश्तेदारों को भी कोई हैरानी व परेशानी में पड़ने की आवश्यकता नहीं थी। आजकल के अधिकांश प्रगतिशील मुल्कों में भी शादी की इसी परिपाटी का प्रचलन है। तब आजकल भारत-वासी क्यों इन कुरीतियों से चिपके हुए हैं ? क्या अन्य स्वतन्त्रचेता मुल्कों में होने वाली शादियाँ सुखकर नहीं होतीं ? भारतवासी पहले तो अन्याय, झूठ एवं कपट का सहारा लेकर अनाप-शनाप धन इकट्ठा करते हैं और फिर उस धन को शादी-व्याह के झूठे आडम्बरों की भेंट चढ़ा देते हैं। पता नहीं इस क्रिया से भारतवासियों को कौन से सुख की प्राप्ति होती है ?

भारत में कन्या का पिता यथाशक्ति अपनी पुत्री के लिए दहेज के रूप में गहने व कपड़ों का प्रबन्ध करता है। बारात के स्वागत व साज-सज्जा में भी वह अपनी तरफ से कोई कमी नहीं आने देता। वह वर-पक्ष को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुश रखने के लिए, हर सम्भव प्रयास करता है ; पर इसके बावजूद जब वर-पक्ष अपनी बढ़ी-चढ़ी माँगें कन्या पक्ष पर थोपता है, तब अधिक दुःखदायी स्थिति उत्पन्न होजाती है।

वर-कन्या से अधिक महत्व धन का

भारत में आम तौर पर वर-पक्ष से कन्या-पक्ष का दर्जा उतर कर माना जाता है। बहुधा वर-पक्ष कन्या के पिता के सामने ऐसी माँगे प्रस्तुत कर देता है, जिनकी पूर्ति करना उसकी सामर्थ्य में नहीं होता। इस पर दोनों पक्षों में मनमुटाव व कभी-कभी झगड़े भी हो जाते हैं। सोचने की बात यह है कि लड़का-लड़की क्रय-विक्रय की जड़ वस्तु तो है नहीं ; जब वर और कन्या दाम्पत्य-सूत्र के पवित्र बन्धन में आबद्ध होरहे हों, तव वहाँ धन अथवा अन्य मूल्यवान पदार्थों के माँगने का क्या औचित्य है ? जब एक पिता अपनी कन्या वर को समर्पित करता है, तब उसकी तुलना में अन्य पदार्थों को अधिक महत्व क्यों दिया जाय ? यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि वर पक्ष के परिवार में भी तो कन्याएँ पैदा होती ही होंगी। कल जब वह अपनी कन्या का विवाह करेगा, तब उसके साथ भी वर पक्ष ने यदि ऐसा ही दुर्व्यवहार किया, तो उसके दिल पर कैसी चोट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगेगी ? परन्तु दहेज लेते समय यह स्थिति भुला दी जाती है और दहेज रूपी मीठे लालच में उचित अथवा अनुचित तरीके से जो भी कुछ मिल जाए, उसे प्राप्त करना वर का परिवार अपना कर्तव्य समझ लेता है। इस प्रकार के दहेज-रूपी मुफ्त का धन प्राप्त करने वाले लालची खानदान का समाज द्वारा बहिष्कार कर देना ही उसका उचित दण्ड है। लेकिन अफसोस यही है कि भारत में समाज का सिर्फ नाम ही जीवित है ; समाज व समाज-सुधारक का कर्तृत्व जीवित नहीं हैं ; अतः मानव की आपाधापी चल रही है। वर्ना प्राचीन समय में बिना गहने-कपड़े व किसी भी प्रकार के दहेज के, शादियां बड़े आराम से सम्पन्न होजाती थीं। किसी प्रकार का कोई झगड़ा-झंझट होने की नौबत ही नहीं आती थी।

भेदभावों से सुख का अन्त

आज के मानव ने जाति-भेद, वर्ण-भेद, ऊँच-नीच का भेद पैदा करके मानव और मानवता के साथ घोर अन्याय किया है। इन भेद-भावों से मानव का मेल-जोल, मानव का सामाजिक रहन-सहन, मानव की कीमत और मानव का मानव से प्यार आदि सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट होकर, मानव की प्रफुल्लता, मानव की आन्तरिक शान्ति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव का स्वास्थ्य आदि सब कुछ गायब होगया है। आज के मानव का जीवन इन भेद-भावों की वजह से इतना एकाकी और नीरस होगया है कि मानव को अपना जीवन एक भार महसूस होने लगा है, जबकि प्राचीन मानव का जीवन बहुत मधुरता, प्यार और अपनेपन से भरा हुआ था, क्योंकि उस समय किसी भी भेदभाव की बीमारी नहीं फैली थी। मानव प्रत्येक मानव को चाहता था, देखकर खुश होता था, और उसका शुभचिन्तक एवं सहायक बनता था।

आधुनिक मानव ने, मानव की विशेषताओं—कर्तव्य, परिश्रम और जिम्मेदारी आदि गुणों से पूर्णतया मुँह मोड़ लिया है। जिन विशेषताओं पर मानव-जीवन निर्भर था, उनका परित्याग करके आज का मानव प्राचीन जीवन से अधिक सुख व शान्तिमय जीवन की कल्पना कर रहा है। यह तो मानव के पागलपन के लक्षण हैं, इस प्रकार कर्तव्यों से मुख मोड़कर, विलासिता-पूर्ण जीवन की उसकी आकांक्षा सर्वथा अनुचित है। कर्तव्य-विमुख होना ही मानव की सबसे बड़ी भूल है। आज के मानव के रहन-सहन, खानपान, पहनावा, आचरण आदि की ओर जब हम ध्यान देते हैं, तब हमें हर बात में विलासिता और धन के अपव्यय ही दृष्टिगोचर होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन प्राचीन मानव भी व्यतीत करता था, जीवन की सभी आवश्यकताएँ भी प्राचीन मानव पूरी करता था, परन्तु इस आवश्यकता की पूर्ति में अन्तर कितना आगया है ! प्राचीन मानव अपने परिश्रम, कार्यक्षमता और अपने स्वास्थ्य पर निर्भर रहता था, उसे किसी आडम्बर या धन-दौलत या विलासिता की आवश्यकता ही नहीं प्रतीत होती थी। आज का मानव बेईमानी, कपट, झूठ, अन्याय से धन-दौलत का भण्डार चाहता है और धन-दौलत से ऐश्वर्यपूर्ण जीवन बिताना चाहता है। प्राचीन मानव सिर्फ अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति भर चाहता था ; पर आज का मानव आकर्षण, स्वाद, प्रदर्शन और अहंकार की भावना की पूर्ति भी आवश्यकता की पूर्ति के साथ साथ चाहता है। खानपान, रहन सहन, पहनावा व्यवसाय आदि सभी बातों में आज के मानव की ये भावनाएँ देखी जा सकती हैं।

भारत एक अभावग्रस्त एवं गरीब देश है और भारत में जीवनोपयोगी, उन वस्तुओं की अत्यधिक कमी है, जिनके बगैर मानव जीवन-रूपी गाड़ी का आगे चलना सम्भव नहीं है, पीने के लिए पानी, खाने के लिए अनाज, निवास के लिए मकान, और भी कई छोटी बड़ी आवश्यक वस्तुओं की भारत में पूरी कठिनाई रहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। इस प्रकार की मानव-जीवन-सम्बन्धी अत्यावश्यक वस्तुओं की कमी धनाभाव के कारण नहीं है, बल्कि धन के सदुपयोग न होने के कारण है। भारत का मानव और किसी मद में भले ही पैसे का मोह देखता हो, परन्तु देवी-देवताओं के चढ़ावे के रूप में भारतीय मानव खुले हाथों से पैसे खर्च करता है। इस प्रकार भारत में करोड़ों रुपये रोजाना देवी-देवता, भगवान अथवा धर्म के नाम पर खर्च होजाते हैं। इन पैसों से मन्दिरों से सम्बन्धित चन्द पण्डा-पुजारी ही अपनी विलासिता की पूर्ति करते हैं। अगर यही धन चिकित्सालय, कुएँ बनाने व पम्प, विश्रामालय, खेती-बाड़ी का सुधार आदि शुभ कार्यों में लगा दिया जाए तो मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति भी होजाती है व धन का सदुपयोग भी होजाता है। देवी-देवता भी ऐसे जनोपयोगी धमार्थ कार्य से ही प्रसन्न होते हैं। लेकिन यहाँ तो स्वार्थ ही स्वार्थ भरा हुआ है। अरबों खरबों रुपए के धन पर थोड़े से मानव सर्प की तरह कुण्डली मारे बैठे हैं। जिनकी ऐय्याशी की पूर्ति इस धन से होती हो, उन्हें दूसरे मानव की आवश्यकताओं एवं अभावों की पूर्ति से क्या प्रयोजन ? मानव देवताओं और धर्म के नाम पर भी सृष्टि के प्राणियों के प्रति किस प्रकार विश्वासघात करता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेदभावना रखता है—यह आज के समाज को देखने से अपने आप स्पष्ट होजाता है।

प्रजा बिलख रही है

हमारे शासक-वर्ग की शासकीय नीति भी उचित नहीं कही जासकती। प्रजातन्त्र और गणतन्त्र कहलाने वाले देश की प्रजा आवश्यक वस्तुओं के अभाव में बिलखती रहे और शासक वर्ग प्रजा के धन पर स्वर्गोपम विलासिता के आनन्द में डूबा रहे—यह जनतन्त्रात्मक शासन का ही उल्लंघन है। भारतीय गणतन्त्र का अरबों खरबों का धन देवालयों, मठों, मन्दिरों में निष्प्रयोजन पड़ा सड़ रहा है; उसके सदुपयोग के लिए शासन के पास कोई व्यवस्था नहीं। भारतीय विधान के अधिकांश कानून बहुत प्राचीन होने के कारण आज के समय और आज के मानव के लिए कल्याणकारी नहीं हैं। अगर जनता के हित के लिए कोई कानून बनता भी है, तो उसका फायदा, अधिकारियों की तानाशाही की वजह से जनता तक नहीं पहुँच पाता। शासकीय कमजोरी की वजह से आज का मानव हर समय भयभीत और असुरक्षित महसूस करता है। शासक वर्ग के अधिकार का उन्माद और बहुत से अनुचित कानूनों का बन्धन, मानव व देश की प्रगति में रुकावट बने हुए हैं। इससे मानव सदैव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आतंकित रहता है। शासन का कर्तव्य अपनी प्रजा को सुखी, सुरक्षित तथा व्यवस्थित रखना है। पर इसीका देश में आज बिलकुल तिरोभाव होगया है।

फैशन का बहम

आज का मानव फैशनपरस्ती के पीछे दीवाना होगया है और फैशन के नाम पर इतने अधिक धन का अपव्यय कर रहा है कि अगर मानव एक साल में खर्च होने वाला फैशन के नाम का धन एकत्रित करके, अपनी जीवन-सम्बन्धी आवश्यकताओं में लगाए, तो उसकी अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव है। फैशन एक निष्प्रयोजन मन का बहम होता है, जो मानव चरित्र की गिरावट में सहायक होता है। परन्तु आज के मानव में आकर्षण और प्रदर्शन की भावना इस कदर बढ़ गई है कि मानव अन्धा होकर इसके लिए धन बर्बाद कर रहा है और धन प्राप्त करने के लिए झूठ, कपट, बेईमानी व अन्याय का सहारा लेता है। इस प्रकार मानव दोहरी कुरीति का एक साथ शिकार होगया है।

आज का मानव अनुचित खानपान, चरित्र की निर्बलता, आडम्बरों की पूर्ति के लिए अधिक धन प्राप्त करने की परेशानी के कारण सर्वथा शक्ति-हीन होचुका है। इस शक्ति की पूर्ति के लिए वह तरह तरह के मादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्रव्यों के नशे की लत में फँस जाता है। इस प्रकार वह शक्ति को पूर्णतया नष्ट करने वाले मार्ग पर चल रहा है। भले ही मानव नशे की क्षणिक आविष्ट अवस्था में अपनी परिस्थितियों को भूल जाता हो, परन्तु नशा उतर जाने के बाद तो उसे पता चल ही जाता है कि उसने मादक द्रव्य का सेवन कर कुछ धन और कुछ शारीरिक शक्ति ही नष्ट की है। परन्तु फिर भी उसकी लत और शारीरिक कमजोरी उसे दुबारा वही क्रिया करने को प्रेरित करती हैं, और इस तरह वह स्वयं अपने पैरों पर कुल्हाड़ी चलाता रहता है।

जैसे जैसे मानव शारीरिक रूप से शक्तिहीन होता जाता है, वैसे वैसे वह क्रोधी, असन्तोषी, व्यभिचारी और निर्दयी भी होता जाता है। आज का मानव अपने निजी रिश्तेदार, दोस्त व किसी भी परिचित या अपरिचित मानव को काट डालना—एक मामूली तुच्छ बात समझता है। क्रोध तो आज के मानव के नाक पर ही रखा रहता है; किसीसे कुछ नम्रता से पूछने पर भी वह काटने को दौड़ता है। मानव का सन्तोष किसी भी बात में नहीं रह गया। खानपान, पहनावा, रहन-सहन आदि सभीमें वह आडम्बरों की बढ़ोतरी ही करता जा रहा है। व्यभिचार में तो मानव सबसे अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगे बढ़ गया है। कामुकता के इस वातावरण में आज पांच छह साल की लड़की भी सुरक्षित नहीं है। समाचार पत्रों में नित्य बलात्कार की कई खबरें पढ़ने को मिलती हैं। इस प्रकार मानवीय विशेषताएँ लुप्त होती जारही हैं और मानव दिनोंदिन, स्वयं अपने पतन के मार्ग की ओर अग्रसर होता जारहा है।

निष्प्रयोजन रीति-रिवाज

भारतीय रीति-रिवाजों के अनुसार एक बच्चे के पैदा होने से लेकर, पूरी उमर बिताकर वृद्ध होने तक, उसे अनेक कुरीतियों का सामना करना पड़ता है। बच्चे का जन्म-संस्कार, नामकरण-संस्कार, मुण्डन-संस्कार, उपनयन-संस्कार आदि बहुत से संस्कार किए जाते हैं, जिनका वास्तविक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं होता। बच्चों के जन्म-दिवस मनाने की परिपाटी भी आजकल तीव्रता से फैलती जा रही है, जो एक निष्प्रयोजन प्रदर्शन की भावना मात्र है। इन सभी संस्कारों व परिपाटियों में धन की बर्बादी और पाखंड का ही महत्व दिखाई देता है, कोई तथ्य नजर नहीं आता। मानव की मृत्यु पर भी बहुत आडम्बर रचे जाते हैं। शव-यात्रा को आकर्षक बनाना, दाह संस्कार में अधिक मात्रा में कीमती द्रव्यों को जलाने का प्रदर्शन करना, मृत्यु भोज का प्रदर्शन आदि सब बातें कुरीति और ढोंग मात्र हैं। चाहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवित मानव से कभी किसीने मानवीय व्यवहार भी न किया हो, परन्तु मृत्यु-उपरान्त इस प्रकार के प्रदर्शन परिवार अपने बड़प्पन को बनाए रखने के लिए करता है, जिससे मृत प्राणी के अच्छे बुरे अथवा सुख-सन्तोष से कोई सम्बन्ध नहीं होता ।

पाप-धर्म का जाल

कुछ स्वार्थी मानवों ने पाप-धर्म का जाल बिछा कर मानव के जीवन-मार्ग को बहुत उलझा दिया है । इन चतुर लोगों ने पाप-धर्म का रूप कुछ ऐसे तरीके से फैलाया है कि मानव उसमें पूर्णतया जकड़ गया है । पाखंडी धर्माचार्यों द्वारा जितने भी प्राचीन ग्रन्थ लिखे गये हैं, उन सबमें उन्होंने अपना ही महत्व प्रतिपादित किया है । उन्होंने पाप का डरावना रूप और धर्म का मधुर स्वरूप दिखाकर भोले-भाले मानव को भरमा दिया है । इस प्रकार इस वर्ग ने अपने हितों को अवश्य सुरक्षित बना लिया है । वास्तव में धर्म-ग्रन्थों में लिखे गये धर्म व पाप के नुस्खे और उसी अनुपात से किया गया मौखिक प्रचार, सब मनगढ़न्त बातें हैं ; उनमें तथ्य अथवा वास्तविकता कुछ नहीं है । इस धर्म-पाप के जाल से मानव-मन विचलित होगया है और मानव की आत्मा परतन्त्र होगई है, जिससे मानव के जीवन की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगति और स्वतंत्रता को भारी ठेस पहुँची है।

इस प्रकार मानव-समाज सभ्य अथवा उन्नतिशील होने के साथ-साथ परतन्त्रता और कुरीतियों से भी आक्रान्त होगया है। मानव की स्वतंत्रता हरण करने वाले और मानव को कुरीतियों में फंसाने वाले बहुत थोड़े से स्वार्थी किस्म के लोग ही थे, जिन्होंने सब कुछ स्वार्थ-पूर्ति के लिए ही किया था, परन्तु उसका कुफल आज सम्पूर्ण मानव जाति को भोगना पड़ रहा है। मानव उस समय भोलाभाला था, इसलिए स्वार्थी लोगों की चालाकी व कपट वह नहीं समझ पाया, और आज का मानव उन रूढ़ियों में इतनी दृढ़ता से बंध गया है कि वह उनके उचित अनुचित होने के बारे में सोचने की हिम्मत ही नहीं जुटा पाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपसंहार

पिछले पृष्ठों में मानव जीवन-सम्बन्धी नौ लेख लिखे गए हैं। इन नौ लेखों द्वारा यह प्रमाणित करने की चेष्टा की गई है कि मानव ने अपनी बुद्धि के बल पर ऐसा कोई काम नहीं किया, जो स्वयं मानव-जीवन में कुछ विशेषता पैदा कर सके अथवा सृष्टि के अन्य प्राणियों को कुछ सुविधाएँ प्रदान कर सके। इसके प्रतिकूल मानव ने मानव जाति व अन्य प्राणियों का शोषण ही किया है। इस बात को तो मानना ही पड़ेगा कि मानव ने अपनी बुद्धि के बल से आडम्बर रचने में कोई कमी नही छोड़ी। पूरा संसार एक से एक आश्चर्य-जनक आडम्बरों से पटा हुआ हैं, परन्तु इन आडम्बरों से मानव-जीवन में कोई सुख-शान्ति व विशेषता पैदा नहीं हुई, बल्कि मानव-जीवन घुटन भरा और कष्टदायक होगया है। इसलिए इन आडम्बरों की रचना को मानव की बुद्धिमानी नहीं कहा जा सकता। इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आडम्बरों की रचना को भले ही मानव अपनी श्रेष्ठता और बुद्धिमानी का प्रमाण समझ ले पर वास्तविक बात यह है कि इनके अलावा मानव ने कोई ऐसा कार्य, आचरण व व्यवहार नहीं किया, जिससे कि वह बुद्धिमान और श्रेष्ठ समझा जा सके।

आदि काल से ही धर्म-धुरीणों तथा धर्माचार्यों के विशिष्ट वर्ग के कुछ स्वार्थी लोगों ने, मानव को एक ऐसी भूल-भुलैया में भटका दिया है कि उससे बाहर निकलना मानव के वश की बात नहीं रह गई। उसके अन्दर फँसा हुआ मानव घुटन और परतंत्रता का भाव महसूस करता है। मानव को पाप-धर्म, स्वर्ग-नरक, जीवन-मरण, देवी-देवता, पूजा-पाठ आदि बातों के जाल में इस प्रकार जकड़ा गया है कि मानव चुपचाप बिना चूं-चपड़ किए, पालतू जानवर की तरह, धर्माचार्य, पंडित अथवा पुरोहितों के कथनानुसार, चलता आ रहा है। सृष्टि का हर प्राणी स्वतंत्र रहना चाहता है, अतः मानव भी स्वतंत्रता चाहता है, परन्तु मानव धर्म-कर्म के बन्धनों की वजह से आत्मा की स्वतंत्रता प्राप्त करने में सफल नहीं होरहा।

संसार का कोई भी मानव, किसी भी तरह की मानवीय आवश्यकता की पूर्ति, यदि मानव समाज से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिप कर करने को मजबूर है, तो इससे यह प्रमाणित होजाता है कि मानव परतन्त्र है और इसीलिए उसे अपनी आवश्यकताएँ छिपा कर पूरी करनी पड़ती हैं। इस तरह जब स्वयं मानव परतन्त्र है, और इतना उन्नतिशील होकर भी अपनी आवश्यकता-पूर्ति के लिए परेशान भी है, तो उसे बुद्धिमान अथवा श्रेष्ठ कहना गलत ही होगा। मानव को छिप कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली इच्छाओं का त्याग कर देना चाहिए। अगर यह त्याग सम्भव नहीं है तो उसे इसके लिए स्वतंत्रता प्राप्त करनी चाहिए।

मानव अपने मुँह मियाँ-मिट्ठू बनकर, भले ही स्वयं अपना गुणगान कर ले और अपने आपको श्रेष्ठ व बुद्धिमान बता दे, परन्तु वास्तव में मानव जैसा असन्तोषी, कपटी, बेईमान, धोखेबाज, अन्यायी जीव श्रेष्ठता व बुद्धिमानी की उपाधि पाने लायक नहीं है। मानव और प्राणियों के साथ तो रियायत करेगा ही क्या, उसने स्वयं अपनी जाति मानव और अपनी सहयोगिनी स्त्री के साथ भी अन्याय व अत्याचार करने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं छोड़ी। मानव ने जितनी प्रथाएँ व परम्पराएँ बनाई हैं, उनमें उसने सिर्फ स्वार्थ-पूर्ति को ही प्राथमिकता दी है। धार्मिक परिपाटी व धार्मिक ग्रन्थों में भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वार्थ, मिथ्या आडम्बर, अन्धविश्वासों, बहिर्मुखी पूजा-पाठ आदि की ही व्याख्या की गई है। चारों ओर स्वार्थ-साधन तथा दूसरों के शोषण की ही अधिकता दृष्टिगोचर होती है, अतः मानव को किस आधार पर श्रेष्ठ और बुद्धिमान कहा जाए, यह समझ में नहीं आता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

04754

पुस्तकालय
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव

इस पुस्तक के लेखक श्री हरि अग्रवाल ने अपने विवेक और कर्म के द्वारा जीवन में असाधारण सफलता प्राप्त की है। उन्होंने मानव-स्वभाव के विभिन्न पक्षों पर गंभीरता से विचार किया है और मानव-जीवन को और अधिक उदात्त, सहज तथा बोधगम्य बनाने की दिशा में पहल की है। जीवन की आपाधापी के क्षणों में यह पुस्तक निस्संदेह आपको सुकून देगी।

हिमालय पॉकेट बुक्स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar